मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत)

Master of Arts (Sanskrit)

तृतीय सेमेस्टर - एम0ए0एस0एल - 604

नाटक एवं नाटिका

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी-263139

Toll Free : 1800 180 4025
Operator : 05946-286000
Admissions : 05946-286002
Book Distribution Unit : 05946-286001
Exam Section : 05946-286022
Fax : 05946-264232
Website : http://uou.ac.in

पाठ्यक्रम समिति

कुलपति (अध्यक्ष)
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
प्रोफे0 ब्रजेश कुमार पाण्डेय,
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या अध्ययन संस्थान,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
प्रोफे0 रमाकान्त पाण्डेय,
राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान जयपुर परिसर, राजस्थान
प्रोफे0 कौस्तुभानन्द पाण्डेय,
संस्कृत विभाग, अल्मोड़ा परिसर,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

प्रो0 एच0 पी0 शुक्ल-(संयोजक)
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 देवेश कुमार मिश्र,
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
डॉ0 नीरज कुमार जोशी,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर-ए.सी.,संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

मुख्य सम्पादक	**पाठ्यक्रम संयोजन एवं सह सम्पादन**
डॉ0 देवेश कुमार मिश्र	**डॉ0 नीरज कुमार जोशी**
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन	**खण्ड एवं इकाई संख्या**
डॉ0 संगीता बाजपेयी,	**खण्ड 1 (इकाई सं0 1 से 4)**
अका0 एसोसिएट संस्कृत विभाग	**खण्ड 2 (इकाई सं0** 1 **से** 4)
उ0मु 0वि 0वि 0, हल्द्वानी	**खण्ड** 3 **(इकाई स0** 1)
प्रो० रविनाथ मिश्र,	**खण्ड** 3 **(इकाई स0** 2 **से** 4)
पूर्व आचार्य एवम् अध्यक्ष संस्कृत विभाग	
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर	

कापीराइट @ उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

प्रकाशन वर्ष :

पुस्तक का शीर्षक - नाटक एवं नाटिका
MASL-604

प्रकाशक: (उ 0 मु 0 वि 0 वि 0) -263139
ISBN NO: 978-93-84632-28-1

मुद्रक:

नोट:- इस अध्ययन सामग्री का प्रकाशन छात्र हित में शीघ्रता के कारण किया गया है सम्पादित संस्करण का प्रकाशन अगले वर्ष सम्भव है। इस सामग्री का उपयोग अन्यत्र कहीं भी उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित या प्रशासनिक अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता है।

तृतीय सेमेस्टर / SEMESTER- III

खण्ड -प्रथम

मृच्छकटिकम् प्रकरण

अनुक्रम पृष्ठ संख्या

खण्ड -1 मृच्छकटिकम् प्रकरण 01-04

इकाई : 1 नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास **05-14**
इकाई : 2 महाकवि शूद्रक का परिचय **15-24**
इकाई : 3 मृच्छकटिकम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण **25-36**
इकाई : 4 मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण **37-42**

खण्ड -2 मृच्छकटिकम् व्याख्या 43

इकाई : 1 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक **44-55**
इकाई : 2 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 40 तक **56-69**
इकाई : 3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 4 1 से 58 तक **70-83**
इकाई : 4 मृच्छकटिकम् द्वितीय अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक **84-96**

खण्ड -3 मृच्छकटिकम् व्याख्या 97

इकाई :1 मृच्छकटिकम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 15 तक **98-110**
इकाई : 2 मृच्छकटिकम् तृतीय अंक श्लोक 16 से 30 मूल पाठ व्याख्या **111-127**
इकाई : 3 मृच्छकटिकम् चतुर्थ अंक श्लोक 1 से 17 मूल पाठ व्याख्या **128-141**
इकाई : 4 मृच्छकटिकम् चतुर्थ अंक श्लोक 18 से 32 मूल पाठ व्याख्या **142-161**

इकाई 1 . नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
13 नाट्य शब्द का अर्थ
1.4 नाट्य साहित्य का उद्भव
    1.4.1 उद्भव सम्बन्धी भारतीय मत
    1.4.2 उद्भव सम्बन्धी पाश्चात्य मत
1.5 नाट्य साहित्य का विकास
    1.5.1 भास
    1.5.2 कालिदास
    1.5.3 अश्वघोष
    1.5.4 श्रीहर्ष
    1.5.5 भवभूति
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.10 उपयोगी पुस्तकें
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

संस्कृत नाटक से सम्बन्धित यह प्रथम इकाई है। जैसा कि आपने पूर्व में अध्ययन किया है की साहित्यशास्त्र में काव्य के दो भेद हैं दृश्य काव्य, श्रव्य काव्य। श्रव्य काव्य में आनन्दानुभूति कल्पना मार्ग से प्राप्त होती है जबकि दृश्य काव्य के द्वारा आनन्द की प्राप्ति रंगमंच पर साकार होती है। इसी दृश्य काव्य को रूप या रूपक के नाम से जाना जाता है। प्रस्तुत इकाई में आप यह जानेगें कि नाटक किसे कहते हैं। इसकी उत्पत्ति तथा विकास किस प्रकार हुआ। संस्कृत नाटकों के विकास में किसका योगदान है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि नाटक किसे कहते हैं। संस्कृत नाटकों का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ। महाकवि भास, ,शूद्रक, कालिदास अश्वघोष,हर्ष, भवभूति आदि महाकवियों का संस्कृत नाटकों में क्या योगदान है। नाटकों के द्वारा सहृदय सामाजिक को आनन्द की प्राप्ति होती जो मानव के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है इसकी उपयोगिता से परिचित करा सकेगें।

1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि —

- नाटक किसे कहते हैं तथा इनका उद्भव किस प्रकार हुआ।
- उद्भव से सम्बन्धित भारतीय एवं पाश्चात्य मतों को समझा पायेगें।
- यह बता सकेगें कि कालिदास का जन्म कब और कहां हुआ था।
- कालिदास की रचनाओं के बारे में बता सकेगें।
- भास, शूद्रक, अश्वघोष, हर्ष, भवभूति आदि के नाटकों के नाम बता सकेगे।

1.3 नाट्य शब्द का अर्थ:-

साहित्यशास्त्र में काव्य के दो भेद हैं 1 दृश्य काव्य ,श्रव्य काव्य। दृश्य काव्य के द्वारा भावक किसी भी घटना या वस्तु का चाक्षुष ज्ञान ग्रहण करता है, किन्तु श्रव्य काव्य के द्वारा केवल श्रवण ही प्राप्त होता है। श्रव्य काव्य में आनन्दानुभूति कल्पना मार्ग से प्राप्त होती है जबकि दृश्य काव्य के द्वारा इसी आनन्द की प्राप्ति रंगमंच पर साकार रूप से होती है। जिसका अभिनय किया जा सके उसे दृश्य काव्य कहते हैं 'दृश्यं तत्राभिनेयं'। इसी दृश्य काव्य को रूप या रूपक संज्ञा से भी जाना जाता है। रूपक शब्द की निष्पत्ति रूप धातु में ण्वुल प्रत्यय के योग से होती है। ये दोनों ही शब्द साहित्य में 'नाट्य' के द्योतक है। नाट्यशास्त्र में 'दशरूप' शब्द का प्रयोग नाट्य की विधाओं के अर्थ में हुआ है। अब प्रश्न यह उठता है कि नाट्य क्या है ? दशरूपककार आचार्य धनंजय नाट्य की

परिभाषा इस प्रकार देते हैं —**'अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्'** अर्थात् अवस्था के अनुकरण को नाट्य कहते हैं।

1.4 नाट्य साहित्य का उद्भव :-

संस्कृत रूपकों के उद्भव एवं विकास का प्रश्न भी नाम रूपात्मक जगत की सृष्टि के समान विवादास्पद है। अधिकांश विद्वानों का दृष्टिकोण है कि परमात्मा ने जिस प्रकार नामरूपात्मक जगत की सृष्टि की है उसी प्रकार नाट्य विद्या की भी नाट्य विद्या के सम्बन्ध में भारतीय तत्ववेत्ता मनीषी यह अवधारणा रखतें हैं कि इसकी उत्पत्ति के मूल में परमात्मा ही है। यहां हम भारतीय एवं पाश्चात्य मतों को संक्षेप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

1.4.1 उद्भव सम्बन्धी भारतीय मत

दैवीय उत्पत्ति सिद्धान्त — नाट्य विद्या की उत्पत्ति के सम्बन्ध में शुभंकर ने अपने संगीत दामोदर में लिखा है कि एक समय देवराज इन्द्र ने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे एक ऐसे वेद की रचना करें जिसके द्वारा सामान्य लोगों का भी मनोरंजन हो सके। इन्द्र की प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा ने समाकर्षण कर नाट्य वेद की सृष्टि की। सर्वप्रथम देवाधिदेव शिव ने ब्रह्मा को इस नाट्य वेद की शिक्षा दी थी और ब्रह्मा ने भरतमुनि को और भरत मुनि ने मनुष्य लोक में इसका इसका प्रचार प्रसार किया। इस प्रकार शिव ,ब्रह्मा भरत मुनि नाट्य विद्या के प्रायोजक सिद्ध होते हैं।

भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में नाट्यविद्या के उद्भव के सम्बन्ध में कहा है कि सभी देवताओं ने ब्रह्मा से प्रार्थना की कि वे जनसामान्य के मनोरंजन के लिए किसी ऐसी विधा की रचना करें। उनके इस कथन से ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य सामवेद से गायन यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस ग्रहण करके इस नाट्य वेद नामक पंचम वेद की रचना की। दशरूपककार आचार्य धनंजय ने भी इसी मत को स्वीकार किया है। भारतीय विद्वानों की यह मान्यता है कि पृथ्वी पर सर्वप्रथम इन्द्रध्वज महोत्सव के समय पर नाट्य का अभिनय हुआ था।

संवादसूक्त सिद्धान्त — इस सिद्धान्त के प्रतिपादकों का विचार है कि ऋग्वेद के अनेक सूक्तों में संवाद प्राप्त होते हैं। यथा — 'यम यमी संवाद', पुरूरवा उर्वशी,शर्मा पाणि संवाद,इन्द्रमरूत, इन्द्र इन्द्राणी ,विश्वामित्र नदी आदि प्रमुख संवाद है। यजुर्वेद में अभिनय सामवेद में संगीत और अथर्ववेद में रसों की संस्थिति है। इन्हीं तत्वों से धीरे धीरे रूपको का विकास हुआ।

1.4.2 उद्भव सम्बन्धी पाश्चात्य मत:-

संस्कृत नाटकों के उद्भव के सम्बन्ध में पाश्चात्य विचारकों के मत इस प्रकार है।

वीरपूजा सिद्धान्त — पाश्चात्य विद्वान डा0 रिजवे का मत है कि रूपकों के उद्भव में वीर पूजा का भाव मूल कारण है। दिवंगत वीर पुरूषों के प्रति समादर का भाव प्रकट करने की रीति ग्रीस, भारत

आदि देशों में अत्यधिक प्राचीन काल से है। दिवंगत आत्माओं की प्रसन्नता के लिए उस समय रूपकों का अभिनय हुआ करता था। परन्तु डा0 रिजवे के इस सिद्धान्त से विद्वान सहमत नहीं हैं।

प्रकृति परिवर्तन सिद्धान्त — डा0 कीथ के मतानुसार प्राकृतिक परिवर्तन को मूर्त रूप में देखने की स्पृहा ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया। इसके प्रबल समर्थक डा0 कीथ प्रकृति परिवर्तन से नाटक की उत्पत्ति को स्वीकार करते हैं। 'कंसवध' नामक नाटक में हम इसके मूर्त रूप का दर्शन कर सकते हैं। परन्तु डा0 कीथ के इस मत को भी विद्वानों का समर्थन प्राप्त न हो सका।

पुत्तलिका नृत्य सिद्धान्त —जर्मन के प्रसिद्ध विद्वान डा0 पिशेल संस्कृत नाटक का उद्भव पुत्तलिकाओं के नृत्य तथा अभिनय से मानते हैं। 'सूत्रधार' एवं स्थापक शब्दों का नाटक में प्रयोग हुआ है। इन शब्दों का सम्बन्ध पुत्तलिका नृत्य से है महाभारत, बाल रामायण ,कथासरित्सागर इत्यादि में दारूमयी , पुत्तलिका आदि शब्दों का प्रयोग इस मत को पुष्टता प्रदान करते हैं। परन्तु विद्वानों के मध्य यह मत भी सर्वमान्य न हो सका।

छाया नाटक सिद्धान्त — छाया नाटकों से रूपक की उत्पत्ति एवं विकास का समर्थन करने वाले प्रसिद्ध विद्वान डा0 लूथर्स एवं क्रोनो है। अपने मत के समर्थन में वे महाभाष्य को प्रगाढ रूप में प्रस्तुत करते हैं। महाभाष्य में शौभिक छाया नाटकों की छाया मूर्तियों के व्याख्याकार थे पर दूतांगद नामक छाया नाटक अधिक प्राचीन नही है। अत: इसे नाटकों की उत्पत्ति का मूलकारण मानना न्यायोचित नहीं। अत: विद्वानों का यह मत भी अधिक मान्य नहीं हुआ।

मेपोलनृत्य सिद्धान्त — इस सिद्धान्त के समर्थक इन्द्रध्वज नामक महोत्सव को नाटक की उत्पत्ति का मूल कारण स्वीकार करते हैं। पाश्चात्य देशों में मई के महीने में लोग वसन्त की शोभा को देखकर एक लम्बा बाँस गाडकर उसके चारों तरफ उछलते कूदते एवं नाचते गाते हैं। यह इन्द्रध्वज जैसा ही महोत्सव है ऐसे ही उत्सवों से शनै: शनै: नाटक की उत्पत्ति हुई। परन्तु दोनो महोत्सवों के समय में पर्याप्त अन्तर है तथा इनके स्वरूप में भी परस्पर भिन्नता है अत: यह सिद्धान्त भी सर्वमान्य नहीं है। उपर्युक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ विद्वान लोकप्रिय स्वांग सिद्धान्त तथा वैदिक अनुष्ठान सिद्धान्त को भी रूपकों की उत्पत्ति का कारण मानते हैं। किन्तु विद्वान इस मत से भी सहमत नहीं हैं। विद्वानों के उपर्युक्त मतों के अनुशीलन से हम इस निष्कर्ष पर पहुचंते हैं कि रूपकों के उद्भव का विषय अत्यन्त विवादास्पद है। प्राचीन भारतीय परम्परा नाट्यवेद का रचयिता ब्रह्मा को इंगित करती है और लोक प्रचारक के रूप में भरतमुनि को निर्दिष्ट करती है। आधुनिक विद्वान इससे भिन्न मत रखते हैं य़द्यपि यह माना जा सकता है कि इन मतों में से कोई मत नाटक की उत्पत्ति का कारण हो सकता है परन्तु यह कहना अत्यन्त कठिन है कि अमुक मत ही नाटक की उत्पत्ति का मूल कारण है।

1.5 नाटक का विकास:-

ऋग्वेद से ही हमें नाट्य के अस्तित्व का पता चलने लगता है। सोम के विक्रय के समय यज्ञ में उपस्थित दर्शकों के मनोरजंन के लिए एक प्रकार का अभिनय होता था। ऋग्वेद के संवाद सूक्त भी नाटकीयता का द्योतन करते हैं। यजुर्वेद में 'शैलूष' शब्द का प्रयोग किया गया है जो नट(अभिनेता)

वाची शब्द है । सामवेद में तो संगीत है ही । इस प्रकार नाटक के लिए आवश्यक तत्व गीत, नृत्य,वाद्य सभी का प्रचार वैदिक युग में था। यह निश्चित है कि भारतीय नाट्य परम्परा के मूल उदगम ग्रंथ वेद ही है । आदिकाव्य रामायण में नाट्य तत्त्वों का उल्लेख हुआ है । महर्षि वेदव्यास प्रणीत महाभारत में भी नट, नर्तक, गायक, सूत्रधार आदि का स्पष्ट उल्लेख है । हरिवंशपुराण में उल्लेख हुआ है कि कोबेररम्भाभिसार नामक नाटक का अभिनय हुआ था जिसमें शूर रावण के रूप में और मनोवती ने रम्भा का रूप धारण कर रक्खा था। मार्कण्डेय पुराण में भी काव्य संलाप और गीत शब्द के साथ नाटक का भी प्रयोग हुआ है । संस्कृत भाषा के महान वैयाकरण महर्षि पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में नट सूत्रों का स्पष्ट उल्लेख किया है। महर्षि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में 'कंसवध' और 'बलिबन्ध' नामक नाटकों का उल्लेख करते हुए 'शोभनिक' शब्द का प्रयोग किया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नट,नर्तक, गायक एवं कुशीलव शब्दों का प्रयोग हुआ है ।भरतमुनि नाट्यशास्त्र के प्रमुख आचार्य माने गये हैं । भरतमुनि ने सुप्रसिद्ध 'नाट्यशास्त्र' की रचना की है । इसमें नाट्य से सम्बन्धित विषयों का विधिवत् विवेचन हुआ है । इन्होनें कोटल शाण्डिल्य, वात्सम, धूर्तिल आदि आचार्यों के नामों का उल्लेख किया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इनके समय तक अनेक नाटकों की रचना हो चुकी थी और नाट्यकला का विधिवत् विकास हो चुका था। वेदों से लेकर भरतमुनि प्रणीत नाट्यशास्त्र के अनुशीलन से हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत नाटकों की रचना पुरातन काल से होती चली आ रही है परन्तु परिष्कृत नाटकों की रचना ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के पूर्वाद्ध में मानी जाती है। संस्कृत नाटकों में महाकवि भास के नाटक अत्यधिक प्रतिष्ठा को प्राप्त हुए हैं। परिष्कृत रूपक रचनाओं में भास के रूपकों को प्राचीन माना जाता है । भास के पश्चात् शूद्रक, कालिदास,अश्वघोष, हर्ष, भवभूति, विशाखादत्त, मुरारि,शक्तिभद्र, दामोदर मिश्र, राजशेखर, दिंगनाग, कृष्ण मिश्र, जयदेव, वत्सराज आदि आते हैं । इनके उच्चकोटि के नाटकों ने संस्कृत साहित्य की सम्यक् श्री वृद्धि की है। यहाँ पर हम कतिपय कवियों के नाटकों पर प्रकाश डाल रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. नाट्यशास्त्र के रचयिता का नाम लिखिए।
2. महाभारत के रचयिता का नाम लिखिए।
3. पुत्तलिका नृत्य सिद्धान्त किस विद्वान का मत है।
4. नाटक के उद्भव से सम्बन्धित कौन से दो मुख्य मत है।

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर हाँ या नहीं में दीजिये।

(क) नाट्य शास्त्र के रचयिता पिगंल ऋषि है।

(ख) कालिदास का जन्म ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में हुआ था।

(ग) अष्टाध्यायी महर्षि पाणिनी की रचना है।

(घ) रघुवंश खण्डकाव्य है।

(ङ) अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक है।

1.5.1 भास

भास के नाटक विषयानुसार ५ श्रेणी में आते हैं –

(क) रामकथाश्रित –
  १. प्रतिमा तथा
  २. अभिषेक।
(ख) महाभारताश्रित-
  ३. पन्चरात्र,
  ४. मध्यम व्यायोग,
  ५. दूत घटोत्कच,
  ६. कर्णाभार,
  ७. दूतवाक्य,
  ८. उरूभंग।
(ग) भागवताश्रित –
  ९. बालचरित।
(घ) लोककथात्मक –
  १०. दरिद्रचारूदत्त
  ११. अविमारक।
(ङ) उदयन कथाश्रित –
  १२. प्रतिज्ञायौगन्धरायण,
  १३. स्वप्नवासवदत्त।

इनमें कतिपय नाटक – महाभारताश्रित रूपक – एक ही अंक में समाप्त हैं। अत: उन्हें 'एकांकी रूपक' कहा जा सकता है। इन रूपकों का संक्षिप्त परिचय यहाँ इसी क्रम से प्रस्तुत किया जाता है।

1. **प्रतिमा नाटक** – राम का वनवास, सीताहरण आदि आयोध्या काणड से लेकर रावणवध तक की घटनाओं का वर्णन इस नाटक में किया गया है। इस नाटक से प्राचीन भारत में कला-विषयक नवीन वृत्तांत का पता लगता है। प्राचीनकाल में राजाओं के देवकुल होते थे जिनमें मृत्यु के अनंतर राजाओं की पत्थर की बड़ी मूर्तियाँ स्थापित की जाती थी। इक्ष्वाकुवंश का भी ऐसा ही देवकुल था जिसमें मृत नरेशों की मूर्तियाँ स्थापित की जाती थी। केकेयदेश से आते समय अयोध्या के समीप देवकुल में स्थापित दशरथ की प्रतिमा को

देखकर ही भरत ने उनकी मृत्यु का अनुमान आप ही आप कर लिया। इसी कारण इसका नाम 'प्रतिमा'-नाटक' है।

2. **अभिषेक नाटक** – इसमें राम के राज्याभिषेक का तथा किष्किधा, सुंदर और लंकाकांड के कथानक का वर्णन किया गया है। इन दोनों नाटकों में बालकांड को छोड़कर रामायण के शेष कांडों की कथाएँ आ गई है।
3. **पन्चरात्र**- महाभारत की एक घटना को लेकर यह नाटक रचित है। द्रोणा ने दुर्योधनसे पांडवों को आधा राज्य देने के लिये कहा। दुर्योधन ने प्रतिज्ञा की कि पाँच रातों में यदि पांडव मिल जायँगे तो मैं उन्हें राज्य दे दूँगा। द्रोणा के प्रयत्न रकने पर पांडव मिल गये और दुर्योधन ने उन्हें आधा राज्य दे दिया। यह घटना कल्पित है और महाभारत में नहीं मिलती ।
4. मध्यमव्यायोग
5. दूतघटोत्कच
6. कर्णाभार
7. दूतवाक्य
8. उरूभंग – ये नाटक महाभारत की विशिष्ट तत्तत् घटनाओं से सम्बद्ध है।
9. बालचरित – कृष्ण के बालचरित से सम्बद्ध है।
10. दरिद्रचारूदत्त – धनहीन परन्तु चरित्रसंपन्न ब्राह्मण चारूदत्त तथा गुणाग्राहिणी वारवनिता
11. वसंतसेना का आदर्श प्रेम वर्णित है।
12. अविमारक – प्राचीन आख्यायिका का नाटकीय रूप है जिसका संकेत कामसूत्र में मिलता
13. है । इस नाटक में अविमारक तथा राजा कुंतिभोज की पुत्री कुरंगी के प्रेम का वर्णन किया गया है । प्रणय का चित्रण बहुत ही सुंदर तथा सरस है।
14. प्रतिज्ञायौगन्धरायण – कौशाम्बी के आखेट के प्रेमी राजा उदयन को कृत्रिम हाथी के छल से उज्जयिनी-नरेश महासेन ने पकड़ लिया। इस रूपक में उदयन के मन्त्री यौगन्धरायण ने दृढ़ प्रतिज्ञा करके केवल राजा को ही बन्धन से नहीं छुड़या, बल्कि कुमारी वासवदत्त का भी कपट से हरण कराया। मन्त्री की दृढ़-प्रतिज्ञा तथा कुटिलनीति का यह सर्वश्रेष्ठ निदर्शन है।
15. स्वप्नवासवदत्तम् – भास के उपर्युक्त नाटको में स्वप्नवासवदत्तम् सर्वश्रेष्ठ नाट्यकृति है । इसमें उदयन तथा वासवदत्ता की प्रेमकथा का वर्णन है । विशुद्ध प्रेम के वर्णन के अतिरिक्त नाटकीय घटनाओं का अद्भुत संयोजन इस नाटक की अपनी विशेषता है ।

1.5.2 कालिदास-

विक्रमोर्वशीयम् , मालविकाग्निमित्रम् तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् कालिदास के प्रसिद्ध् नाटक हैं । कथावस्तु, चरित्र चित्रण , कथोपकथन , नाटकीय सन्धि तथा रसपरिपाक की दृष्टि से कालिदास के नाटक अद्वितीय हैं । मालविकाग्निमित्रम् कालिदास का प्रथम नाटक है इसमें अग्निमित्र तथा मालविका की प्रणय कथा का पाँच अंको में वर्णन है । विक्रमोर्वशीयम् पाँच अंको का नाटक है

। इसमें पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रणय कथा वर्णित है । अभिज्ञानशाकुन्तलम् कवि का सर्वश्रेष्ठ नाटक है । इसमें सात अंक है । इसके सात अंको में दुष्यन्त तथा शकुन्तला के मिलन , वियोग तथा पुनर्मिलन का सुन्दर वर्णन है । अभिज्ञानशाकुन्तलम् विश्व के सर्वोत्तम नाटकों में गिना जाता है ।

1.5.3 शूद्रक

शूद्रक की एकमात्र रचना मृच्छकटिकम् है । इसमें कुल दस अंक है जिसमें सामान्य जनजीवन को आधार बनाकर सामाजिक पृष्ठभूमि का यथार्थ चित्रण किया गया है। इस नाटक के दो प्रमुख विभाग हैं – एक चारूदत्त और वसन्तसेना का प्रेम तथा दूसरा आर्यक की राज्य-प्राप्ति । यह एक चरित्र प्रधान प्रकरण है । इसमें कुल सत्ताइस प्रकार के पात्र है इनमें राजकर्मचारी, चोर, सिपाही, सन्यासी, दासी, वैश्य, गणिका आदि विविध पात्र हैं । यह नाटक तत्कालीन जन-जीवन की सम्पूर्ण झाँकी प्रस्तुत करने में समर्थ है ।

1.5 .4 श्रीहर्ष

महाकवि श्रीहर्ष की तीन नाट्य कृतियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं –

(1) रत्नावली
(2) प्रियदर्शिका
(3) नागानन्द ।

इन तीन नाट्यकृतियों में रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिकाएँ है । इन दोनों में साहित्य में प्रसिद्ध वत्सराज उदयन और वासवदत्ता की प्रेमकथा वर्णित है । इनकी तीसरी नाटयकृति नागानन्द में प्रसिद्ध ब्राह्मणकुमार जीमूतवाहन की करूणापूर्ण दान वृत्ति का गुणगान है । जीमूतवाहन नागों की रक्षा के लिए गरूड़ को अपना शरीर तक समर्पित करते हैं ।

1.5.5 भवभूति

भवभूति की प्रसिद्धि उनकी तीन रचनाओं के कारण ही रही है । उनकी उपलब्ध तीन रचनाओं में "महावीर चरित" और उत्तररामचरित" सात-सात अंकों के नाटक हैं और "मालती माधव" दस अंकों का एक प्रकरण । उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

मालती माधव—

भवभूति की प्रथम नाट्यकृति मालती माधव है। यह 10 अंको का प्रकरण है। इसमें मालती और माधव के प्रेम की काल्पनिक कथा चित्रित की गई है।

महावीर चरित—

यह सात अंकों का नाटक है। इसमें श्री रामचन्द्रजी के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का वर्णन है। मालती माधव की अपेक्षा यह नाटक अधिक संगठित है।

उत्तररामचरित—

यह भवभूति का सर्वश्रेष्ठ नाटक है। इसमें कवि ने अपनी कल्पना का प्रयोग करके अद्भुत सृष्टि की है। सात अंकों में निबद्ध इस नाटक में रामचन्द्र जी के उत्तररामचरित का वर्णन है। इसे महावीर चरित का उत्तरभाग ही समझा जा सकता है।

इसके अतिरिक्त विशाखदत्त का मुद्राराक्षस, भट्टनारायण का वेणीसंहार, मुरारि का अनर्घराघव, जयदेव का प्रसन्नराघव आदि अन्य प्रसिद्ध नाटक है।

1.8 सारांश

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान चुके हैं कि नाटक किसे कहते हैं। किस प्रकार इसका उद्भव एवं विकास हुआ। इसके उद्भव के सम्बन्ध में भारतीय एवं पाश्चात्य विचारकों का क्या मत है। साथ ही आपने यह भी जाना कि वैदिक काल से से लेकर अब तक नाटकों का विकास हुआ। किन्तु परिष्कृत नाटकों की रचना ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के पूर्वाद्ध में मानी जाती है। संस्कृत नाटकों में महाकवि भास के नाटक अत्यधिक प्रतिष्ठा को प्राप्त हुए हैं। परिष्कृत रूपक रचनाओं में भास के रूपकों को प्राचीन माना जाता है। भास के पश्चात् शूद्रक, कालिदास,अश्वघोष, हर्ष, भवभूति, विशाखादत्त, मुरारि,शक्तिभद्र, दामोदर मिश्र, राजशेखर, दिंगनाग, कृष्ण मिश्र, जयदेव, वत्सराज आदि आते हैं। इनके उच्चकोटि के नाटकों ने संस्कृत साहित्य की सम्यक् श्री वृद्धि की है।

1.9 शब्दावली

शब्द	अर्थ
श्रवण	सुनना
उद्भव	उत्पत्ति
नाट्य	नाटक
दिवंगत	मृत (मरे हुए)
परिवर्तन	बदलाव
स्पृहा	इच्छा
विक्रय	बेचना
शैलूष	अभिनेता (नट)
प्रसादगुणोपेत	प्रसादगुण से युक्त
कतिपय	कुछ

1.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 — (1) आचार्य भरतमुनि (2) महर्षि वेदव्यास (3) डा0 पिशेल (4) भारतीय एवं पाश्चात्य मत

अभ्यास प्रश्न 2 — क (नहीं) ख (हाँ) ग (हाँ) घ (नहीं) ङ (हाँ)

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शुभंकर प्रणीत ' संगीत दामोदर'श्री शेषराज शर्मा रेग्मी द्वारा सम्पादित चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी
2. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि , चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।
4. दशरूपक, आचार्य धनंजय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

1.12 सहायक व उपयोगी पुस्तकें

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

2. नाट्यशास्त्र, आचार्य भरतमुनि , चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी।

1.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नाट्य साहित्य के उद्भव पर प्रकाश डालिये।

2. नाट्य साहित्य का विकास किस प्रकार हुआ लिखिए।

इकाई 2 – महाकवि शूद्रक का परिचय

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 शूद्रक का जीवन परिचय
2.4 जन्म समय
2.5 मृच्छकटिकम् का सारांश
2.6 शूद्रक की काव्यकला
2.7 शूद्रक की नाट्यकला
2.8 सारांश
2.9 शब्दावली
2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.12 उपयोगी पुस्तकें
2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

2. 1 प्रस्तावना:-

नाट्यशास्त्र से सम्बन्धित यह प्रथम खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पूर्व की इकाई में आपने जाना कि नाटक की उत्पत्ति किस प्रकार हुई तथा वैदिक काल से लेकर अब तक कैसे उसका विकास हुआ। उत्पत्ति से सम्बन्धित भारतीय एवं पाश्चात्य मतों का भी अध्ययन किया।

प्रस्तुत इकाई में आप शूद्रक के विषय में अध्ययन करेंगे कि शूद्रक कौन थे, उनका जन्म कहाँ हुआ था, उनकी रचनायें कौन सी है तथा अनकी काव्यकला एवं नाट्यकला का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेंगे कि शूद्रक कौन थे।

मृच्छकटिकम् के रचयिता शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेघ यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिंहासन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया।

2. 2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप—

- शूद्रक का जीवन परिचय एवं मृच्छकटिकम् की नाटकीय विशेषताओं का परिचय प्राप्त कर सकेगें।
- शूद्रक कौन थे यह बता सकेंगे।
- शूद्रक के जन्म स्थान के विषय में बता सकेगे।
- शूद्रक की मुख्य कृति के विषय में विस्तार से व्याख्या कर सकेंगे।
- मृच्छकटिकम् में किसका वर्णन है यह बता पायेंगे।
- मृच्दकटिकम् रूपक का कौन सा भेद है यह बता सकेंगे।
- शूद्रक की काव्यकला का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 शूद्रक का जीवन परिचय:-

मृच्छकटिक के रचियता शूद्रक का कुछ परिचय ग्रन्थ के आरम्भ (1। 4. 1। 5) में ही मिलता है। उसके अनुसार शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेघ यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिंहासन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया। वह युद्वप्रेमी थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे। राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर था शोभन , उसकी गति थी मतंग समान नेत्र थे चकोर की तरह, मुख था पूर्ण चन्द्रमाँ की भाँति। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे।

प्रतीत होता है की किसी अन्य लेखक ने यहाँ जान बूझ कर कह दिया है। 'शूद्रकोऽग्नि प्रविष्ट' स्वयं लेखक की लेखनी इस भूतकाल का प्रयोग कैसे कर सकती है। निः संदेह यह अंश प्रक्षेप है।

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्र । मुख: सुविग्रहश्चपरिपूर्णेन्दु :
द्विजमुख्यतम :गाधसत्वकविर्बभूव प्रथित: शूद्रकं इत्य :।।
ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां
ज्ञात्वा शर्वप्रसादाद्व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य । :
राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदवेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा
लब्ध्वा आयु दशदिनसहितं शूद्रकोशताब्दं :ऽग्निं प्रविष्ट :।।
समरव्यसनी प्रमादशून्य ।ककुदो वेदविदां तपोधनश्च :
परवारणबाहुयुद्धलुब्ध क्षितिपाल: किल शूद्रको बभूव :।।

शूद्रक नामक राजा की संस्कृत - साहित्य में खूब प्रसिद्धि है। जिस प्रकार विक्रमादित्य के विषय में अनेक दंतकथायें हैं । उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी है। कादम्बरी विदिशा नगरी में कथा- सरित्सागर में शोभावती तथा वेतालपंचविंशति में वर्धमान नामक नगर में शूद्रक के राज्य करने का वर्णन पाया जाता है। कथा सरित्सागर का कथन है। कि किसी ब्राह्मण ने राजा को आसन्नमृत्यु जानकर उसे दीर्घ जीवन की आशा में अपने प्राण निछावर कर दिये थे। हर्षचरित में लिखा है शूद्रक चकोर राजा चन्द्रकेतू का शत्रु था ।

स्कन्दपुराण के अनुसार विक्रमादित्य के सत्ताईस वर्ष पहले शूद्रक ने राज्य किया था। प्रसिद्ध है की कालिदास के पूर्ववती रामिल तथा सोमिल नामक कवियों ने मिलकर 'शूद्रक कथा' नामक कथा लिखी थी। अतः शूद्रक इसके कर्ता नहीं है । बहुत से लोग तो शूद्रक की सत्ता में ही विश्वास नहीं करते। परन्तु ये सब श्रान्त धारणाऐं हैं । तथ्य यह प्रतीत होते है कि विक्रमादित्य के समान ही शूद्रक भी ऐतिहासिक क्षेत्र से उठकर कल्पना जगत के पात्र माने जाने लगे थे । और उसी प्रकार ऐतिहासिक लोग प्रथम शतक में विक्रमादित्य के अस्तित्व के विषय में भी सन्देहशील थे उसी प्रकार शूद्रक के विषय में भी। आधुनिक शोध में दोंनों ही ऐतिहासिक व्यक्ति सिद्ध होते है। ऐसी दशा में शूद्रक को मृच्छकटिक का रचयिता न मानने वाले डासिलवाँ लेवी तथा कीथ मत स्वयं ध्वस्त हो जाता है । विशेल ने जो दण्डी को इसका रचयता होने का श्रेय दिया है । वह भी कालविरोध होने से भ्रान्त प्रतीत होता है। शूद्रक ऐतिहासिक व्यक्ति थे और वे ही मृच्छकटिक के यथार्थ लेखक थे ।

2.4 जन्म समय:-

पुराणों में आन्ध्रभृत्य - कुल के प्रथम राजा शिमुक का वर्णन मिलता है। अनेक भारतीय विद्वान राजा शिमुक के साथ शुद्रक की अभिन्नता कर अंगीकार कर इनका समय विक्रम की प्रथम शताब्दी में मानते है। यदि यह अभिन्नता सप्रमाण सिद्ध की जा सके तो शूद्रक कालिदास के समकालीन अथवा उनके कुछ पूर्व के ही माने जायेंगे। परन्तु मृच्छकटिक की इतनी प्राचीनता

स्वीकार करने में बहुतों को आपत्ति है । वामनाचार्य ने अपनी काव्यालंकार - सूत्र वृति में 'शूद्रकादिरचिषु' प्रबन्धेषु' शूद्रक-विरचित प्रबन्ध का उल्लेख किया और 'द्यूतं हि नाम पुरूषस्य असिंहासनं राज्यम् ' इस मृच्छकटिक के द्यूत - प्रशंसा-परक वाक्य को उद्धृत भी किया है , जिससे हम कह सकते है कि आठवीं शताब्दी के पहले ही मृच्छकटिक की रचना की गई होगी । वामन के पूर्ववर्ती आचार्य दण्डी (सप्तम शतक) ने भी काव्यादर्श में 'लिम्पतीव तमोऽगांनि' मृच्छकटिक के इस प़द्यांश को अलंकारनिरूपण करते समय उद्धृत किया है। इन बहिरंग प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मृच्छकटिक की रचना सप्तम शताब्दी के पहले ही हुई होगी । समय-निरूपण में मृच्छकटिक के अन्तरंग प्रमाणों से भी बहुत सहायता मिलती है। नवम अंक मे वसन्तसेना की हत्या करने के लिए शकार आर्य चारूदत पर अभियोग लगता है। अधिकरणिक के सामने यह पेश किया जाता है । अन्त में मनु के अनुसार ही धर्माधिकारी निर्णय करता है ।

अयं हि पातकी विप्रो न बध्यो मनुरब्रवीत् ।
राष्ट्रादस्मातु निर्वास्यो विभवैरक्षतैः सह ।।

इससे स्पष्ट ही है कि मनु के कथनानुसार अपराधी चारूदत अवध्य सिद्व होता है और धनसम्पति के साथ उसे देश से निकल जाने का दण्ड दिया जाता है। यह निर्णय ठीक मनुस्मृति के अनुरूप है ।

न जातु ब्राहम हन्यात् सर्वपापेष्वपि स्थितम् ।
राष्ट्रादेनं बहिः कुर्यात् समग्रधनमक्षतम् ।।
न ब्राहमणवधाद् भूयानधर्मो विद्यते भुवि ।
तस्मादस्य वधं राजा मनसपि न चिन्तयेत् ।।

अतः मृच्छकटिक की रचना मनुस्मृति के अनन्तर हुई होगी। मनुस्मृति का रचना काल विक्रय से पूर्व द्वितीय शतक माना जाता है जिसके पीछे मृच्छकटिक को मानना होगा। भास कवि के 'दरिद्र चारूदत' तथा शूद्रक के 'मृच्छकटिक' में अत्यन्त समानता पाई जाती है। मृच्छकटिक का कथानक बहुत विस्तीर्ण है, दरिद्रचारूदत का संक्षिप्त। मृच्छकटिक भास के रूपक के अनुकरण पर रचा गया है अतः शूद्रक का समय भास के पीछे चाहिए। मृच्छकटिक के नवम अंक में कवि ने बृहस्पति को अंगारक (अर्थात् मंगल) का विरोधी बतलाया है ।

परन्तु वराहमिहिर ने इन दोनों ग्रहों को मित्र माना है । , प्रसिद्व

अङारकविरूद्वस्य प्रक्षीणस्य बृहस्पतेः
ग्रहोऽयमपरः पार्श्वे धूमकेतुरिवोत्यितः।। (मृच्छ0 9 ।33)

ज्योतिषी वराहमिहिर का सिद्वान्त ही आजकल फलित ज्योतिष में सर्वमान्य है। आज कल भी मंगल तथा बृहस्पति मित्र ही माने जाते है , परन्तु वराहमिहिर के पूर्ववर्ती कोई-कोई आचार्य इन्हें शत्रु मानते थे, जिसका उल्लेख बृहज्जातक में ही पाया जाता है। वराहमिहिर का परवर्तीग्रन्थकार बृहस्पति को मंगल का शुत्र कभी नहीं माना जा सकता। अतः शुद्रक वराहमिहिर से पूर्व के ठहरते है । वराहिमिहिर की मृत्यु 589 ईस्वी में हुई थी , इसीलिए शुद्रक का समय छटी सदी के पहिले होना चाहिये ।

इन सब प्रमाणों का सार यही है कि शूद्रक दण्डी (सप्तम शतक) और वराहमिहिर (षष्ट शतक) के पूर्ववर्ती थे, अर्थात् मृच्छकटिक की रचना पंचम शतक में मानना उचित है। और यह अविर्भावकाल नाटक में वर्णित सामाजिक दशा से पुष्ट होता है।

2.5 मृच्छकटिकम् का सारांश:-

मृच्छकटिक में 10 अंक है। पहले अंक का नाम 'अलंकारन्यास' है। इसमें उज्जयिनी की प्रसिद्व वारवनिता वसन्तसेना को राजा का श्यालक शकार वश में करना चाहता है। रास्ते में अँधेरी रात में विट तथा चेट के साथ शकार उसका पीछा कर रहा है। मूर्ख शकार के कथन से वसन्तसेना को पता चलता है कि वह आर्य चारूदत के मकान के पास ही है। अतः उसके घर में घुसती है। विदूषक मैत्रेय शकार को डॉट-डपट कर घर में घुसने से रोकता है। चारूदत से वार्तालाप करने के बाद शकार से बचने के लिये वसन्त-सेना अपना गहना उसके घर पर रख आती है। दूसरें अंक का नाम 'द्युतक-संवाहक' है। दूसरे दिन सवेरे दो घटनाएं घटती हैं। संवाहक पहले चारूदत की सेवा में था , पीछे पक्का जुआरी बन जाता है। वह जुएँ में बहुत सा धन हार जाता है जिससे वह चारूदत के घर भाग आता है। चारूदत उसे ऋण मुक्त कर देते है। संवाहक बौद्व भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में किसी भिक्षुक को कुचलना ही चाहता है कि उसका सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला को उपहार में दे देते हैं। तीसरे अंक का नाम सधिच्छेद है। वसन्तसेना की दासी मदनिका को शर्विलक सेवा से मुक्त करना चाहता है। वह ब्राह्मण है, परन्तु प्रेमपाश में बंधकर आर्य चारूदत के घर में सेंघ मारता है। और वसन्तसेना का गहना चुरा लेता है।

चतुर्थ अंक का नाम '**मदनिका-शर्विलक** ' है जिसके शर्विलक अलकार लेकर वसन्त-सेना के घर जाता है और मदनिका को सेवा-मुक्त कर देता है। चारूदत की पतिव्रता पत्नी धूता अपनी बहुमूल्य रत्नावली उसके बदले में देती है। मैत्रेय रत्नावली लेकर वसन्तसेना के महल में जाता है और जुएँ में हार जाने का बहाना कर रत्नावली देता है। वसन्तसेना सायंकाल चारूदत के घर आने के लिए वादा करती है। पाँचवें अंक का नाम 'दुर्दिन' है। इसमें वर्षा का विस्तृत वर्णन है सुहावने वर्षाकाल में आर्य चारूदत उत्सुकता से वसन्तसेना की प्रतीक्षा में बैठे हैं। चेट वसन्तसेना के आगमन की सूचना देता है।

षष्ठ अंक का नाम 'प्रवहणविपर्यय' है। तथा सप्तम का 'अर्थकापहरण'। प्रातः काल चारूदत पुष्पकरण्डक नामक बगीचे में गये है। उनसे भेंट करने के लिए वसन्तसेना जाना चाहती है, परन्तु भ्रम से शकार की गाड़ी में, जो समीप में खड़ी थी , जा बैठती है। इधर राजा पालक किसी सिद्व की भविष्यवाणी पर विश्वास कर गोपाल के पुत्र आर्यक को कैदखाने में बन्द कर देता है आर्यक कारागृह से भागकर चारूदत की गाड़ी में चढ़ जाता है। श्रृंखला की आवाज को भूषण की झनझनाहट समझ गाड़ी हाँक देता है। रास्ते में दो सिपाही गाड़ी देखने जाते हैं जिनमें से एक आर्यक को देख उसकी रक्षा

करने का वचन देता है और अपने साथी से किसी बहाने झगड़ा कर बैठता है आर्यक बगीचे में चारूदत से भेंट करता है, 'अष्टम अंक' का नाम 'वसन्तसेना' - मोचन' है । जब वसन्तसेना पुष्पकरण्डक उ़द्यान में पहुँचती है , तब प्राणप्रिय चारूदत के स्थान पर दुष्ट शकार - संस्थानक मिलता है , जो उसकी प्रार्थना न स्वीकार करने से वसन्तसेना का गला घोंट डालता है संवाहक भिक्षु बन गया है । वसन्तसेना को समीप के विहार में ले जाते है और योग्य उपचार से उस पुनरूज्जीवित करता है । नवम अंक में जिनका नाम 'व्यहार ' है, शकार चारूदत्त पर वसन्तसेना के मारने का अभियोग लगता हैं कचहरी में जज के सामने मुकदमा पेश होता है । उसी समय चारूदत का बालक पुत्र रोहसेन-मृच्छकटिक (मिट्टीकी गाड़ी) लेकर आता है, जिसमें वसन्तसेना के दिये सोने के गहने है। इसी आधार पर चारूदत को फाँसी का हुक्म होता है । 'संहार 'नामक दशम अंक में उसी समय राज्य-परिवर्तन होता है। पालक को मार चारूदत का परम मित्र आर्यक राजा बन जाता है। वह चारूदत को क्षमा ही नहीं कर देता, प्रत्युत मिथ्याभियोग के कारण शकार को फाँसी का हुक्म देता है., परन्तु चारूदत के कहने से क्षमा कर देता है । वसन्तसेना के साथ चारूदत का व्याह सम्पन्न होता है । इसी अन्तिम प्रेम-मिलन के साथ यह रूपक समाप्त होता है। इस प्रकरण के कथावस्तु के दो अंश है -प्रथम भाग चारूदत् तथा वसन्तसेना का प्रेम दूसरा भाग आर्यक की राज्यप्राप्ति। शूद्रक ने पहले अंश को भास के 'दरिद्र-चारूदत् नाट्क से अविकल लिया है। शब्दतः और अर्थतः दोनो प्रकार की अपनी सम्पति प्राचीन ऐतिहासिक घटना के आधार पर लिखा गया मानते है । दोनों अंशों को शूद्रक ने बड़ी सुन्दरता के साथ सम्बद्ध किया हैं ।

अभ्यास प्रश्न 1 -

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर अतिसंक्षेप में दीजिए ।

1-मृच्छकटिकम् के रचयिता कौन है ।

2- मृच्छकटिकम् के आरम्भ में किसका वर्णन है

3- मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक का क्या नाम है ।

4-शूद्रक किस शास्त्र में प्रवीण थे ।

5-वसन्तसेना कौन थी ।

6- शकार कौन था ।

2.6 शूद्रक की काव्यकला:-

शुद्रक की शैली बडी़ सरल है । बड़े-बडे छन्दों का बहुत कम प्रयोग किया गया है । नये-नये भाव स्थान -स्थान पर मिलते थे । इस प्रकरण का मुख्य रस श्रृंगार है। रस की विभिन सामग्री से परिपुष्ट कर श्रगांर का सुन्दर रुप कवि ने दिखलया है । शुद्रक ने वर्षा का बड़ा विशद वर्णन किया है। इसमें चमत्कार -जनक अनेक सूक्तियाँ है । (9।14)

चिन्तासक्तनिमग्नमन्त्रिसलिलं दूर्तांमिशोककुलं
पर्यन्तस्थितचारत्रमकंर नागाश्वहिस्त्राश्रयम्।
नानावाशककड़.पक्षिरुचिरं कायस्थसपस्पिदं
नीतिक्षुण्णतयं च राजकरणं हिस्त्रैः समुद्रायते ।।

इस श्लोक में राजकरण कचहरी का खूब सच्चा वर्णन किया गाया है । शूद्रक का कहना है कि कचहरी समुद्र की तरह जान पड़ती है । चिन्तामग्न मंत्री लोग जल है, दूतगण लहर तथा शंख की तरह जान पड़ते है इधर-उधर दूर देशों में घूमने के कारण दोनों की यहॉ समता दी गई है । चारों ओर रहनेवाले चार आजकल के खुफिया पुलिस घड़ियाल है । यह समुद्र हाथियों तथा घोड़ों के रुप में हिंस्त्र पशुओं से युक्त् है । तरह-तरह के ठग तथा पिशुन लोग बगुले है । कायस्थ (मुंशी लोग) जहरीले सर्प है । नीति से इसका तट टूटा हुआ है । यह प्राचीन काल के राजकरण को वर्णन है; आजकल की कचहरी तो कई अंशों में इससे भी बढकर है । कचहरी में पहले- पहले पैर रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को शूद्रक के वर्णन की सत्यता का अनुभव पद-पद पर होता है ।

शर्विलक के चरित्र का वर्णन ऊपर किया जा चुका है । ये ब्राहाण देवता आर्य चारूदत के घर में रात को सेंध मारने जाते है । पहुँचने पर उन्हें मालूम पड़ता है कि वह अपना मानसूत्र भूल आये है । झटपट गले में पड़े रहनेवाले डोरे की जनेऊ की सुधि उन्हें हो जाती है। बस, आप इसीसे अपना कार्य सम्पादन करते हैं । इस चौर्य-प्रसंग में यज्ञोपवीत की उपयोगिता सुन लीजिये (3।17)--

यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राहाणस्य महदुपकरणद्रव्यम् , विशेषतोऽस्मद्विधस्य ,! कुतः एंतेन मापयति भितिषु कर्ममागनितेन मोचयति भूषणसंप्रयोगान् । उद्घाटको भवति यन्त्रदृढे कपाटे दष्टस्य कीटभुजगैः परिवेष्टनं च ।।

1.हरिश्चन्द्रस्त्मिां भाषामपभ्रंश इतीच्छति।
अपभ्रंशो हि विद्वद्भिर्नाटकादौ प्रयुज्यते ।। (प्राकृतसर्वस्य 16।2)
2.हिमवत्-सिन्धुसौवीरान् येऽन्यदशान् समाश्रिताः।
उकारबहुला तेषु नित्यं भाषां प्रयोजयेत् ।। (नाटकशास्त्र ।8147)

ब्राहाणों के लिए , जनेऊ बड़े काम कि चीज है, विशेष करके हमारे जैसे (चार) ब्राहाणों के लिए, क्योंकि जनेऊ से भीत पर सेंध मारने की जगह को नापते है। आभूषण के बंधन जनेऊ के द्वारा छुडाये जाते है और यदि साँप या कीट काट खाय, तो उसे जनेऊ से बाँध भी सकते है (जिसमें विष न चढे)। ठीक ही है चोर ब्राहाण के लिये जनेऊ का और उपयोग हो ही क्या सकता है ?

2.7 शूद्रक की नाट्यकला

कला की दृष्टि से 'मृच्छकटिक' निःसंदेह एक सुन्दर तथा सफल नाटक है । शूद्रक ने संस्कृत-साहित्य में शायद पहिली बार मध्यम श्रेणी के लोगों को अपने नाटक का पात्र बनाया है । संस्कृत का नाटक उच्च श्रेणी के पात्रों के चित्रण में तथा तदनुकूल कथानक के गुम्फन में अपनी भारती को

चरितार्थ मानता है, परन्तु शूद्रक ने इस क्षुण्ण मार्ग का सर्वथा परित्याग कर अपने लिए एक नवीन पंथ का ही अविष्कार किया है। उसके पात्र दिन-प्रतिदिन हमारे सड़कों पर और गलियों में चलने फिरनेवाले , रक्तमांस से निर्मित पात्र है, जिनके काम को जाँचने के लिए न तो कल्पना को दौड़ाना पड़ता है और न जिनके भावों को समझने के लिए मन के दौड़ की जरूरत होती है। मृच्छकटिक की इसीलिए संज्ञा 'संकीर्ण प्रकरण' की है, क्योंकि इसमें लुच्चे-लबारों, चोर-जुआरों; वेश्या-विटों का आकर्षण वायु-मण्डल है, जहाँ घौल-धुपाड़ों की चौकड़ी सदा अपना रंग दिखाया करती है। आख्यान तथा वातावरण की इस यथार्थवादिता और नैसर्गिकता कारण ही मृच्छकटिक पाश्चात्य आलोचकों की विपुल प्रशंसा का भाजन बना हुआ है। यहाँ कथावस्तु की एकता का भंग नहीं है, यद्यपि वर्षाकाल नाटक के व्यापार में शैथिल्य अवश्य ला देता है। शूद्रक का कविहदय स्वयमापतित वर्षाकाल की मनोहरता से रीझ उठता है और वह कथा के सूत्र को छोड़कर उसमें मनोहर वर्णन में जुट जाता है सिवाय इस वर्णनात्मक विषय के विभित्र घटनाओं के सूत्रों का एकीकरण बड़ी सुन्दरता से किया है। 'दरिद्र-चारूदत' के समान इसमें केवल एकात्मक प्रणयाख्याम नहीं है, प्रत्युत उस के साथ एक राजनैतिक आख्यान का भी पूर्ण सामञ्जस्य अपेक्षित है। शूद्रक ने इन दोनों आख्यानों को एक अन्विति के भीतर रखने का पूर्ण प्रयास किया और इसमें उनमें इन्हें पूर्ण सफलता भी मिली है। पात्रों के विषय में यह भूलना न चाहिए कि वे किसी वर्ग -विशेष के प्रतिनिधि न होकर स्वयं 'व्यक्ति' है। वे 'टाइप' नहीं हैं, प्रत्युत 'व्यक्ति' है। मृच्छकटिक के अमेरिकन भाषान्तरकार डॉ0 राइडर ने ठीक ही कहा है कि इस नाटक के पात्र 'सार्वभौम' (कास्मोपालिटन) है, अर्थात् इस विश्व के किसी भी देश या प्रान्त में उनके समान पात्र आज भी चलते-फिरते नजर आते है। इसके सार्वभौम आकर्षण का यही रहस्य है। यूरोप या अमेरिका की जनता के सामने इस नाटक का अभिनय सदा सफल इसलिए हो पाया है कि वह इसके पात्रों से मुठभेंड़ अपने ही देश में प्रतिदिन किया करती है। इनमें पौरस्त्य चाकचिक्य की झाँकी का अभाव कभी भी इन्हें दूरदेशस्थ पात्रों का आभास भी नहीं प्रदान करता। डाक्टर कीथ भले ही इन्हें पूरे 'भारतीय' होने की राध दें , परन्तु पात्रों के चरित्र में कुछ ऐसा जादू है कि वह दर्शकों के सिर पर चढ़कर बोलने लगता है । आज भी माथुरक जैसे सभिक तथा उसके सहयोगियों का दर्शन कलकता तथा बम्बई की ही गलिया में नहीं होता है, प्रत्युत लंदन के ईस्ट एण्ड़ में भी वे घूमते-घामते घौले-घप्पड़ जमाते नजर आते है, जहाँ का 'जुआड़ियों का अड्डा' (गैम्बलिंग डेन) आज भी पुलिस की नजर बचाकर दिन दहाडे चला करता है। तात्पर्य यह है कि शूद्रक के पात्र मध्यम तथा अधम श्रेणी के रोचक पात्र है, जिनका इतना यथार्थ चित्रण संस्कृत के रूपकों में फिर नहीं हुआ। शूद्रक की नाटककला वस्तुतः श्लाघनीय है स्पृहणीय है।

अभ्यास प्रश्न 2 - बहुविकल्पीय प्रश्न

1. मृच्छकटिकम् का अर्थ है-

(क) लोहे का घोड़ा (ख) सोने का घोड़ा

(ग) मिट्टी का गाड़ी (घ) लकड़ी का गाड़ी

2. मृच्छकटिकम् की मुख्य नायिका है-

(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना

(ग) गौरी (घ) पार्वति

3, मृच्छकटिकम् प्रकरण का नायक है -

(क) शकार (ख) विट

(ग) चारूदत्त (घ) इनमें से कोई नहीं

4. शकार का राजा से सम्बन्ध है-

(क) साला का (ख) मामा का

(ग) चाचा का (घ)पिता का

5- मृच्छकटिकम् क्या है -

(क) कथा (ख) गीतिकाव्य

(ग) प्रकरण (घ) चम्पू काव्य

2.8 सारांश:-

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान चुके है कि मृच्छकटिकम् के रचयिता शूद्रक हस्तिशास्त्र में परम प्रवीण थें, भगवान शिव के अनुग्रह से उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ था, बड़े ठाट बाट से उन्होने अश्वमेध यज्ञ किया था, अपने पुत्र को राज्य सिहांसन पर बैठा दस दिन तथा सौ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त में अग्नि में प्रवेश किया। शूद्रक युद्धप्रेमी थे, प्रमाद रहित थे, तपस्वी तथा वेद जानने वालों में श्रेष्ठ थे। राजा शूद्रक को बड़े हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने का बड़ा शौक था, उनका शरीर बहुत सुन्दर था , उनकी चाल हाथी के समान तथा नेत्र चकोर की तरह एवं मुख चन्द्रमा के समान था। तात्पर्य यह है कि उनका समग्र शरीर सुन्दर था। वे द्विजो में मुख्य थे। इस इकाई के अध्ययन से आप शूद्रक के व्यक्तित्व एवं कृर्तित्व का वर्णन कर सकेंगे।

2.9 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
मृच्छकटिकम्	मिट्टी की गाड़ी
श्लाघनीय	प्रशंसनीय
अनुग्रह	कृपा
समरव्यसनी	युद्धप्रेमी
सुविग्रह:	सुन्दर शरीर वाले
ज्ञात्वा	जानकर
वीक्ष्य	देखकर
शर्वप्रसादात्	शंकर की कृपा से

ककुद:	श्रेष्ठ
किल	निश्चय ही

2.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) शूद्रक (2) शूद्रक (3) अलंकारन्यास (4) हस्तिशास्त्र (5) उज्जयिनी की गणिका (6) राजा का श्यालक ,अभ्यास प्रश्न 2 – 1-(ग) 2- (ख) 3- (ग) 4- (क) 5- (ग)

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक - चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

2.12 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय, प्रकाशक - चौखभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शूद्रक का जीवन परिचय लिखिए।
2. मृच्छकटिकम् का सारांश लिखिए।
3. शूद्रक की काव्यकला एवं नाट्यकला पर प्रकाश डालिए।

इकाई 3 – मृच्छकटिकम् के प्रमुख पात्रों का चरित्र - चित्रण

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पात्र चरित्र – चित्रण
3.3.1 चारूदत्त
3.3.2 वसन्तसेना
3.3.3 शकार
3.3.4 विदूषक
3.3.5 अन्य पात्र
3.4 सारांश
3.5 शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.8 उपयोगी पुस्तकें
3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् के प्रथम खण्ड की यह तृतीय इकाई है। इससे पूर्व की इकाईयों के अध्ययन से आपने जाना कि नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ तथा महाकवि शूद्रक के जीवन से परिचित हुए। इस इकाई में आप इस प्रकरण के प्रमुख पात्रों का अध्ययन करेगें। मृच्छकटिकम् का प्रमुख पात्र अर्थात् नायक चारूदत्त है जो धीरप्रशान्त है जो अत्यन्त निर्धन है और उसमें नायकोचित समस्त गुण पाये जाते हैं।

मृच्छकटिकम् एक ऐसा प्रकरण है जिसमें कुलस्त्री तथा गणिका दो नायिकायें हैं किन्तु इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। विदूषक चारूदत्त का मित्र है। शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है जो राजश्यालक (राजा का साला) और अत्यन्त धूर्त है। शर्विलक जाति का ब्राह्मण है यद्यपि वह चोरी करता है किन्तु वह पेशेवर चोर नहीं है। इनके अतिरिक्त विट, धूता, मदनिका और भिक्षु आदि अन्य पात्र भी हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस प्रकरण के मुख्य पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को बता पायेंगे।

3.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- चारूदत्त की चारित्रिक विशेषताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- वसन्तसेना के चरित्र की विशेषताओं को समझा सकेगें।
- शकार के चरित्र का वर्णन कर सकेंगे।
- विदूषक के व्यक्तित्व को समझा सकेंगे।
- शर्विलक कौन था यह बता सकेगें।

3.3 पात्र चरित्र – चित्रण

नाटक में प्रयुक्त पात्रों के विचार कार्यप्रणाली उनके स्वभाव एवं स्वरूप के बारे में वर्णन करना उस पात्र का चरित्र चित्रण कहलाता है। मृच्छकटिकम् चरित्र-चित्रण की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण प्रकरण है इसकी कथावस्तु मध्यवर्ग के जीवन के आधार पर कल्पित की गयी है। शूद्रक चरित्र-चित्रण में खूब सिद्व हस्त है। इनके पात्र जीते-जागते है., सजीवता की मूर्ति हैं। प्रत्येक पात्र में कुछ विशेषता है, सभी पात्रों के कार्य और व्यवहार अपनी अपनी परिस्थिति के आधार पर दिखलाये गये हैं। मृच्द्कटिकम् प्रकरण का नायक चारूदत, नायिका वसन्तसेना, प्रतिनायक शकार तथा विदूषक का चरित्र-चित्रण इस प्रकार हैं।

3.3.1 चारूदत्त -

चारूदत्त इस प्रकरण का नायक है। नाट्यशास्त्र के अनुसार किसी रूपक का नायक विनयी, प्रियदर्शन, त्यागी, प्रियभाषी, लोकप्रिय, पवित्र, वाक् कुशल, उच्चवंशोत्पन्न, स्थिर युवक तथा बुद्धि, उत्साह, स्मृति, प्रज्ञा, कला और स्वाभिमान से युक्त शूरवीर, दृढ़, तेजस्वी, शास्त्रानुकूल कार्य करने वाला और धार्मिक होना चाहिए। नायक के चार भेद होते हैं – धीरोदात्त, धीरललित, धीरप्रशान्त धीरोद्धत। इन चार प्रकारों में चारूदत्त धीरप्रशान्त नायक है। आचार्य धनंजय दशरूपक में धीरप्रशान्त का लक्षण इस प्रकार बताते हैं – 'सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिक:'। चारूदत्त में सामान्य नायक के प्राय: सभी गुण पाये जाते हैं, और वह जाति का ब्राह्मण भी है।

उदार एवं दानवीर –

चारूदत्त उज्जयिनी में रहने वाला एक ब्राह्मण युवक है। अपनी अतिशय उदारता एवं दानशीलता के कारण वह अपनी समस्त सम्पत्ति गरीबों को दे देता है और दरिद्र हो जाता है। इस अवस्था में भी अपनी परोपकार, उदारता एवं शीलता आदि गुणों के कारण नगरवासियों के श्रद्धा के पात्र हैं।

दीनानां कल्प वृक्ष: स्वगुण फलनत: सज्जनानां कुटुम्बी
आदर्श: शिक्षितानां सुचरितनिकष: शीलवेलासमुद्र:। आदि श्लोक प्रथम अंक 48

जब कोई व्यक्ति प्रशंसनीय कार्य करता है या उसे कोई शुभ समाचार सुनाता हे तो वह उसे अवश्य ही पुरस्कार स्वरूप कुछ न कुछ देना चाहता है यह उसकी उदारता और दयालुता ही है। शर्विलक के द्वारा आभूषण चुराये जाने पर भी वह प्रसन्नता का अनुभव करता है जो उसकी अत्यधिक दयालुता को प्रकट करता है। बौद्ध भिक्षु को हाथी से बचाने पर वह कर्णपूरक को अपनी दुशाला पुरस्कार में दे देता है। चारूदत्त सेवकों के प्रति भी दया भाव रखता है इसी कारण वह सोई हुई रदनिका को जगाना नहीं चाहता है। अपनी उदारता के कारण ही वह दरिद्रता को मृत्यु से भी अधिक कष्टदायक समझता है - **एत्तु मां दहति यद् गृहमस्मदीयं**

क्षीणर्थमित्यतिथय: परिवर्जयन्ति
संशुष्क सान्द्र मदलेखमिव भ्रमन्त:
कालात्यये मधुकरा करिण :कपोलम्।।

विदूषक के द्वारा पूछे जाने पर कि हे मित्र ! मृत्यु और दरिद्रता में से तुम्हे क्या अच्छा लगता है ?तो चारूदत्त कहता है कि दरिद्रता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है दरिद्रता नही। क्योंकि मृत्यु कम कष्टों वाली होती है किन्तु दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु ख है:-

दारिद्रयान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्रयम्।
अल्पक्लेशं मरणं दारिद्रयमनन्तकं दु खम्:।।

धार्मिक – चारूदत्त धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति है । वह सन्ध्यावन्दन आदि नित्य कर्मों को नियमपूर्वक अनुष्ठान करता है। मैत्रेय को भी वह देवपूजा का महत्व समझाता है -

तपसा मनसा वाग्भि:पूजितां बलिकर्मभि :
तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवता:किं विचारितै :

सत्यनिष्ठ –

चारूदत्त सत्यनिष्ठ है। वह दूसरों को कभी भी धोखा देने की बात तक नहीं सोचता है। उसे भिक्षावृत्ति भी स्वीकार्य है किन्तु असत्य और कपट से वह कोसों दूर रहना चाहता है। यदि वह कभी असत्य बोलता भी है तो उसमें परार्थ, परोपकार आदि ही कारण है । इसी कारण वसन्तसेना के आभूषणों के चोरी हो जाने पर वह उसके बदले में अपनी रत्नावली यह कह कर विदूषक के हाथ भिजवा देता है कि उसके आभूषणों को वह जुएं में हार गया है क्योंकि वह जानता है कि वास्तविकता का पता चलने पर वसन्तसेना रत्नावली नही लेगी।

आकर्षक व्यक्तित्व – चारूदत्त गुणों के साथ-साथ आकृति से भी सुन्दर है । उसका सौन्दर्य दर्शनीय है । द्वितीय अंक में वसन्तसेना को चारूदत्त का परिचय देते हुए संवाहक कहता है कि – 'यस्तादृश: प्रियदर्शन: प्रियवादी, दत्वा न कीर्तयति, अपकृतं विस्मरति' । सप्तम अंक में आर्यक भी उनके वाह्य व्यक्तित्व की प्रशंसा करता है – 'न केवलं श्रुति रमणीयो दृष्टिरमणीयोऽपि' । चारूदत्त की नासिका उन्नत और उभरी हुई तथा नेत्र विशाल हैं । नवम अंक में चारूदत्त को देखते ही अधिकरणिक कहता है कि – " अयमसौ चारूदत्त: य एष: -

घ्राणोन्नतं मुखमपांगविशालनेत्रं
नैतद्धिभाजनमकारणदूषणानाम् ।
नागेषु गोषु तुरगेषु तथा नरेषु
नह्याकृति: सुसदृशं विजहाति वृत्तम् ।।

वसन्तसेना की माँ भी चारूदत्त के सौन्दर्य को देखकर अकस्मात् कह उठती है – 'अयं स: चारूदत्त:। सुनिश्चितं खलु दारिकया यौवनम् ।

चारित्रिक दृढ़ता –

चारूदत्त को अपनी प्रतिष्ठा और चरित्र की उज्जवलता का ध्यान है । इसी कारण वह वसन्तसेना के आभूषणों के चोरी चले जाने पर मूर्च्छित हो जाते हैं और नाना प्रकार की चिन्ता व्यक्त करता है । अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए ही वह वसन्तसेना की धरोहर को लौटाना आवश्यक समझता है। मृत्युदण्ड पाने पर भी उसे भय नहीं है , केवल दु:ख है तो प्रतिष्ठा चले जाने का।

कला प्रेमी –चारूदत्त कला प्रियव्यक्ति है। वह रेमिल के गीत को सुनकर उसकी प्रशंसा करता है। उसे संगीत का ज्ञान है तभी वह रेमिल के संगीत की ताल-लय, मूर्च्छना इत्यादि का विश्लेषण करते

हुए सराहना करता है । शर्विलक की लगाई सेंध को देखकर भी उसकी कलात्मकता की प्रशंसा करता है।

संयमी –

चारूदत्त अपराधी के प्रति भी क्रोध नहीं करता और शरणागत की रक्षा करता है । जिस प्रकार उसे मरणान्तिक वैर की धमकी देता है तब वह 'अज्ञोऽसौ' इतना मात्र कहकर छोड़ देता है जब वह चारूदत्त पर मिथ्याभियोग लगाता है तब भी चारूदत्त क्रुद्ध नहीं होता, विचलित नही होता है। उसका यह धैर्य उस समय चरम सीमा पर पहुँच जाता है जब वह शरणागत शकार को अभयदान देकर क्षमा कर देता है।

उत्तम पति –

गणिका से प्रेम करते हुए भी चारूदत्त में चारित्रिक दृढ़ता है। वह अपनी पत्नी धूता से प्रेम करता हे और उसे पवित्र मानता हुआ उसका आदर करता है। वेश्या के आभूषणों को भी अभ्यन्तर प्रवेश के योग्य नहीं समझता । वह परनारी पर दृष्टि भी नही डालना चाहता है – 'न युक्तं परकलत्रदर्शनम्' । जब अनजाने में अन्य स्त्री से उसके वस्त्रों का स्पर्श हो जाता है तो वह खिन्न होकर कहता है कि – इयमपरा का -

अविज्ञातावसक्तेन दूषितां मम वाससा।
छादिता शरद्भ्रैणचन्द्रलेखेव दृश्यते ।।

अपनी पतिव्रता स्त्री पर वह गर्व करता है और गृहस्थ धर्म का पूर्णतया पालन करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि चारूदत्त उदार, दानी, दयालु, लोकिप्रय, सुन्दर, कलाप्रेमी और धर्मिक प्रवृत्ति का नायक है। उसमें प्रकरण के नायक के सभी गुण विद्यमान है।

3.3.2 वसन्तसेना

मृच्छकटिकम् प्रकरण में दो नायिकायें है कुलस्त्री एवं गणिका । धूता कुलस्त्री है और वसन्तसेना गणिका है । इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है । दशरूपककार आचार्य धनंजय ने नायिकाओं के तीन भेद बताये हैं – स्वकीया, परकीया और साधारण स्त्री। साधारण स्त्री को गणिका कहते हैं यह कला, प्रगल्भा और धूर्तता से युक्त होती है।

वैभवसम्पन्न गणिका – वसन्तसेना उज्जयिनी की एक ऐश्वर्यशालिनी गणिका है। उसकी समृद्धि को देखकर विदूषक कह उठता है – 'किं तावद् गणिकागृहम् अथवा कुबेरभवनपरिच्छेद इति'। उसके पास यौवन का अपार वैभव है। कवि ने चतुर्थ अंक में उसके वैभव का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है

अनुपम सौन्दर्य – वसन्तसेना का सौन्दर्य अद्भुत है।वह एक सुन्दर तरूणी है, वह अलंकारों को भी अलंकृत करने वाली है। उसे उज्जयिनी नगरी का विभूषण कहा गया है –'बालां स्त्रियं च नगरस्य विभूषणं च'(8/23)। उसकी सुन्दरता पर बड़े से बड़ा अधिकारी अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए उसकी भाव-भ्रंगिमा को देखा करता है।दीपक के मद्धिम प्रकाश में भी उसके सौन्दर्य को देखकर

अकस्मात् चारूदत्त के मुख से निकल पड़ता है –'अये, कथं देवतोपस्थानयोग्या युवतिरियम्' । वस्तुत: वह देवताओं के द्वारा आराध्य देवी जैसी लगती है।

उदार हृदय नारी –

वसन्तसेना अत्यन्त विशाल हृदय वाली महिला है। माथुर के द्वारा पीछा किये जाते हुए भयभीत संवाहक को अपनी शरण में आने पर अपरिचित होने पर भी वह उसे अभयदान देती है। वह उसे कर्ज से मुक्त कराने के लिए अपना सुवर्णाभूषण भेजती है और कहला देती है कि संवाहक ने ही भेजा है। अपनी इसी उदारता के कारण वह मदनिका को दासता से मुक्त कर देती है तथा चारूदत्त के पुत्र रोहसेन को रोते हुए देखकर वह सोने की गाड़ी बनवाने के लिए अपने आभूषण दे देती है।

विनम्रता –

वसन्तसेना स्वभाव से अत्यन्त ही विनम्र है। यही कारण है कि वह चारूदत्त की पत्नी धूता का अपनी बड़ी बहन के समान आदर करती है और अपने आपको उसकी दासी कहने में भी संकोच नहीं करती है। वसन्तसेना चारूदत्त के पुत्र रोहसेन को अपने पुत्र के समान ही प्यार करती है इसीलिए वह रदनिका को अपने स्वर्णाभूषणों को उतार कर उसकी सोने की गाड़ी बनवाने के लिए दे देती है।

विदुषी नारी –

वसन्तसेना एक बुद्धिमती, कला-कुशल तथा विदुषी स्त्री है। वह राजमार्ग पर विट के कथन के गूढ़ अर्थ को समझ लेती है और आभूषण उतार लेती है। वह जानती है कि प्रियतम से कैसे व्यवहार करना चाहिए। वह चित्र रचना में कुशल है और चारूदत्त का चित्र बनाकर मदनिका को दिखलाती है। उसे संस्कृत का भी अच्छा ज्ञान है पंचम अंक में वह स्वरचित श्लोकों से वर्षा का वर्णन करती है। चतुर्थ अंक में विदूषक के साथ संस्कृत में वार्तालाप करती है।

एकनिष्ठ प्रेम –

वसन्तसेना चारूदत्त को सच्चे हृदय से प्रेम करती है। कामदेवायतन में जब वह चारूदत्त को देखती है तभी उसके हृदय में अनुराग उत्पन्न हो जाता है। चारूदत्त के दरिद्र होने पर भी वह उससे प्रेम करती है क्योंकि उसका प्रेम धन के लिए नहीं है अपितु प्रशंसनीय प्रेम है। उसका यह प्रेम उसके हृदय की पवित्रता कोव्यक्तकरता है। इसी कारण वह शकार के दश सहस्र सुवार्णालंकारों के साथ आये हुए प्रणय प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है।चारूदत्त को छोड़कर उसने अपना प्रेम कभी किसी और को समर्पित नहीं किया है। पुष्पकरण्डक उद्यान में शकार के द्वारा मारे जाने के लिए उद्यत होने पर वह चारूदत्त का नाम लेती हुई मरने को तैयार हो जाती है किन्तु शकार को स्वीकार नहीं करती है। वह चारूदत्त के गुणों पर मुग्ध है। अपने इसी उत्कट प्रेम के कारण उसे चारूदत्त की प्रत्येक वस्तु से प्रेम हो जाता है।संवाहक के मुख से चारूदत्त का नाम लेने पर वह उसका बहुत

अधिक सम्मान करती है। विदूषक का वह खड़ी होकर स्वागत करती है। कर्णपूरक से चारूदत्त का दुशाला पाकर वह प्रिय मिलन का सा आनन्द अनुभव करती है।

संक्षेप में कहा जाय तो गणिका होते हुए भी वसन्तसेना का व्यवहार एवं प्रेम एक कुलनारी के समान है। उसने अपने अनन्य प्रेम, उदात्त चरित्र, उदार हृदय एवं अपूर्व त्याग आदि गुणों के कारण अन्त में वह कुलवधू के पद को प्राप्त कर लेती है।

3.3.3 शकार

शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है। दशरूपक के अनुसार प्रतिनायक लोभी, धीरोद्धत,जड़ प्रकृति वाला ,पापी और व्यसनी होता है। शकार इन सभी गुणों से युक्त है वह दुर्गुणों से युक्त है। यह शकारी प्राकृत बोलता है (सकार के स्थान पर शकार जैसे वशन्तशेणा) संभवत: इसी कारण इसका नाम शकार है । यह किसी व्यभिचारिणी का पुत्र है (काणेलीमात:) और राजा की अविवाहिता स्त्री (रखैल) का भाई है।

अभिमानी –

शकार को राजश्यालक (राजा का साला) होने का बहुत अधिक अभिमान है इसी कारण वह अपनी मनमानी करता है। न्यायाधीशों को निकलवा देने की धमकी देकर वह उनसे मनमाना न्याय कराना चाहता है। उसे अपने पद और धन का भी अभिमान है अत: वह अपने आपको देवपुरूष मनुष्य वासुदेव भी कहता है।

जड़ स्वभाव –

शकार अत्यन्त मूर्ख प्रकृति का है। उसके कथन अज्ञानता और मूर्खता से युक्त है। शकार द्वारा दी गयी उपमायें इतिहास विरूद्ध हैं जैसे द्रोणपुत्रो जटायु: । उसके अधिकांश कथन हास्यजनक है। शकार पढ़ा लिखा नही है तथा वह बातचीत करने का तरीका भी नही जानता फिर भी उसे अपने ज्ञान पर गर्व है और पुराण तथा इतिहास में वर्णित घटनाओं को वह मनमाने ढंग से कहता है।

क्रूर एवं निर्दयी –

शकार अत्यन्त क्रूर,निर्दयी और पापी है तथा पापपूर्ण योजनायें बनाने में निपुण है। विट और चेट को कपटपूर्वक हटाकर वसन्तसेना का गला घोंट देता है। जब विट उसके इस कुकृत्य की भर्त्सना करता है तो उस पर ही वह हत्या का आरोप मढ़ देता है। चेट को बाँध कर डाल देता है और चारूदत्त पर वसन्तसेना की हत्या का अभियोग चलाता है। जब चेट उसके इस षड़यन्त्र का उद्घाटन करता है तो उस पर चोरी का आरोप लगा देता है। चाण्डालों से कहता है कि चारूदत्त को उसके पुत्र

सहित मार डालो। उससे बड़ी क्रूरता क्या होगी कि वह एक निर्दोष व्यक्ति और उसके मासूम बच्चे को मरवाना चाहता है।

अस्थिर स्वभाव –

वह स्वभाव से अस्थिर, दुराग्रही तथा कायर है। उसके विचार प्रत्येक क्षण परिवर्तित होते रहते हैं। उसके साथी विट और चेट हमेशा सशंकित रहते है कि पता नहीं की वह किस क्षण में क्या कह बैठे या कर बैठे। प्रथम अंक में विट से कहता है कि वसन्तसेना को लिये बिना नहीं चलूँगा ये है उसका दुराग्रह। अष्टम अंक में पहले तो विट को गाड़ी में बैठने के लिए कह देता है फिर तभी उसका अपमान करने लगता है। इसी प्रकार चेट को दीवार पर से गाड़ी लाने का आदेश दे देता है। अपनी गाड़ी में वसन्तसेना को देखकर ही वह भयभीत हो जाता है तथा अन्त में मृत्यु के भय से चारूदत्त की शरण में आकर रक्षा की याचना करता है यह है उसकी कायरता।

संक्षेप में शकार दुर्गुणों की खान है उसके चरित्र में प्राय: सभी दुर्गुण स्पष्ट दिखायी देते हैं। वह केवल स्त्री -लम्पट, मूर्ख और धूर्त ही नहीं अपितु मानव के रूप में दानव ही कहा जा सकता है। प्रतिनायक के रूप में उसका यथार्थ चित्रण किया गया है।

3.3.4 विदूषक

दशरूपक के अनुसार नायक का वह सहायक जो अपने आकार, प्रकार तथा कथन आदि से हंसी उत्पन्न करता है, विदूषक कहलाता है 'हास्याकृच्च विदूषक:' (दश0 2,9)। मृच्छकटिकम् के विदूषक में भी यह सभी गुण विद्यमान है इस प्रकरण में विदूषक का नाम मैत्रेय है और वह जाति का ब्राह्मण है। जिसकी चारित्रिक विशेषताएं इस प्रकार है -

सच्चा मित्र –

मैत्रेय चारूदत्त का सच्चा मित्र है। चारूदत्त के निर्धन होने पर भी वह उसका साथ नहीं छोड़ता। येन केन प्रकारेण वह अपनी उदरपूर्ति करता हुआ चारूदत्त की सहायता करता है। इसी कारण चारूदत्त कहता है कि – 'अये, सर्वकालमित्रं मैत्रेयं प्राप्त:'। वह चारूदत्त को सान्त्वना देता रहता है। चारूदत्त को किसी भी प्रकार कष्ट न पहुँचे इसी कारण वह रदनिका से कहता है कि वह अपने अपमान की बात चारूदत्त से न कहे। वह चारूदत्त को गणिका प्रसंग से हटाना चाहता है क्योंकि वह जानता है कि वेश्या लालची और कुटिल होती है अतएव वह वसन्तसेना को भी घृणा की दृष्टि से देखता है और चारूदत्त से कहता है कि – 'निवर्त्य तामात्माऽस्माद् बहुप्रत्यवायाद् गणिकाप्रसंगात्'। चारूदत्त के प्रति उसे अगाध प्रेम है चारूदत्त पर शकार के द्वारा मिथ्याभियोग लगाये जाने पर वह न्यायालय में शकार से लड़ बैठता है। जब चारूदत्त के मृत्युदण्ड की घोषणा की जाती है तब वह कहता है कि वह चारूदत्त के बिना जीवित नही रहना चाहता।

भीरू तथा क्रोधी –

मैत्रेय अत्यन्त क्रोधी तथा डरपोक है। वह अंधेरे में चतुष्पथ पर जाने से डरता है।जब चारूदत्त रात्रि में वसन्तसेना को पहुँचाने के लिए कहता है तो वह बड़ी चतुराई से मना कर देता है।वह

शीघ्र ही क्रुद्ध हो जाता है रदनिका के अपमान को देखकर वह शकार और विट को मारने के लिए उद्यत हो जाता है।चारूदत्त की दशा को देखकर वह कहता है कि जब पूजा करने पर भी देवता प्रसन्न नही होते हैं तो ऐसी देवपूजा से क्या लाभ ? चारूदत्त की अत्यधिक उदारता उसे पसन्द नही है आभूषणों के बदले रत्नावली देना उसे अच्छा नही लगता है । विदूषक एक साधारण कोटि का समझदार व्यक्ति है चारूदत्त के उदात्तगुण उसकी समझ से परे हैं ।वह भोजन प्रिय तथा पेटू भी है।वसन्तसेनाके भवन में विविध प्रकार के पकवानों को देखकर वह सोचता है कि वह इन्हें खाकर जायेगा किन्तु वसन्तसेना के द्वारा केवल मौखिक सत्कार के द्वारा बिना खिलाये पिलाये ही विदा कर दिये जाने पर वह सोचता है कि इसने तो पानी को भी नही पूछा । संक्षेप मे हम कह सकते हैं कि विदूषक बुद्धिमान मित्र नही किन्तु चारूदत्त का हितैषी एवं सच्चा मित्र है । यद्यपि उसमें अत्यन्त उच्चकोटि के गुण विद्यमान नही हैं तथापि वह एक व्यावहारिक जन है ।

3.3.5 अन्य पात्र

अन्य पुरूष पात्रों में शर्विलक एक प्रेमी हृदय ब्राह्मण है । वह चौर्य कला में निष्णात है किन्तु वह चोरी को अच्छा नही समझता केवल स्वतन्त्र व्यवसाय मानकर ही उसे ग्रहण करता है वह मदनिका को प्राप्त करने के लिए चोरी करता है । वह विपत्ति में मित्र का साथ देने वाला है कठिनता से प्राप्त हुई प्रेमिका मदनिका को छोड़कर अपने मित्र आर्यक को मुक्त कराने चला जाता है ।वह षडयन्त्र रचने में कुशल है। संवाहक चारूदत्त के यहाँ नौकरी करने के पश्चात् द्यूतक्रीड़ा से अपनी आजीविका चलाने लगता है।जुयें में हार कर वह वसन्तसेना के द्वारा ऋणमुक्त कराया जाता है और वह विरक्त होकर बौद्ध भिक्षु बन जाता है । वह कृतज्ञ है और उपकार का बदला चुकाने के लिए चिन्तित रहता है अन्त मे वसन्तसेना की प्राण रक्षा करके वह सन्तुष्ट हो जाता है और प्रव्रज्या को ही उत्तम समझने लगता है।अन्य पुरूष पात्रों में विट सहृदय एवं बुद्धिमान है वह वसन्तसेना की सच्ची प्रेम भावना को देखकर उसके प्रेम की प्रशंसा करता है तथा यथाशक्ति उसकी सहायता करता है।वह धर्मभीरू है तथा पाप का विरोध भी करता है इसी कारण वह शकार को छोड़कर चला जाता है। इसके अतिरिक्त चेट, न्यायाधीश, चन्दनक ओर वीरक, सभिक,द्यूतकर,दर्दुरक आदि का भी उल्लेख किया गया है ।

स्त्री पात्रों में धूता प्रमुख स्त्री पात्र है जो चारूदत्त की विवाहिता पत्नी है, एक पतिव्रता नारी है जो अपने पति के दु:ख को नही देख सकती और पति की अपकीर्ति से भी डरती है इसी कारण बड़ी चालाकी से रत्नावली विदूषक को दे देती है । वह एक सच्ची भारतीय नारी है । मदनिका वसन्तसेना की दासी तथा सखी है । उस पर वसन्तसेना बहुत अधिक विश्वास करती है तथा वह भी वसन्तसेना से बहुत स्नेह करती है । इनके अतिरिक्त रदनिका, वसन्तसेना की चेटी तथा वसन्तसेना की माता आदि का भी उल्लेख हुआ है ।

अभ्यास प्रश्न 1 -

निम्नलिखित वाक्यों में सत्य असत्य बताइए।

1. मृच्छकटिकम् शूद्रक की रचना है।
2. मृच्छकटिकम् का नायक शकार है।
3. वसन्तसेना शकार से प्रेम करती है।
4. विदूषक का नाम मैत्रेय है।
5. चारूदत्त एक निर्धन ब्राह्मण है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

1. मृच्छकटिकम् की मुख्य नायिका है -

(क) मदनिका (ख) वसन्तसेना (ग) रदनिका (घ) गौरी

2- मृच्छकटिकम् का सबसे विचित्र नाटकीय पात्र है-

(क) वसन्तसेना (ख) चारूदत्त (ग) मदनिका (घ) शकार

3- शकार का राजा से क्या सम्बन्ध है -

(क) मामा (ख) साला (ग) पिता (घ) भाई

4- मृच्छकटिकम् का नायक है -

(क) विट (ख) चारूदत्त

(ग) शकार (घ) शर्विलक

5- मृच्छकटिकम् क्या है -

(क) नाटक (ख) प्रकरण

(ग) भाण (घ) प्रहसन

3. 4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान चुके हैं कि मृच्छकटिकम् चरित्र-चित्रण की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण प्रकरण है इसकी कथावस्तु मध्यवर्ग के जीवन के आधार पर कल्पित की गयी है। इनके पात्र जीते-जागते है., सजीवता की मूर्ति हैं। प्रत्येक पात्र में कुछ विशेषता है, सभी पात्रों के कार्य और व्यवहार अपनी अपनी परिस्थिति के आधार पर दिखलाये गये हैं। मृच्द्कटिकम् प्रकरण का नायक चारूदत धीर-प्रशान्त ,सदाचारी एवं दीनों के कल्पवृक्ष हैं। उसमें उत्माभिमान की मात्रा खूब है। इस प्रकरण में अवश्य ही चारूदत के रूप में हम आर्दश ' आर्य सज्जन का मनोरम चित्र पाते है। वसन्तसेना उज्जयिनी की एक वेश्या है जो इस प्रकरण की नायिका है। उसके चरित्र में हम अनेक स्त्रीसुलभ गुणों का सन्निवेश पाते हैं। वेश्या होने पर भी वह सच्चे प्रेम का मूल्य जानती है। शकार

इस प्रकरण का प्रतिनायक है और वह दुर्गुणों की खान है। मृच्छकटिकम् में विदूषक का नाम मैत्रेय है और वह चारूदत्त का किसी भी अवस्था में विचलित न होने वाला मित्र है। इनके अतिरिक्त शर्विलक, विट, धूता, मदनिका और भिक्षु आदि अन्य पात्र हैं।

3.5 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
द्यूतम्	जुवाँ
दीनानाम्	गरीबो के लिये
कल्पवृक्षः	कल्पवृक्ष
सज्जानानां	सज्जनों का
कुटुम्बी	परिवार के समान
सत्कर्ता	अच्छा कर्म करने वाला
श्लाघ्यः	प्रशंसनीय
हिमवत्	बर्फ के समान
गणिका	वेश्या
अकस्मात्	अचानक
चतुष्पथ	चौराहा
चतुराई	चालाकी
भीरू	डरपोक
अपकीर्ति	अपयश

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) सत्य (2) असत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2 – (1) ख (2) घ (3) ख (4) ख (5) ख

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1- नाट्यशास्त्र , भरतमुनि आचार्य , चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
2- दशरूपक , आचार्य धनंजय, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
3-मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

3.8 उपयोगी पुस्तकें:-

1- नाट्यशास्त्र , भरतमुनि आचार्य , चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
2- दशरूपक , आचार्य धनंजय, चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।

3-मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी

3. 9 निबन्धात्मक प्रश्न :-

1. चारूदत्त का चरित्र चित्रण कीजिए।
2. वसन्तसेना का चरित्र चित्रण कीजिए।
3. मृच्छकटिकम् के प्रतिनायक का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. विदूषक का चरित्र-चित्रण कीजिए।

इकाई 4 - मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

4.4 सारांश

4.5 शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.8 उपयोगी पुस्तकें

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् के प्रथम खण्ड की यह चतुर्थ इकाई है । इससे पूर्व की इकाई में आप इस प्रकरण के प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं से परिचित हुए । मृच्छकटिकम् का प्रमुख पात्र अर्थात् नायक चारूदत्त है जो धीरप्रशान्त है जो अत्यन्त निर्धन है और उसमें नायकोचित समस्त गुण पाये जाते हैं । मृच्छकटिकम् एक ऐसा प्रकरण है जिसमें कुलस्त्री तथा गणिका दो नायिकायें हैं किन्तु इसमें वसन्तसेना का ही चरित्र मुख्य रूप से चित्रित किया गया है । विदूषक चारूदत्त का मित्र है । शकार इस प्रकरण का प्रतिनायक है जो राजश्यालक (राजा का साला) और अत्यन्त धूर्त है ।

प्रस्तुत इकाई में आप तत्कालीन सामाजिक एवं राजनैतिक दशा का अध्ययन करेंगे । मृच्छकटिकम् की कथावस्तु यथार्थ जीवन के आधार पर कल्पित की गई है इसी कारण इसमें तत्कालीन समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता पायेंगे कि उस समय राजा स्वछन्द एवं विलासी था प्रजा में उसके प्रति आक्रोश व्याप्त था । जुआं खेलने की प्रथा बहुत प्रचलित थी । स्त्रियां की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं था । उस समय न्याय व्यवस्था थी न्यायाधीश भी होता था किन्तु अन्तिम निर्णय राजा के ही हाथ में होता था ।

4.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- तत्कालीन समाज की व्याख्या कर सकेंगे ।
- राजनैतिक अवस्था का वर्णन कर सकेंगे ।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों का वर्णन कर सकेंगें ।
- धार्मिक विश्वास एवं मान्यताओं का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 मृच्छकटिकम् में चित्रित सामाजिक एवं राजनीतिक चित्रण

मृच्छकटिकम् की कथावस्तु यथार्थ जीवन के आधार पर कल्पित की गई है इसी कारण इसमें तत्कालीन समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है ।

सामाजिक दशा – उस समय समाज व्यवस्थित नहीं था । जाति व्यवस्था कठोर हो चली थी व्यक्ति जिस कुल में जन्म लेता था वही उसकी जाति होती थी और लोगो में जाति के प्रति अभिमान भी उत्पन्न हो गया था । अपने ज्ञान और चरित्र के कारण ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ समझे जाते थे । वे समाज के पूजनीय एवं आदरणीय थे । निमन्त्रण पर जाना और दक्षिणा लेना भी ब्राह्मणों का ही कार्य था । ब्राह्मणों के सुवर्ण आदि को चुराना भी महापातक माना जाता था । उसे समाज में सबसे आगे स्थान दिया जाता था – "समीहितसिध्यै प्रवृर्त्ते न ब्राह्मणोऽग्रे कर्तव्य:"। वैश्य व्यापार में उच्च स्थान पर थे ।

कायस्थ के प्रति समाज में अच्छी भावना नहीं थी। फांसी देने का कार्य चाण्डाल करते थे। उनका समाज में स्थान सबसे निम्न कोटि का था। प्राकृत जनों को वेद पढ़ने का अधिकार नही था। उस समय भिन्न-भिन्न जातियां अलग-अलग स्थानों पर निवास करती थी जातियों के नाम पर मोहल्लों के नाम पड़ने लगे थे। समाज में विवाह प्रथा थी। बहुविवाह का भी प्रचलन था। असवर्ण स्त्री से भी विवाह का निषेध नहीं था तभी तो चारूदत्त और शर्विलक जैसे ब्राह्मणों ने वेश्याओं से विवाह किया था। रखेली की प्रथा भी प्रचलित थी। तत्कालीन समाज में पर्दे की प्रथा का सम्भवत: प्रचलन नही था शायद यही कारण है कि धूता बिना पर्दे के ही सबके सामने आती है। स्त्रियां आभूषण पहनती थी और अपने केशों को पुष्पों से सजाती थी जिसका दर्शन शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना के वर्णन में मिलता है - नवीन केले के वृक्ष के समान (भय से) काँपती हुई, वायु के द्वारा चंचल अंचल वाले लाल रेशमी वस्त्र को धारण करती हुई, टाँकी द्वारा काटी जाती हुई मन:शिला की कन्दरा(से निकलने वाली चिंगारियों) के समान (केशों में गुँथे हुए) रक्त कमलों की कलियों को (वेग से दौड़ने के कारण) बिखेरती हुई क्यों जा रही हो ?

किं यासि बालकदलीव विकम्पमाना
रक्तांशुकं पवनलोलदशं वहन्ती।

रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलमुत्सृजन्ती
टंकेर्मन:शिलगुहेव विदार्यमाणा।।

इससे प्रतीत होता है कि वसन्तसेना ने लाल कमल की कलियों से अपने केशों को सजा रक्खा है।

राजनैतिक व्यवस्था- उस समय राजनैतिक स्थिति अच्छी नहीं थी। राजा स्वेच्छाचारी होता था। वह विलासी होता था तथा राजमहिषियों के अतिरिक्त रखेलियां भी रखता था। राजा पालक के यहां इसी प्रकार की रखेली शकार की बहन थी। राजा के शकार जैसे नीच सम्बन्धी प्रजा पर मनमाना अत्याचार करते थे। राज्य में धूर्तों का बोलबाला था। अनेक प्रकार की व्यवस्था फैली हुई थी। शान्ति और व्यवस्था न थी। रात्रि के आरम्भ में ही सम्भ्रान्त नारियों का राजमार्गों पर निकलना कठिन था। अनेक प्रकार के धूर्त विट चोर तथा वेश्याएं राजमार्गों पर घूमते थे (एतस्यां प्रदोषवेलायां इह राजमार्गे गरिग्रका विटाश्चेटा राजवल्लभाश्च पुरुष। संचरिन्त) । राजा के पदाधिकारी एवं कर्मचारी अपने कर्तव्य-पालन में परस्पर ईर्ष्या का भाव रखते थे। वीरक और चन्दनक का विवाद इसका साक्षी है।राजा के अत्याचारों के प्रति जनता में क्षोभ उत्पन्न हो जाता था। उन अत्याचारों का विरोध किया जाता था। इस विरोध की भावना के कारण ही चन्दनक ने 'आर्यक' को जाने दिया और राजा के

विरूद्ध विद्रोह में सम्मिलित हो गया। इसी भावना के कारण 'विट' शकार से पृथक हो गया और स्थावरक अट्टालिका से कूदकर भी चारुदत्त के वधस्थान पर पहुंच गया। यही भावना संगठित हो जाने पर षड़यन्त्र का रूप धारण कर लेती है। शासन प्रबन्ध के शिथिल होने के कारण कोई षङयन्त्र सहज ही सफल हो सकता था। इन षङयन्त्रों में चोर, जुआरी विद्रोही राजकर्मचारी, असन्तुष्ट पदाधिकारी और राजा द्वारा अपमानित व्यक्ति सम्मिलित हो जाते थे। "ज्ञातीन् विटान् स्वभुजविकमलब्धवर्णान्' ।राजा के ऐसे षङयन्त्रों का सदा भय रहता था और वह षङयन्त्र के सन्देह में किसी भी व्यक्ति को कारागृह में डाल देता था। राजा पालक ने इसी सन्देह में आर्यक को कारागृह में बन्दी बनाया था।

उस समय राजा में ही शासनसत्ता निहित थी। वही न्याय-निर्णय का अन्तिम निश्चय करता था-'निर्णये वयं प्रमाणम् शेषे तु राजा' (अंक 9) तथा वही सेनाध्यक्ष होता था। उसकी सहायता के लिये मन्त्री, न्यायाधीस तथा दण्डाधिकारी और रक्षक होते थे। 'शुल्क' (कर) इकट्ठा करने के लिए राजपुरूष नियुक्त होते थे । इसी प्रकार राज्य का कार्य विविध विभागों में बटा था। मृच्छकटिक के नवम गणक से उस समय की न्याय-व्यवस्था पर विशेष प्रकाश पड़ता है। न्यायालय में एक न्यायाधीश होता था। उसकी सहायता के लिए एक श्रेष्ठी श्रसेसर के रूप में होता था तथा 'कायस्थ' पेशकार क रूप में । न्यायालय की स्वच्छता, व्यवस्था एवं व्यवहारार्थियों को बुलाने आदि के लिये भी एक कर्मचारी नियुक्त था जिसे 'शोधनक' कहते थे। न्यायाधीश निर्णय करने में स्वतन्त्र न था। उस पर राजा और उसके कृपाभाजन जनों का श्रातङक था। तभी तो शकार न्यायाधिशों को बुरी तरह धमकाता है। न्यायाधीशों को यह भय बना रहता था कि न जाने किस समय उन्हें इस पद से पृथक् कर दिया जाये। न्यायालय में सम्भ्रान्त जनों को बैठने के लिए शासन दिया जाता था। न्यायाधीश सहानुभूति शिष्टता से व्यवहार करते थे। वादी-प्रतिवादी के कथन को लेखबद्ध कर लिया जाता था और साक्षी का भी ध्यान रक्खा जाता था। न्याय निःशुल्क था और उसमें अधिक समय नहीं लगता था। मृत्युदण्ड जैसे गम्भीर दण्ड का भी तुरन्त निर्णय कर दिया जाता था। किन्तु न्यायाधीश के निर्णय की अन्तिम स्वीकृति राजा ही देता था। प्रायः न्याय-निर्णय मनुस्मृति के आधार पर किया जाता था, यों तो राजा का कथन ही सर्वोपरि विधान था। दण्ड कठोर थे राजनैतिक बन्दियों को बेङीयाँ पहनाई जाती थीं (श्रार्यक) राजकुल में कोई हर्षोत्सव होने के समय अपराधियों को दण्ड-मुक्त कर दिया जाता था- "कदापि राज्ञः पुत्रो भवति" तेन तृद्धिमहोत्सवेन सर्वध्यानां मोक्षो भवति," अपराधियों को अपना अपराध स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जाता था। सच सच न बतलाने पर उन्हें कोड़े लगवाये जाते थे हत्या के अपराध के लिये मृत्युदण्ड दिया जाता था। मृत्युदण्ड देने के लिये अपराधी को चाण्डालों को सौंप दिया जाता था। वे उसे रक्तचन्दन और कनियर की माला आदि से सजाकर

बध्यस्थल को ले जाते थे और तीन बार उसके अपराध तथा दण्ड की घोषणा करते थे। तब शूल पर चढ़ाकर, तलवार से सिर काटकर, कुत्तों से नुचवाकर या आरा से चीरकर उसे प्राणदण्ड दिया जाता था।

अभ्यास प्रश्न 1 -

(क) सत्य/असत्य बताइयें ?

1- उस समय जातियों के आधार पर मोहल्लों का नाम रखा जाता था।

2- संभ्रान्त नारियों का रात्रि के आरम्भ में राजमार्गों पर निकलना कठिन था।

3- न्यायाधीश निर्णय लेने में स्वतन्त्र होता था।

4- स्त्रियाँ आभूषणों को धारण करती थी।

5- शकार स्त्रियों का बहुत सम्मान करता था।

6- उज्जयिनी आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नगरी थी।

अभ्यास प्रश्न 2 -

(ख) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ?

1- न्यायाधीश के साथ .... हुआ करता था।

2- स्त्रियाँ अपने बालों को .... से सजाती थी।

3- उस समय .... धर्म अधिक प्रचलन में था।

4- राज्य की पूर्ण सत्ता .... के हाथों में होती थी।

5- फाँसी देने का कार्य .... करते थे।

4.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान पाये कि मृच्छकटिकम् में वर्णित उज्जयिनी राज्य की क्या दशा थी। उस समय देश आर्थिक दृष्टि से समृद्धशाली था। यहां का व्यापार समुन्नत था। उस समय समाज की स्थिति अच्छी नहीं थी। राज्य में धूर्तों का बोलबाला था। राजा स्वेच्छाचारी तथा विलासी होता था। रात्रि के आरम्भ में संभ्रान्त नारियों का राजमार्गों पर निकलना मुश्किल होता था। स्त्रियां की सुरक्षा का उचित प्रबन्ध नहीं था। उस समय न्याय व्यवस्था थी न्यायाधीश भी होता था किन्तु अन्तिम निर्णय राजा के ही हाथ में होता था।

4.5 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
यथार्थ	वास्तविक
मुश्किल	कठिन
स्वेच्छाचारी	अपनी इच्छा के अनुसार आचरण करने वाला
धूर्त	ठग
समृद्धशाली	सम्पन्न
अभिमान	घमण्ड
महापातक	महापाप
निम्न	नीचा

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 - 1. (सत्य) 2. (असत्य) 3. (असत्य) 4. (सत्य) 5. (असत्य) 6. (सत्य)

अभ्यास प्रश्न 2 - 1. असेसर 2. वेणी 3. बौद्ध 4. राजा 5. चाण्डाल

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.8 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मृच्छकटिकम् में वर्णित तत्कालीन समाज की राजनीतिक अवस्था का चित्रण कीजिए।
2. मृच्छकटिकम् में वर्णित सामाजिक दशा का वर्णन कीजिए।

तृतीय सेमेस्टर / SEMESTER- III
खण्ड 2
मृच्छकटिकम् व्याख्या

इकाई 1 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 10 तक
 (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
1.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 11 से 20 तक
 (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
1.9 उपयोगी पुस्तकें
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् प्रकरण से सम्बन्धित यह द्वितीय खण्ड है । इससे पूर्व के खण्ड में आपने जाना कि नाट्य साहित्य का उद्भव एवं विकास किस प्रकार हुआ । इस प्रकरण के रचयिता शूद्रक कौन थे । इसके प्रमुख पात्र कौन हैं तथा तत्कालीन समाज की क्या स्थिति थी ।

प्रस्तुत इकाई में आप प्रथम अंक के 1 - 20 श्लोकों का अध्ययन करेगें । इस अंक का प्रारम्भ नान्दी पाठ से होता है । सूत्रधार सूचित करता है कि हम मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण का अभिनय करने जा रहे हैं, इसके रचयिता राजा शूद्रक है तथा राजा शूद्रक के गुणों का वर्णन करता है और कहता है कि राजा शूद्रक ने उन दोनों (चारूदत्त और वसन्तसेना) के उत्तम विहार लीला पर आश्रित नीति के आचरण, दुर्जनें के चरित्र, तथा होनहार (भाग्य) इन सभी का वर्णन किया है । इन श्लोकों में चारूदत्त दरिद्रता के दोषों का तथा उससे उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट एवं शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना का वर्णन है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेगें कि राजा शूद्रक का व्यक्तित्व कैसा था । इसका नायक चारूदत्त एक गरीब ब्राह्मण है जो दरिद्रता से उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट,शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई भयभीत वसन्तसेना के बारे में बता सकेगें । निर्धनता सबसे बड़ा अभिशाप है दरिद्र व्यक्ति के जीवन में सबकुछ सूना होता है, जीवन के इस वास्तविक सत्य से परिचय करा पायेगें ।

1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप —

- राजा शूद्रक के विषय में बता पायेगें ।
- चारूदत्त कौन था यह बता पायेगें ।
- दरिद्र व्यक्ति का जीवन कैसा होता है इसकी व्याख्या कर सकेगें ।
- भयभीत वसन्तसेना के मनोभावों का वर्णन कर सकेगें ।
- दरिद्रता समस्त आपत्तियों की जड़ है इसकी विवेचना कर पायेगें ।

1.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 1 से 10 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

प्रथम अंक का प्रारम्भ - पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानो-
रन्त: प्राणावरोधव्युपरतसकलज्ञानरूद्धेन्द्रियस्य ।
आत्मन्यात्मानमेव व्यपगतकरणं पश्यतस्तत्त्वदृष्टया
शम्भोर्व: पातु शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्न: समाधि: ।। 1 ।।

अन्वय – पर्यंकग्रन्थिबन्धद्विगुणित भुजगाश्लेष संवीतजानो:, अन्त: प्राणावरोध व्युपरत सकल ज्ञान

रूद्धेन्द्रियस्य , तत्त्वदृष्टया, आत्मनि व्यपगतकरणं आत्मानम्, एव पश्यत: शम्भो: शून्येक्षण घटितलय ब्रह्मलग्न: समाधि: व: पातु: **।। 1 ।।**

अर्थ – पर्यंक नामक योगासन में सन्धि-स्थल पर बांधने से द्विगुणित सर्प के लपेटने से जिस (शिव) के घुटने (जानु) बंधे हुए हैं,(योगबल के द्वारा) प्राण वायु को भीतर ही रोक देने से जिसकी समस्त इन्द्रियां (वाह्य) ज्ञान से विरत तथा संयत (रूद्ध) हो गई है,जिसने यथार्थ ज्ञान के द्वारा इन्द्रिय व्यापार निरोधपूर्वक अपने भीतर आत्मा का दर्शन किया है, उस शिव की समाधि जो निराकार (ब्रह्म) के दर्शन में होने वाली एकाग्रता (लय) के कारण ब्रह्म में लगी हुई है – आप सब (सभासदों) की रक्षा करें **।। 1 ।।**

टिप्पणी- इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

अपि च -

पातुं वो नीलकण्ठस्य कण्ठ: श्यामाम्बुदोपम: ।
गौरीभुजलतां यत्र विद्युल्लेखेव राजते ।। 2 ।।

अन्वय – यत्र गौरीभुजलता विद्युल्लेखा इव राजते (स:) श्यामाम्बुदोपमा: नीलकण्ठस्य कण्ठ: व: पातु **।। 2 ।1**

अर्थ – जिसके(गले में) पार्वती की (गौरवर्ण) बाहुलता विद्युत पंक्ति के समान सुशोभित होती है, वह काले मेघों के समान शंकरजी का कण्ठ आप सब की रक्षा करे **।। 2 ।।**

टिप्पणी - इस श्लोक में उपमा एवं संसृष्टि अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

(नाद्यन्ते) (नान्दी के अन्त में)

सूत्रधार:- अलमनेन परिषत्कुतूहलविमर्दकारिणा परिश्रमेण । एवमहमार्यमिश्चान्यप्रणिपत्य विज्ञापयामि – यदिदं वयं मृच्छकटिकं नाम प्रकरणं प्रयोक्तुं व्यवसिता: । एतत्कवि: किल: -

सूत्रधार- सभा में उपस्थित लोगो की उत्कण्ठा को भंग करने वाले इस परिश्रम को बन्द करो। इस प्रकार आदरणीय एवं सभ्य आप लोगो को प्रणाम करके मैं सूचित करता हूँ कि – हम लोग मृच्छकटिक नामक इस प्रकरण का अभिनय करने के लिए उद्यत है। नि:सन्देह इसके रचयिता कवि

द्विरदेन्द्रगतिश्चकोरनेत्र: परिपूर्णेन्दुमुख: सुविग्रहश्च ।
द्विजमुख्यतम: कविर्बभूव प्रथित: शूद्रकं इत्यगाधसत्व: ।। 3 ।।

अन्वय – द्विरेन्द्रगति: चकोरनेत्र: परिपूर्णेन्दुमुख: सुविग्रह: च, द्विजमुख्यतम: अगाधसत्व: शूद्रक: प्रथित: कवि: बभूव **।। 3 ।।**

अर्थ – गजराज के समान चाल वाले, चकोर नामक पक्षी के समान नेत्र वाले, पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर मुख वाले, सुन्दर सुगिठत शरीर वाले, क्षत्रियों में सर्वश्रेष्ठ एवं अगाधबलशाली शूद्रक नामक विख्यात कवि हुए। **टिप्पणी** – इस श्लोक से प्ररोचना प्रारम्भ होती है।

प्ररोचना – **'उन्मुखीकरणं तत्र प्रशंसात: प्रयोजनम्'** कवि तथा काव्य की प्रशंसा के द्वारा सभा में स्थित लोगों को काव्य की ओर आकृष्ट करना प्ररोचना कहलाता है। इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा मालभारिणी छन्द है।

अपि च -

ऋग्वेदं सामवेदं गणितमथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां
ज्ञात्वा शर्वप्रसादाद्व्यपगततिमिरे चक्षुषी चोपलभ्य: ।
राजानं वीक्ष्य पुत्रं परमसमुदवेनाश्वमेधेन चेष्ट्वा
लब्ध्वा आयु: शताब्दं दशदिनसहितं शूद्रकोऽग्निं प्रविष्ट: ।। 4 ।।

अन्वय - ऋग्वेदं सामवेदं गणितम अथ कलां वैशिकीं हस्तिशिक्षां ज्ञात्वा शर्वप्रसादात् अपगततिमिरे चक्षुषी च उपलभ्य: पुत्रम् राजानं वीक्ष्य परमसमुदवेन अश्वमेधेन च दृष्टवा दशदिनसहितं शताब्दं आयु: च लब्ध्वा शूद्रक: अग्निम् प्रविष्ट: ।। 4 ।।

अर्थ- और भी -

(इस प्रकरण के रचयिता) शूद्रक कवि ऋग्वेद, सामवेद, गणित,नृत्यगीत आदि चौंसठ कलाओं, नाट्यशास्त्र एवं हस्तिसंचालन की शिक्षा को प्राप्त करके, भगवान शंकर की कृपा से अज्ञान रूपी अन्धकार से रहित (ज्ञानरूपी) नेत्रों को पाकर के, अपने पुत्र को राजा के रूप मे देखकर अर्थात् राजसिंहासन पर बैठाकर परम उन्नति करने वाले अश्वमेध यज्ञ को करके, सौ वर्ष दस दिन की आयु पाकर (अन्त में) अग्नि में प्रविष्ट हो गये।

टिप्पणी – इस श्लोक में स्रग्धरा छन्द है।

अपि च -

समरव्यसनी प्रमादशून्य: ककुदो वेदविदां तपोधनश्च ।
परवारणबाहुयुद्धलुब्ध: क्षितिपाल: किल शूद्रको बभूव ।। 5 ।।

अन्वय- शूद्रक: समरव्यसनी प्रमादशून्य: वेदविदाम् ककुद: तपोधन: च परवारणबाहुयुद्धलुब्ध: क्षितिपाल: बभूव किल ।। 5 ।।

अर्थ – शूद्रक युद्ध करने के प्रेमी, असावधानी रहित अर्थात् हमेशा सतर्क, वेद को जानने वालों में श्रेष्ठ, तपस्या को ही अपना धन समझने वाले अर्थात् तपस्वी, शत्रुओं के हाथियों के साथ बाहुयुद्ध करने के लालची अर्थात् इच्छुक तथा प्रजापालक राजा है ऐसी प्रसिद्धि है।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालाभरिणी छन्द है।

अस्यां च तत्कृतौ -

अवन्तिपुर्यां द्विजसार्थवाहो युवा दरिद्र: किल चारूदत्त: ।
गुणानुरक्ता गणिका च यस्य वसन्तशोभेव वसन्तसेना ।। 6 ।।

अन्वय – अवन्तिपुर्याम् द्विजसार्थवाह: दरिद्र: युवा चारूदत्त: किल यस्य गुणानुरक्ता वसन्तशोभा इव वसन्तसेना गणिका च (आसीत) ।। 6 ।।

अर्थ – और उनकी इस रचना (मृच्छकटिक) में -

उज्जयिनी नगरी में (पहले) व्यापारी-ब्राह्मण

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपेन्द्रवज्रा छन्द है।

तयोरिदं सत्सुरतोत्सवाश्रयं नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम् ।

खलस्वभावं भवितव्यतां तथा चकार सर्वं किल शूद्रको नृप: ।। 7 ।। (परिक्रम्यावलोक्य च) अये, शून्येयमस्मत्संगीतशाला: क्व तु गता: कुशीलवा: भविष्यन्ति) । (विचिन्त्य) आं, ज्ञातम् ।

अन्वय- इदम् तयो: सत्सुरतोत्सवाश्रयम् (अस्ति) शूद्रको नृप: (अत्र) नयप्रचारं व्यवहारदुष्टताम् खलस्वभावं तथा भवितव्यताम् (एतत्) सर्वम् चकार किल **।। 7 ।।**

अर्थ– (इस मृच्छकटिक नामक प्रकरण में) राजा शूद्रक ने उन दोनों (चारूदत्त और वसन्तसेना) के उत्तम विहार लीला पर आश्रित नीति के आचरण, दुर्जनें के चरित्र, तथा होनहार (भाग्य) इन सभी का वर्णन किया है **।। 7 ।।**

(घूमकर और चारो ओर देखकर) अरे, हमारी सगीतशाला तो खाली है , नट और अन्य अभिनयकर्ता कहाँ गये होगें । (विचारकर) अच्छा समझ गया ।

टिप्पणी – इस श्लोक में समासोक्ति अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है ।

शून्यमपुत्रस्य गृहं चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम् ।
मूर्खस्य दिश: शून्या: सर्व शून्यं दरिद्रस्य ।। 8 ।।

अन्वय – अपुत्रस्य गृहम् शून्यं यस्य सन्मित्रम् न अस्ति (तस्य गृहम्) चिरशून्यम् (अस्ति) मूर्खस्य दिशा: शून्य: (अस्ति) दरिद्र्रस्य सर्वम् शून्यम् (भवति) **।। 8 ।।**

अर्थ – पुत्रहीन व्यक्ति का घर सूना है ,जिस व्यक्ति के सच्चे मित्र नहीं है उसका भी घर सदा से सूना है , मूर्ख के लिए सभी दिशाएं सूनी है और निर्धन के लिए सब कुछ सूना है ।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं आर्या छन्द है ।

चारूदत्त:- (ऊर्ध्वमवलोक्य सनिर्वेदं नि:श्वस्य च)

यासां बलि: सपदि मद् गृहदेहलीनां
हंसैश्च सारसगणेश्च विलुप्तपूर्व: ।
तास्वैव संप्रति विरूढतृणांक रासु
बीजाअञ्जलि: पतति कीटमुखावलीढ: ।। 9 ।।

(इति मन्दं मन्दं परिक्रमोपविशति)

अन्वय – यासाम् मद् गृहदेहलीनां बलि: सपदि हंसै: च सारसगणै: विलुप्तपूर्व: संप्रति विरूढतृणांक रासु एष कीटमुखावलीढ: बीजाअञ्जलि: पतति **।। 9 ।।**

अर्थ – मेरे घर की जिन देहलियों पर रखे गये पूजा के अक्षत हंसो और सारसों के द्वारा समाप्त करदिये जाते थे, आज (निर्धनता की स्थिति में) (धन के अभाव में सफाई आदि न होने से) उगे हुए तृणांकुरों से युक्त उन्ही देहलियों पर कीड़ों के मुख द्वारा खाये हुए बीजों की अंजलि (अर्थात् चावल आदि) गिरती है। (ऐसा कहकर धीरे-धीरे घूम कर बैठ जाता है)

टिप्पणी – इस श्लोक में पर्याय अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है ।

(चारूदत्तो गृहीत्वा सचिन्त: स्थित:)

विदूषक: - भो: ! किमिदं चिन्त्यते ?

विदूषक:- अरे ! अरे क्या सोच रहे हो ?

(चारूदत्त ग्रहण करके चिन्तित हो जाता है)

चारूदत्त:- वयस्य

सुखं हि दु:खान्यनुभूय शोभते घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम् ।
सुखात्तु वो याति नरो दरिद्रतां धृत: शरीरेण मृत: स: जीवति ।। 10 ।।

अन्वय – घनान्धकारेषु दीपदर्शनम् इव दु:खानि अनुभूय सुखम् हि शोभते य: नर: सुखात्तु दरिद्रतां याति स: शरीरेण: धृत: अपि मृत: (इव) जीवति **।। 10 ।।**

अर्थ – चारूदत्त: - मित्र ! गहन अन्धकार में दीपक के प्रकाश की भाँति दु:खों का अनुभव करने के पश्चात् सुख शोभित होता है अर्थात् अच्छा लगता है । किन्तु जो मनुष्य सुख भोग करके दरिद्रता (निर्धनता) को प्राप्त होता है वह शरीर के रहते हुए भी मृत्यु के समान जीवन व्यतीत करता है (अर्थात जीवित होते हुए भी मरे हुए के समान होता है) ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा, अप्रस्तुत प्रशंसा तथा विरोधाभास अलंकार एवं वंशस्थ छन्द है ।

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों का अति संक्षेप में उत्तर दीजिये -

1-मृच्छकटिकम् के रचयिता कौन है ।

2- मृच्छकटिकम् के आरम्भ में किसका वर्णन है ।

3-शूद्रक किस शास्त्र में प्रवीण थे ।

4-चारूदत्त कौन था ।

1.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 11 से 20 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

विदूषक:- भो: वयस्य ! मरणादारिद्रयाद्वा क्वतस्ते रोचते ?

चारूदत्त: - वयस्य !

दारिद्रयान्मरणाद्वा मरणं मम रोचते न दारिद्रयम् ।
अल्पक्लेशं मरणं दारिद्रयमनन्तकं दु:खम् ।। 11 ।।

अन्वय – दारिद्रयात् मरणात् वा मम मरणं रोचते, मरणं अल्पक्लेशं (अस्ति) दारिद्रयम् अनन्तकम् दु:खम् (अस्ति) **।। 11 ।।**

विदूषक- हे मित्र ! मृत्यु और दरिद्रता में से तुम्हे क्या अच्छा लगता है ?

अर्थ- चारूदत्त- मित्र ! दरिद्रता और मृत्यु में से मुझे मृत्यु अच्छी लगती है दरिद्रता नही । मृत्यु कम कष्टों वाली होती है किन्तु दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु:ख है । अर्थात् दरिद्रता में जीवन पर्यन्त दु:ख भोगना पड़ता हे ।

टिप्पणी – इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार एवं आर्या छन्द है ।

विदूषक - भो: वयस्य ! अलं संतप्तेन प्रणयिजनसंक्रामितविभवस्य सुरजनोपीतशेषस्य प्रतिपचन्द्र: येव दरिद्रयोऽपि तेऽधिकतरं रमणीय: ।

विदूषक:- हे मित्र ! दु:ख करना व्यर्थ है प्रेमीजनों को सम्पत्ति दे डालने वाले आपकी निर्धनता भी देवों के द्वारा पीने से बचे हुए प्रतिपदा तिथि के चन्द्रमा की (क्षीणता की) भाँति अत्यधिक अच्छी लगती है ।

चारूदत्त:- वयस्य ! न ममार्थान्प्रति दैन्यम् । पश्य –

एत्तु मां दहति यद् गृहमस्मदीयं
क्षीणार्थपि अतिथय: परिवर्जयन्ति ।
संशुष्कसान्द्रमदलेखमिव भ्रमन्त:
कालात्यये मधुकरा: करिण: कपोलम् ।। 12 ।।

अन्वय- भ्रमन्त: मधुकर: कालात्यये संशुष्कसान्द्रमदलेखम् करिण: कपोलम् इव अतिथय: क्षीणार्थम् अपि (गृहम्) परिवर्जयन्ति एत्तु मां दहति ।। 12 ।।

चारूदत्त – मित्र ! धन नष्ट हो जाने के कारण से मुझे दु:ख नही है । देखो - मुझे यह बात व्यथित कर रही है कि हमारे घर को धन से रहित समझ कर अतिथि लोग इसका उसी प्रकार से परित्याग करते है जिस प्रकार (मद बहने के) समय के बीत जाने पर मँडराने वाले वाले भौंरे सूखी हुई गाढ़ी मद की धारा वाले हाथी के गण्डस्थल (कपोल) को त्याग देते हैं ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है ।

विदूषक:- भो: वयस्य ! एते खलु दास्यां पुत्रा: अर्थकल्पवतां वरदाभीत: इव गोपालदारका: अरण्ये यत्र यत्र न खाद्यन्ते तत्र तत्र गच्छन्ति ।

विदूषक- हे मित्र ! दासी के पुत्र, कलेवा (प्रात:कालीन जलपान) की भाँति (तुच्छ) ये धन वन मे बर्रे से डरे हुए ,गायों के चरवाहो की भाँति वहाँ वहाँ जाते हैं जहाँ खायें नहीं जाते ।

चारूदत्त:-

वयस्य !

सत्यं न मे विभवनाशकृतास्ति चिन्ता:
भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति ।
एत्तु मां दहति नष्टधनाश्रयस्य
यत्सौहृदादपि जना: शिथिलीभवन्ति ।। 13 ।।

अन्वय – सत्यम् मे चिन्ता: विभवनाशकृता: न अस्ति हि धनानि भाग्यक्रमेण भवन्ति (तथा) यान्ति तु एतत् माम् दहति यत् जना: नष्ट: धनाश्रयस्य सौहृदात् अपि शिथिलीभवन्ति **।। 13 ।।**

अर्थ - चारूदत्त – मित्र ! वस्तुत: मुझे धन के नष्ट हो जाने की चिन्ता नहीं है, क्योंकि भाग्य के अनुसार धन प्राप्त होता है और चला जाता है किन्तु यह बात मुझे जलाती है कि जिसका धनरूपी आश्रय नष्ट हो जाता है उसकी मित्रता से भी लोग शिथिल हो जाते हैं अर्थात् धनविहीन व्यक्ति के

मित्र भी उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं।

टिप्पणी - इस श्लोक में संकर अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

अपि च -

दारिद्रयाद्ध्रियमेति ह्रीपरिगत: प्रभ्रश्यते तेजसो
निस्तेजा: परिभूयते परिभवान्निर्वेदमापद्यते।
निर्विण्ण: शुचमेति शोकपिहितो बुद्धया परित्यज्यते
निर्बुद्धि: क्षयमेत्यहो निर्धनतां सर्वापदामास्पदम्॥ 14॥

अन्वय – (मनुष्य:) दारिद्रयात् ह्रियम् एति ह्रीपरिगत: तेजस: प्रभ्रश्यते,निस्तेजा: परिभूयते परिभवात् निर्वेदम् आपद्यते, निर्विण्ण: शुचम् एति शोकपिहित: बुद्धया परित्यज्यते निर्बुद्धि: क्षयम् एति अहो, निर्धनता सर्वापदाम् आस्पदम्॥ 14॥

अर्थ – और भी (मनुष्य) दरिद्रता से लज्जा को प्राप्त होता है, लज्जित व्यक्ति तेजरहित हो जाता है, निस्तेज तिरस्कृत हो जाता है, तिरस्कार से ग्लानि को प्राप्त होता है, ग्लानियुक्त शोक संतप्त होता है, शोकाकुल व्यक्ति बुद्धि (विवेक) के द्वारा त्याग दिया जाता है, अर्थात् शोकाकुल व्यक्ति विवेक को खो बैठता है और निर्बुद्धि नाश को प्राप्त होता है – अहो ! दरिद्रता समस्त आपत्तियों का जड़ है।

टिप्पणी – इस श्लोक में कारणमाला अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विदूषक:- भो वयस्य ! तमेवार्थकल्पवतं स्मृत्वालं संतापितेन।

विदूषक:- हे मित्र ! कलेवा(प्रात:कालीन जलपान) रूप उसी धन को याद कर दु:ख करना व्यर्थ है।

चारूदत्त:- वयस्य ! दारिद्रयं हि पुरूषस्य -

निवासश्चिन्ताया: परपरिभवो वैरमपरं
जुगुप्सा मित्राणां स्वजनजनविद्वेषकरणम्।
वनं गन्तुं बुद्धिर्भवति च कलत्रात्परिभवो
हृदिस्थ शोकाग्निर्न च दहति संतापयति च॥ 15॥

तद्वयस्य ! कृतो मया गृहदेवताभ्यो बलि:। गच्छ, त्वमपि चतुष्पदे मातृभ्यो बलिमुपहर।

अन्वय – हि दारिद्रयं पुरूषस्य चिन्ताया: निवास: परपरिभव: अपरम् वैरम् मित्राणाम् जुगुप्सा स्वजनजनविद्वेषकरणम् च कलत्रात् परिभव: (भवति अत:) वनम् गन्तुम् बुद्धि: भवति च हृदिस्थ शोकाग्नि: न दहति सन्तापयति च॥ 15॥

अर्थ - चारूदत्त – मित्र ! निर्धनता ही पुरूषों की चिन्ता का घर है, दूसरों के द्वारा किये जाने वाले अनादर का कारण है, दूसरी शत्रुता है, मित्रों की घृणा तथा अपने भाई बन्धुओं एवं अन्य लोगों के द्वेष का कारण है, पत्नी के द्वारा भी उसका तिरस्कार होता है। अत: (दरिद्र व्यक्ति की) वन में चले जाने की इच्छा होती है (अधिक क्या कहें) हृदय में स्थित शोकाग्नि एक बार ही जला नहीं डालती किन्तु सन्तप्त करती है (अर्थात् धीरे धीरे जला जला कर मारती है)॥

तो मित्र ! मैंने गृह देवताओं की बलि पूजा दे दी है। जाओ तुम भी चौराहे पर मातृ-देवियों को बलि(पूजा) चढ़ा आओ। **टिप्पणी** – इस श्लोक में संकर अलंकार एवं शिखरिणी छन्द है।

विदूषक: - न गमिष्यामि।

विदूषक: - मैं नहीं जाऊँगा।

चारूदत्त:- किमर्थम् ?

चारूदत्त:- किस लिए ?

विदूषक: - यत एवं पूज्यमानां अपि देवता न ते प्रसीदन्ति तत्कोगुणो देवेष्वर्चितेषु ?

विदूषक:- इस प्रकार विधिवत् पूजा करने पर भी देवता तुम्हारे ऊपर प्रसन्न नहीं होते तो उनकी पूजा करने से क्या लाभ अर्थात् उनमें ऐसा क्या गुण है ?

चारूदत्त:- वयस्य ! मा मैवम्, गृहस्थस्य नित्योऽयं विधि: ।

तपसा मनसा वाग्भि: पूजितां बलिकर्मभि: ।
तुष्यन्ति शमिनां नित्यं देवता: किं विचारितै: ।। 16 ।।

तद् गच्छ , मातृभ्यो: बलिमुपहर।

अन्वय - तपसा मनसा वाग्भि:, बलिकर्मभि:, पूजिता:, देवता:, शमिनां नित्यं तुष्यन्ति विचारितै: किम् ।। **16** ।।

अर्थ – चारूदत्त – मित्र ! ऐसा मत कहो। गृहस्थाश्रम में रहने वाले व्यक्तियों का यह नित्य कर्म है। तप, मन, वचनों एवं बलिकर्मो के द्वारा पूजित देवता शान्त चित्त वाले व्यक्तियों से हमेशा सन्तुष्ट रहते हैं। इसमें तर्क वितर्क करने से क्या लाभ ? तो जाओ मातृ-देवियों को बलि समर्पित कर दो।

टिप्पणी – इस श्लोक में अनुष्टुप छन्द है।

विदूषक:- भो: ! न गमिष्यामि ,अन्य: कोऽपि प्रयुज्यताम् । मम पुनर्ब्राह्मणस्य सर्वमेव विपरीतं परिणमति आदर्शगतेव छाया वामतो दक्षिणा दक्षिणतो वामा: । अन्यश्चैतस्यां प्रदोषवेलायामिह राजमार्गे गणिका विटाश्चेष्टा राजवल्लभाश्च पुरूषा: संचरन्ति। तस्मान्यमण्डूकलुब्धस्य कालसर्पस्य मूषिक इवाभिमुखापतितो वध्य इदानीं भविष्यामि।त्वमिह उपविष्ट: किं करिष्यसि ?

विदूषक:- जी, मैं नहीं जाऊँगा किसी दूसरे व्यक्ति को भेज दो। जिस प्रकार दर्पण में पड़ने वाले प्रतिबिम्ब बाँयें से दाहिनी ओर तथा दाँयें से बाँई ओर होती है ,उसी प्रकार मुझ बेचारे ब्राह्मण का सब कुछ विपरीत ही फल देता है। और दूसरा कारण यह है कि इस सन्ध्या काल में यहाँ सड़क पर वेश्याऐं,विट, चेट और राजा के स्नेहीजन (राजपाल) घूम रहे हैं। तो मैं, मेढ़क के लोभी काले सर्प के सामने आये हुए चूहे के समान इस समय वध्य हो जाऊँगा। (अर्थात् मार दिया जाऊँगा) तुम यहाँ बैठे हुए क्या करोगे।

चारूदत्त:- भवतु तिष्ठ, तावत् अहं समाधि निर्वर्तयामि।

चारूदत्त:- अच्छा , तब तक ठहरो। मैं समाधि समाप्त करता हूँ।

(नेपथ्ये) (नेपथ्य में) तिष्ठ वसन्तसेने ! तिष्ठ ।(तत: प्रविशति विटशकारचेटैरनुगम्यमाना वसन्तसेना)

अर्थ- रूको वसन्तसेना ! रूको (इसके बाद विट, शकार तथा चेट के द्वारा पीछा की जाती हुई चसन्तसेना प्रवेश करती है)

विट:- वसन्तसेने ! तिष्ठ तिष्ठ,

किं त्वं भयेन परिवर्तितसौकुमार्या
नृत्यप्रयोगविशदौ चरणौ क्षिपन्ती।
उद्विग्नचंचलकटाक्षविसृष्टदृष्टि
र्व्याधानुसारचकिता हरिणीव यासि ।। 17 ।।

अन्वय - भयेन परिवर्तितसौकुमार्या नृत्यप्रयोगविशदौ चरणौ क्षिपन्ती उद्विग्नचंचलकटाक्षविसृष्टदृष्टि त्वम् व्याधानुसार चकिता हरिणी इव किम् यासि ? ।। 17 ।।

अर्थ- विट - वसन्तसेने ! ठहर, ठहर, भय के कारण, सुकुमार, मन्द गति को त्याग देने वाली, नृत्यकला में निपुण चरणों को शीघ्रता से आगे बढ़ाती हुई , व्याकुल एवं चंचल कटाक्षों से दृष्टिपात करती हुई तुम शिकारी के द्वारा पीछा करने से चकित हुयी हरिणी के समान क्यों जा रही हो

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

शकार:- तिष्ठ,वसन्तसैनिके ! तिष्ठ,

किं यासि धावसि पलायसे प्रस्खलन्ती
वासु ! प्रसीद न मरिष्यसि तिष्ठ तावत्।
कामेन दह्यते खलु मे हृदयम् तपस्वि
अंगारराशिपतितमिव मांसखण्डम् ।। 18 ।।

अन्वय – (हे वसन्तसेने ! प्रस्खलन्ती किम्, यासि, धावसि, पलायसे हे वासु ! प्रसीद न मरिष्यसि तावत् तिष्ठ, अंगारराशिपतितम् मांसखण्डमिव तपस्वि मे हृदयम् कामेन खलु दह्यते।

शकार- वसन्तसेने रूको,रूको। लडखड़ाती हुई क्यों जा रही हो, दौड़ रही हो, भाग रही हो। बाले ! प्रसन्न होओ, मरोगी नहीं तनिक ठहरो, अंगारों के समूह पर गिरे हुए मांस के टुकड़े की भाँति मेरा बेचारा हृदय कामाग्नि के द्वारा जलाया जा रहा है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

चेट:- आर्ये तिष्ठ,तिष्ठ,

उत्त्रासिता गच्छसयन्तिकान्मम संपूर्णपक्षेव ग्रीष्ममयूरी।
अववल्गाति स्वामिभट्टारको मम वने गत: कुक्कुटशावक इव ।। 19 ।।

अन्वय- (त्वं) मम् अन्तिकात् सम्पूर्ण पक्षा ग्रीष्ममयूरी इव उत्त्रासिता गच्छसि मम स्वामिभट्टारक: वने गत: कुक्कटशावक: इव अववल्गाति।

अर्थ- चेट – आर्ये ! ठहरो, ठहरो, (तुम) मेरे पास से भयभीत हुई सम्पूर्ण पंखो वाली ग्रीष्म काल की मयूरी के समान जा रही हो मेरा स्वामी (शकार) वन में गये हुए मुर्गे के बच्चे के समान (तुम्हारे पीछे-पीछे) उतावली के साथ आ रहा है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

विट: - वसन्तसेने ! तिष्ठ, तिष्ठ ,

यासि बालकदलीव विकम्पमाना
रक्तांशुकं पवनलोलदशं वहन्ती।

रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलमुत्सृजन्ती
टंकेर्मन:शिलगुहेव विदार्यमाणा ।। 20 ।।

अन्वय – हे वसन्तसेने ! बालकदली इव विकम्पमाना पवनलोलदशम् रक्तांशुकम् वहन्ती टंकै: विदार्यमाणा मन:शिलगुहा इव रक्तोत्पलप्रकरकुड्मलम् उत्सृजन्ती किम् यासि ? **।। 20 ।।**

अर्थ - वसन्तसेने रूको,रूको ।

नवीन केले के वृक्ष के समान (भय से) काँपती हुई, वायु के द्वारा चंचल अंचल वाले लाल रेशमी वस्त्र को धारण करती हुई, टाँकी द्वारा काटी जाती हुई मन:शिला की कन्दरा(से निकलने वाली चिंगारियों) के समान (केशों में गुँथे हुए) रक्त कमलों की कलियों को (वेग से दौड़ने के कारण) बिखेरती हुई क्यों जा रही हो ?

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा तथा उपमा अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

निम्नलिखित में सत्य असत्य बताइये।

1. धनविहीन व्यक्ति के मित्र भी उसके प्रति उदासीन हो जाते हैं।
2. दरिद्रता कभी न समाप्त होने वाला दु:ख है।
3. वसन्तसेना का पीछा चारूदत्त कर रहा था।
4. निर्धन व्यक्ति का पत्नी के द्वारा भी तिरस्कार होता है।
5. विदूषक देवताओं की पूजा करना चाहता है।

1.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि राजा शूद्रक कौन थे और उनका व्यक्तित्व कैसा था। उन्होने मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण की रचना की। इस प्रकरण का नायक चारूदत्त एक गरीब ब्राह्मण है जो दरिद्रता से उत्पन्न दु:खों का वर्णन करता है तथा विट,शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई भयभीत वसन्तसेना के बारे में बता सकेगें। निर्धनता सबसे बड़ा अभिशाप है दरिद्र व्यक्ति के जीवन में सबकुछ सूना होता है, जीवन के इस वास्तविक सत्य से परिचित हो पायेगें।

1.6 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
विद्युल्लेखा	बिजली की रेखा
नीलकण्ठस्य	शिव की
द्विरदेन्द्र	गजराज
वेदविदाम्	वेद के जानने वालों में

अवन्तिपुर्याम्	उज्जयिनी नगरी में
गणिका	वेश्या
अपुत्रस्य	जिसके पुत्र न हो, पुत्रविहीन
विभवनाशकृता	धन के नाश से होने वाली
निर्विण्ण:	ग्लानियुक्त
निर्बुद्धि:	बुद्धिहीन
परिभव:	तिरस्कार
वाग्भि:	वचनों से
विकम्पमाना	काँपती हुई

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) राजा शूद्रक (2)राजा शूद्रक (3) हस्ति शास्त्र में (4)उज्जयिनी का ब्राह्मण
अभ्यास प्रश्न 2 – (1) सत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) असत्य

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

1.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक के 1 से 20 श्लोकों का सारांश निज शब्दों में लिखिए।
2.दरिद्र व्यक्ति के जीवन का वर्णन कीजिये।

इकाई 2 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 40 तक

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 30 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
2.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 31 से 40 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
2.9 उपयोगी पुस्तकें
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना:-

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के एक से बीस श्लोकों का अध्ययन किया और यह जाना कि चारूदत्त उज्जयिनी में रहने वाला एक गरीब ब्राह्मण है जो अत्यन्त गुणवान एवं दयालु है। उस नगर की गणिका उस के गुणों के कारण उस पर अनुरक्त है। उस वसन्तसेना का पीछा शकार और विट के द्वारा किया जा रहा है।

प्रस्तुत इकाई में आप 21 से 40 श्लोकों का अध्ययन करेगें। इन श्लोकों में शकार और विट से भयभीत भागती हुई वसन्तसेना का विविध उपमाओं के द्वारा सुन्दर चित्रण किया गया है तथा भयाकुल स्त्री की मनोदशा का वर्णन है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि शकार अत्यन्त अभिमानी, दुराग्रही एवं पापी है वह स्त्री का सम्मान नहीं करता है , वह विट से कहता है कि वह बहुत बहादुर है क्योंकि वह सैकड़ों स्त्रियों को मार सकता है। तथा वसन्तसेना की मनोदशा के बारे में बता पायेंगे।

2.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोकों की व्याख्या कर सकेंगे।
- गणिका के दस नामों से परिचित हो सकेंगे ।
- शकार के चरित्र की व्याख्या कर सकेंगे।
- विट के चरित्र को समझा पायेगें।
- तत्कालीन समाज में स्त्री की दशा का वर्णन कर सकेंगे।

2.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 21 से 30 तक

शकार:- तिष्ठ वसन्तसेने ! तिष्ठ -

मम मदनमनंगम् मन्मथं वर्धयन्ती
निशि च शयनके मम निद्रामाक्षिपन्ती।
प्रसरसि भयभीता प्रस्खलन्ती स्खलन्ती
मम वशमनुयाता रावणस्येव कुन्ती ॥ 21 ॥

अन्वय – मम मदनम्,अनंगम्,मन्मथम् वर्धयन्ती निशि शयनके च मम निद्राम् आक्षिपन्ती, त्वम् भयभीता प्रस्खलन्ती स्खलन्ती प्रसरसि (किन्तु) रावणस्य कुन्ती इव (त्वम्) मम वशम् अनुयाता ॥

अर्थ – मेरे मदन, अनंग,, मन्मथ (काम) को बढ़ाती हुई और रात्रि में शय्या पर मेरी निद्रा को भंग करती हुई (तुम) भयभीत होकर बार-बार लड़खड़ाती हुई भाग रही हो। किन्तु तुम उसी प्रकार मेरे वश में आ गयी हो जिस प्रकार रावण के वश में कुन्ती (आ गयी थी)।

टिप्पणी – 'रावणस्येव कुन्ती' इस वाक्य में हतोपमा अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

विट: - वसन्तसेने !

किं त्वं पदैर्मम पदानि विशेषयन्ती
व्यालीव यासि पतगेन्द्रभयाभिभूत:।
वेगादहं प्रविसृत: पवनं न रून्ध्यां
त्वन्निग्रहे तु वरगात्रि ! न मे प्रयत्न: ।। 22 ।।

अन्वय – हे वसन्तसेने ! पतगेन्द्रभयाभिभूत: व्याली इव पदै: मम पदानि विशेषयन्ती त्वम् किम् यासि ? वेगात् प्रविसृत: अहम् पवनम् न रून्ध्यां ? हे वरगात्रि ! तु त्वन्निग्रहे मे प्रयत्न: न **।। 22 ।।**

विट- पक्षीराज गरूड़ से भयभीत हुई नागिन के समान अपने पगों से मेरे पगों को अतिक्रान्त करती हुई तुम क्यों जा रही हो ? वेग से दौड़ता हुआ मैं क्या (अत्यन्त तीव्रगामी) वायु को भी नहीं रोक सकता ? अर्थात् अवश्य रोक सकता हूँ। किन्तु हे सुन्दरी ! मेरा प्रयत्न तुमको रोकने का नही है अर्थात् मैं जबरदस्ती तुमको रोकना नहीं चाहता।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

शकार – भाव, भाव -

एषा नाणकमोषिकामकशिका मत्स्याशिका लासिका
निर्नासा कुलनाशिका अवशिका कामस्य मंजूषिका।
एषा वेशवधू: सुवेशनिलया वेशांगना वेशिका
एतान्यस्या दश नामकानि मया कृतान्यद्यापि मां नैच्छति ।। 23 ।।

अन्वय - एषा , नाणकमोषिकामकशिका मत्स्याशिका लासिका निर्नासा कुलनाशिका अवशिका कामस्य मंजूषिका एषा वेशवधू: सुवेशनिलया वेशांगना वेशिका एतानि अस्या: दश नामकानि मया कृतानि (किन्तु) अद्य अपि (इयम्) माम् न इच्छति **।। 23 ।।**

शकार - भाव, भाव -उत्तम रत्न आदि चुराने वालों की कामाग्नि को शान्त करने वाली, मछली खाने वाली, नर्तकी, नासिकाहीन, अर्थात् अप्रतिष्ठित, कुल को नष्ट करने वाली, किसी के वश में न होने वाली, काम की पिटारी, वेश्यागामियों की स्त्री, सुन्दर वेश्यालय में निवास करने वाली, वेश्यालय की कामिनी वेश्या, इस प्रकार इसके ये दस नाम मैनें रखे हैं फिर भी यह मुझे नहीं चाहती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

विट: - **प्रसरसि भयविक्लवा किमर्थं प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा।**
विटजननखघट्टितेव वीणा जलधरगर्जितभीतसारसीव ।। 24 ।।

अन्वय- विटजननखघट्टितावीणाइव प्रचलितकुण्डलघृष्टगण्डपार्श्वा (त्वम्) जलधरगर्जितभीतसारसी इव भयविक्लवा किमर्थं – प्रसरसि **।। 24 ।।**

अर्थ – विट – विट जनों के नख से घृष्ट वीणा के समान,हिलने वाले कुण्डलों के बारम्बार स्पर्श से घृष्ट कपोलो वाली तुम बादलों के गर्जन से भयभीत सारसी की भाँति भयातुर होकर किस लिये भागी जा रही हो।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालोपमा अलंकार एवं पुष्पिताग्रा छन्द है।

शकार:-

झणझणमिति बहुभूषणशब्दमिश्रं किं द्रौपदीव पलायसे रामभीता ?
एष हरामि सहसेति यथा हनूमान्विश्वासोर्भगिनीमिव वा सुभद्राम् ।। 25 ।।

अन्वय – रामभीता द्रौपदी इव बहुभूषणशब्दमिश्रम् झणझणम् इति (कुर्वत:) किम् पलायसे यथा हनूमान् विश्वावसो: ताम् भगिनीम् सुभद्राम् इव एष: (अहम्) इति सहसा हरामि **।। 25 ।।**

अर्थ – शकार – राम से डरी हुयी द्रौपदी के समान, विविध आभूषणों के शब्द से मिश्रित झनझनाहट के साथ तुम क्यों भागी जा रही हो ? जिस प्रकार हनुमान ने विश्वावसु की उस (प्रसिद्ध) बहन सुभद्रा का अपहरण किया था, उसी प्रकार यह मैं भी बलपूर्वक तुम्हारा हरण करता हूँ।

टिप्पणी – इस श्लोक में वसन्ततिलका छन्द है।

चेट: - रमय च राजवल्लभं तत: खादिष्यसि मत्स्यमांसकम् ।
एताभ्यां मत्स्यमांसाभ्याम् श्यानो मृतकं न सेव्यते ।। 26 ।।

अन्वय – (हे वसन्तसेने) राजवल्लभम् रमय तत: मत्स्यमांसकम् च खादिष्यसि एताभ्यां मत्स्यमांसाभ्याम् श्यान: मृतकम् न सेव्यते **।। 26 ।।**

अर्थ – **चेट:-** हे वसन्तसेने ! राजा के अत्यन्त प्रिय (शकार) के साथ रमण करो, तब तुम मछली और माँस खाओगी। हम दोनों मछली और माँस के कारण (परितृप्त हुए शकार के) कुत्ते मृतक अर्थात् मरे हुए पशु-पक्षियों के माँस का सेवन नहीं करते हैं।

टिप्पणी – इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार तथा आर्या छन्द है।

विट: - भवति वसन्तसेने !

किं त्वं कटीतटनिवेशितमुद्वहन्ती
ताराविचित्ररूचिरं रशनाकलापम् ।
वक्त्रेण निर्मथितचूर्णमन:शिलेन
त्रस्ताद्भुतं नगरदैवतवत्प्रयासि ।। 27 ।।

अन्वय - त्वं कटीतटनिवेशितम् ताराविचित्ररूचिरं रशनाकलापम् उद्वहन्ती निर्मथितचूर्णमन:शिलेन वक्त्रेण (उपलक्षिता सती) नगरदैवतवत् त्रस्ताद्भुतं किम् प्रयासि **।। 27 ।।**

अर्थ – **विट** – मान्ये वसन्तसेने ! कटि प्रान्त में बँधी हुई मोतियों से अद्भुत अतएव मनोहर मेखला (करधनी) को धारण करती हुई, चूर्ण मनशिला को भी (अपने गुलाबी वर्ण से) तिरस्कृत करने वाले मुख से युक्त तुम नगर देवता की भाँति, भयविह्वलतापूर्वक क्यों भागी जा रही हो ?

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

शकार:- अस्माभिश्चण्डमभिसार्थमाणा वने श्रृगालीव कुक्कुरै: ।
पलायसे शीघ्रं त्वरितं सवेगं सवृन्तं मम हृदये हरन्ती **।। 28 ।।**

अन्वय – वने कुक्कुरै: श्रृगाली इव अस्माभि: चण्डम् अभिसार्थमाणा मम हृदयम् सवृन्तम् हरन्ती शीघ्रम् त्वरितम् सवेगम् पलायसे **।। 28 ।।**

अर्थ - शकार- जंगल में कुत्तों के द्वारा पीछा की जाती हुई श्रृगाली के समान हम लोगों के द्वारा तीव्र गति से पीछा की जाती हुई, मेरे हृदय को समूल हरण करती हुई तुम शीघ्र, तुरन्त और वेगपूर्वक भाग रही हो। **टिप्पणी** – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

वसन्तसेना – पल्लवक पल्लवक ! परभृतिके परभृतिके !

वसन्तसेना – पल्लवक पल्लवक ! परभृतिके परभृतिके !

शकार – (सभयम्) भाव भाव ! मनुष्य: मनुष्य: !

शकार – (भयपूर्वक) भाव ! मनुष्य मनुष्य !

विट:- न भेतव्यम् न भेतव्यम् !

विट:- डरो मत डरो मत !

वसन्तसेना – मालविके मालविके !

वसन्तसेना – मालविके मालविके !

विट:- (सहासम्) मूर्ख ! परिजनोंऽन्विष्यते।

विट:- (हँसीपूर्वक) मूर्ख ! भृत्य को खोज रही है।

शकार – भाव भाव !स्त्रियमन्वेषयति ?

शकार - भाव भाव ! क्या स्त्री को खोज रही है ?

विट:- अथ किम्।

विट – और क्या ?

शकार:- स्त्रीणां शतंमारयामि। शूरोऽहम्।

शकार – स्त्रियाँ तो सैकड़ों मार सकता हूँ। मैं बहादुर हूँ।

वसन्तसेना – (शून्यमवलोक्य) हा धिक् हा धिक् ! कथं परिजनोऽपि परिभ्रष्ट: । अत्र मयात्मा स्वयमेव रक्षितव्य: ।

वसन्तसेना – (सूना देखकर) हाय ! हाय ! क्या सेवक भी छूट गये। यहाँ मुझे स्वयं ही अपनी रक्षा करनी चाहिए।

विट:- अन्विष्यताम् अन्विष्यताम् !

विट:- खोजो खोजो।

शकार:- वसन्तसेनिके ! विलप विलप ! परभृतिका वा पल्लवकं वा सर्व च वसन्तमासम् मयाभिसार्यमाणां त्वां क: परित्रास्यते ?

शकार – वसन्तसेने ! विलाप कर विलाप कर, परभृतिका (कोयल) के लिए,पल्लवक (नूतन पत्ता) के लिए अथवा सम्पूर्ण वसन्त मास के लिए। मेरे द्वारा पीछा की जाती हुई तुमको कौन बचायेगा ?

किं भीमसेनो जमदग्निपुत्र: कुन्तीसुतो वा दशकन्धरो वा।
एषोऽहं गृहीत्वा केशहस्ते दु:शासनस्यानुकृतिं करोमि ।। 29 ।।
ननु प्रेक्षस्व, ननु प्रेक्षस्व -

असि: सुतीक्ष्णो वलितं च मस्तकं कल्पये शीर्षमुत मारयामि वा।

अलं तवैतेन पलायितेन मुमुर्षयों भवति न स खलु जीवति ।। 30 ।।

अन्वय – किम् जमदग्निपुत्रा भीमसेन वा, कुन्तीसुत: वा दशकन्धर: (त्वाम् रक्षिष्यति) एष: अहम् केशहस्ते (त्वाम्) गृहीत्वा दु:शासनस्य अनुकृतिम् करोमि **।। 29 ।।**

अन्वय – (मम) असि: सुतीक्ष्ण: (अस्ति) तव मस्तकम् च वलितम् (वर्तते) (अहम् तव) मस्तकम् कल्पये उत मारयामि वा तव एतेन पलायितेन अलम् य: मुमुर्षु: भवति स3 खलु न जीवति **।। 30 ।।**

अर्थ – क्या जमदग्नि का पुत्र भीमसेन(अथवा कुन्ती का पुत्र अथवा रावण (तुम्हारी रक्षा करेगा)?यह मैं तुम्हारे केशपाश को पकड़कर दु:शासन का अनुकरण करता हूँ।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

अर्थ - देखो, देखो – (मेरी) तलवार बहुत तेज है और तुम्हारा मस्तक बड़ा सुन्दर है, मैं तुम्हारा शिर काट डालूँगा अथवा मार डालूँगा। तुम्हारा इस प्रकार भागना व्यर्थ है क्योंकि जो मरने वाला होता है वह निश्चित रूप से जीवित नहीं रहता।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1- सत्य असत्य बताइए -

1. वसन्तसेना का पीछा चारूदत्त कर रहा था।
2. जो मरने वाला होता है वह निश्चित रूप से जीवित नहीं रहता यह कथन शकार का है।
3. वसन्तसेना शकार की पत्नी है।
4. वेश्याओं के दस नाम शकार ने रखे थे।
5. वसन्तसेना शकार और विट से भयभीत होकर भाग रही थी।

2.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 31 से 40 तक (मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

वसन्तसेना – आर्य ! अबला खल्वहम्।

वसन्तसेना – आर्य ! मैं तो अबला हूँ।

विट:- अत एव व्रियते।

विट- इसीलिए जीवित हो।

शकार:- अतएव न मार्यसे।

शकार- इसीलिए तुम नही मारी जा रही हो।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) कथं नु नमोऽप्यस्य भयमुत्पादयति।भवतु एव तावत् (प्रकाशम्) आर्य ! अस्मात्किमप्यलंकरणं तर्क्यते।

वसन्तसेना – (अपने आप) इनकी नम्रता भी कैसा भय उत्पन्न करती है। अच्छा तो ऐसा करूँ। (प्रकट रूप में) आर्य ! आप मुझसे कोई आभूषण लेना चाहते हैं।

विट:-शान्तं पापं शान्तं पापं। भवति वसन्तसेने ! न पश्यमोपनर्हत्युद्यानलता तत्कुतमलंकरणै:।

विट: ऐसा मत कहो। श्रीमति वसन्तसेने ! उद्यान की लता पुष्प तोड़ने के योग्य नही होती। इसलिए

आभूषणों को रहने दो।

वसन्तसेना – तत्किं खल्विदानीम्।

वसन्तसेना – तो इस समय आप मुझसे क्या चाहते हैं ?

शकार – अहं वरपुरूषमनुष्यो वासुदेव: कामयितव्य:।

शकार- मुझ पुरूषश्रेष्ठ मनुष्य वासुदेव की (तुम्हें) कामना करनी चाहिए।

वसन्तसेना – (सक्रोधम्) शान्तं पापं ! अवेहि अनर्हं मन्त्रयसि।

वसन्तसेना – (क्रोधपूर्वक) शान्त शान्त ! दूर हटो अशिष्ट बाते कहते हो।

विट:- (स्वगतम्) अये, कथं शान्तमित्यभिहिते श्रान्त इत्यवगच्छति मूर्ख: ? (प्रकाशम्) वसन्तसेने ! वेशवासविरूद्धमभिहितं भवत्या। पश्य -

तरूणजनसहायश्चिन्त्यतां वेशवासो
विगणय गणिका त्वमंमार्गजाता लतेव।
वहसि हि धनहार्यं पुण्यभूतं शरीरं
सममुपचरं भद्रे ! सुप्रियं वाप्रियं वा ।। 31 ।।

अन्वय- वेशवास: तरूणजनसहाय: चिन्त्यताम् त्वं मार्गजाता लता इव गणिका (इति), विगणय हि पुण्यभूतं धनहार्यं शरीरम् वहसि (अत:) हे भद्रे ! सुप्रियम् वा अप्रियम् वा समम् उपचर **।। 31 ।।**

अर्थ – **विट:-** (अपने आप) अरे ! यह मूर्ख किस प्रकार से 'शान्त' ऐसा कहे जाने पर 'श्रान्त' (थका हुआ) समझ रहा है। (प्रकट रूप से) वसन्तसेने ! आपने यह बात वेश्यालय के जीवन के विरूद्ध कही है (अर्थात् आपने यह बात वेश्याजन के विरूद्ध कही है)। देखो - वेश्यालय के जीवन (वास) को युवकों की सहायता पर आश्रित समझों। सोचो, तुम मार्ग में उत्पन्न हुई लता के समान वेश्या हो। तुम बाजार में बेंची जाने वाली वस्तु के समान, धन के द्वारा ग्रहण करने योग्य शरीर धरण करती हो। अत: हे भद्र स्त्री ! प्रिय और अप्रिय दोनों के साथ समान व्यवहार करो। इस श्लोक में उपमा एवं काव्यलिंग अलंकार तथा मालिनी छन्द है।

अपि च -
वाप्यां स्नाति विचक्षणो द्विजवरो मूर्खोऽपि वर्णाधम:
फुल्लां नाम्यति वायसोऽपि हि लतां यानामिता बर्हिणा।
ब्रह्मक्षत्रविशंस्तरन्ति च ययां नावां तयैवेतरे
त्वं वापीव लतैव नौरिव जनं वेश्यासि सर्वं भज ।। 32 ।।

अन्वय – विचक्षण: द्विजवर: वर्णाधम: मूर्ख: अपि वाप्याम् स्नाति या बर्हिणा नामिता फुल्लाम् (ताम्) लताम् वायस: अपि नाम्यति हि यया नावां ब्रह्मक्षत्रविंश: तरन्ति तया एव इतरे च त्वम् वेश्या असि (अत:) वापी इव लता इव नौ: इव सर्वम् जनम् भज **।। 32 ।।**

अर्थ –और भी विद्वान ब्राह्मण तथा नीच जाति वाला मूर्ख भी एक बावली में स्नान करता है। जो लता पहले मयूर के द्वारा बैठकर झुकायी गयी थी उसी फूली हुई लता को (उस पर बैठकर) कौवा भी

झुका देता है।जिस नाव से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य पार उतरते हैं उसी से दूसरे लोग भी(वर्णाधम भी)।तुम वेश्या हो अत: बावली, लता और नाव की भाँति सभी लोगो को एक समान स्वीकार करो।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालोपमा एवं काव्यलिंग अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

वसन्तसेना – गुण: खल्वनुरागस्य कारणम्, न पुनर्बलात्कार:।

वसन्तसेना – गुण ही अनुराग का कारण होता है, न कि बलात्कार।

शकार – भाव भाव ! एषा गर्भदासी कामदेवायतनोद्यामात्प्रभृति यस्य दरिद्र चारूदत्तस्यानुरक्ता न मां कामयते। वामतस्तस्य गृहम्। यथा तव मम च हस्तान्नैषा परिभ्रश्यति तथा करोतु भाव:।

शकार – भाव ! भाव! जन्म से ही दासी यह वेश्या कामदेवायतन् उद्यान में जाने से लेकर उस दरिद्र चारूदत्त से प्रेम करने लग गयी है और मुझे नही चाहती है। बाँयी ओर उसका घर है। ऐसा उपाय कीजिए कि जिससे यह हमारे और तुम्हारे हाथ से निकल न जाय।

विट: - (स्वगतम्) यदेव परिहर्तव्यं तदेवोदाहरति मूर्ख:। कथं वसन्तसेनार्यचारूदत्तमनुरक्ता ?सुष्ठु खल्विदमुच्यते – 'रत्नं रत्नेन संगच्छते' इति। तद् गच्छत किमनेन मूर्खेण। (प्रकाशम्) काणेलीमात: ! वामतस्तस्य सार्थवाहस्य गृहम् ?

विट:- (अपने आप) यह मूर्ख वही बात कह रहा है जो नही कहनी चाहिए। क्या वसन्तसेना आर्य चारूदत्त से प्रेम करती है ? वस्तुत: यह ठीक ही कहा गया है कि – 'रत्न रत्न के ही साथ संयुक्त होता है अर्थात् योग्य का मेल योग्य से ही होता है'।तो जाने दो इस मूर्ख से क्या लाभ ? (प्रकट रूप मे) काणेलीपुत्र ! उस सार्थवाह चारूदत्त का घर बाँयी ओर है ?

शकार – अथ किम् ? वामतस्तस्य गृहम् ?

शकार – और क्या ? उसका घर बाँयी ओर है ?

वसन्तसेना - (स्वगतम्) आश्चर्यम् वामतस्तस्य गृहमिति यत्सतयम् अपराध्यतापि दुर्जनेनोपकृतम् , येन प्रियसंगम: प्रापित:।

वसन्तसेना – (अपने आप) आश्चर्य ! यदि सचमुच बाँयी ओर उसका घर है तो अपराध करते हुए भी इस दुष्ट ने उपकार किया है, जिसने प्रिय के साथ समागम तो प्राप्त कराया है।

शकार - – भाव ! भाव ! बलीयसि खल्वन्धकारे माषराशिप्रविष्टेन मसीगुटिकां दृश्यमानैव प्रनष्टा वसन्तसेना।

शकार - भाव ! भाव ! इस गहन अन्धकार में उड़द की ढेर में गिरी हुई स्याही की टिकिया के समान देखते ही देखते वसन्तसेना अदृश्य हो गयी।

विट: - अहो, बलवानन्धकार:। तथा हि -

आलोकविशाला मे सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना।
उन्मीलितापि दृष्टिर्निमीलितेवान्धकारेण ।। 33 ।। अपि च –
लिम्पतीव तमोऽगांनि वर्षतीवाञ्जनं नभः ।असत्यपुरूषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता ।। 34 ।।

अन्वय - आलोकविशाला मे दृष्टि: सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना (जाता) उन्मीलितापि (दृष्टि) अन्धकारेण निमीलिता इव (भवति) **।। 33 ।।**

अन्वय – तम: अंगानि लिम्पति इव नभ: अंजनम् वर्षति इव दृष्टि: असत्पुरूषसेवा इव विफलताम् गता **।। 34 ।।**

विट – अहो ! प्रबल अन्धकार है, क्योंकि - प्रकाश में दूर तक देखने वाली मेरी दृष्टि एकाएक अन्धकार में प्रवेश करने से अवरूद्ध हो गयी है। खुली हुई भी मेरी आँखें अन्धकार के द्वारा बन्द सी कर दी गयी है।

और भी - अन्धकार अंगों को लिप्त सा कर रहा है , आकाश मानों काजल की वृष्टि कर रहा है। मेरी दृष्टि दुष्ट मनुष्यों की सेवा की भाँति निष्फल हो गयी है।

टिप्पणी –श्लोक संख्या 33 में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं आर्या छन्द है। श्लोक संख्या 34 में यमक और अनुप्रास तथा उपमा एवं उत्प्रेक्षा की संसृष्टि है तथा अनुष्टुप छन्द है।

शकार – भाव ! भाव ! अन्विषयामि वसन्तसेनिकाम्।

शकार – भाव ! भाव ! वसन्तसेना को खोज रहा हूँ।

विट: - काणेलीमात: ! अस्ति किंचिचिह्नं यदुपलक्षयसि।

विट:- काणेली के पुत्र ! कोई चिह्न है, जिसके सहारे तुम वसन्तसेना को ढूँढ रहे हो ?

शकार – भाव भाव !किमिव ?

शकार – भाव भाव ! कैसा चिह्न ?

विट:- भूषणशब्दं सौरभ्यानुविद्धं माल्यगन्धं वा।

विट:- आभूषणों की खनखनाहट अथवा सुंगन्धित माला की गन्ध ?

शकार:- श्रृणोमि माल्यगन्धं अन्धकारपूरितया पुनर्नासिकाया न सुव्यक्तं पश्यामि भूषणशब्दम्।

शकार - माला की गन्ध तो सुन रहा हूँ किनतु नाक के अन्धकार से पूर्ण हो जाने के कारण आभूषणों के शब्द को स्पष्ट नहीं देख रहा हूँ।

विट:- (जनान्तिकम्) वसन्तसेने !

कामं प्रदोषतिमिरेण दृश्यसे त्वं
सौदामिनीव जलदोदरसंधिलीना।
त्वां सूचयिष्यति तु माल्यसमुद्भवोऽयं
गन्धश्च भीरू ! मुखराणि च नूपुराणि ।।35।।

अन्वय- हे वसन्तसेने ! जलदोदरसंधिलीना सौदामिनी इव कामम् त्वम् प्रदोषतिमिरेण न दृश्यसे तु हे भीरू ! माल्यसमुद्भव: अयम् गन्ध: त्वाम् सूचयिष्यति च मुखराणि नूपुराणि च (सूचयिष्यन्ति) ।। 35।।

विट: - (जनान्तिक) हे वसन्तसेने ! बादलो के भीतर सन्धि-स्थल में छिपी हुई बिजली के समान यद्यपि तुम सांयकालीन अन्धकार के कारण नहीं दिखलायी पड़ रही हो,परन्तु हे भीरू ! माला से निकली हुई सुगन्ध तथा शब्द करने वाले नुपुर तुम्हें सूचित कर देगें अर्थात् तुम्हारा पता बता देगें।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

जनान्तिक – जब एक पात्र अपने हाथ की तीन अंगुलियाँ उठाकर तथा अनामिका अंगुली को टेढ़ी

किये हुए अन्य लोगो से छुपाकर किसी एक पात्र से कुछ कहता है, तो वह जनान्तिक कहलाता है।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) श्रुतं गृहीतं च (नाट्येन नूपुरायुत्सर्य माल्यानि चापनीय किंचित्परिक्रम्य हस्तेन परामृश्य)। अहो ! भित्तिपरामर्शसूचितं पंचद्वारकं खल्वेतत्। जानामि च संयोगेन गेहस्य संवृत्तं पञ्चद्वारकं।

वसन्तसेना - (अपने आप) सुना और मतलब भी समझ लिया (अभिनय से नूपुरों को उतार कर और मालाओं को फेंक कर, कुछ घूम कर तथा हाथ से छूकर) अहो ! दीवार के छूने से पता चलता है कि यह अवश्य ही बगल का दरवाजा है, और छूने से लगता हे कि घर का यह पंचद्वार (खिड़की) बन्द है।

चारूदत्त: – वयस्य ! समाप्तजपोऽस्मि। तत्साम्प्रतं गच्छ। मातृेभ्यो बलिमुपहर।

चारूदत्त:- मित्र ! मैं जप समाप्त कर चुका। तो अब जाओ, मातृ-देवियों को बलि चढ़ा आओ।

विदूषक:- भो न गमिष्यामि।

विदूषक:- अरे मैं नहीं जाऊँगा।

चारूदत्त:- धिक्कष्टम् -

दारिद्रयात्पुरूषस्य बान्धवजनो वाक्ये न संतिष्ठते
सुस्निग्धा विमुखीभवन्ति सुहृद: स्फारीभवन्त्यापद:।
सत्त्वं ह्रासमुपैति शीलशशिन: कान्ति: परिम्लायते
पापं कर्मं च यत्परैरपि कृतं तत्तस्य संभाव्यते॥ 36॥

अन्वय - दारिद्रयात् बान्धवजन: पुरूषस्य वाक्ये न संतिष्ठते, सुस्निगधा सुहृद: विमुखी भवन्ति, आपद: स्फारी भवन्ति, सत्त्वं ह्रासं उपैति, शीलशशिन: कान्ति: परिम्लायते, पापम् कर्मं परै: अपि कृतम् तत् तस्य संभाव्यते॥ 36॥

अर्थ - दरिद्रता के कारण बन्धु लोग भी निर्धन पुरूष के कहने में नहीं रहते। अत्यन्त स्नेही मित्र भी विमुख हो जाते हैं और आपत्तियाँ बढ़ जाती है। बल क्षीण हो जाता है, चरित्र रूपी चन्द्रमा की कान्ति धुँधली हो जाती है, कहाँ तक कहा जाय, जो दूसरे व्यक्तियों के द्वारा भी किया गया पाप कर्म है वह उसी का किया हुआ समझा जाता है।

टिप्पणी – इस श्लोक में रूपक अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

अपि च -

संगं नैव हि कश्चिदस्य कुरूते संभाषते नादरात्
संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिनां सावज्ञमालोक्यते।
दूरादेव महाजनस्य विहरत्यल्पच्छदो लज्जया
मन्ये निर्धनतां प्रकाममपरं षष्ठं महापातकम्॥ 37॥

अन्वय – हि कश्चित् अस्य संगम् न एव कुरूते आदरात् न संभावयते उत्सवेषु धनिनाम् गृहम् सम्प्राप्ता: सावज्ञम् आलोक्यते अल्पच्छद: (दरिद्र:) लज्जया महाजनस्य दूरात् एव विहरति (अत: अहं) मन्ये निर्धनता अपरम् प्रकामम् षष्ठं महापातकम् अस्ति॥ 37॥

अर्थ – और भी - कोई भी व्यक्ति इसका (निर्धन का) साथ नहीं करता है। न आदर से (इसके साथ) बोलता है। उत्सव (विवाह आदि) के अवसर पर (यदि निर्धन) धनिक के घर पहुँच जाता है तो वहाँ भी वह लोगों के द्वारा अनादर की दृष्टि से देखा जाता है। (निर्धन व्यक्ति) अल्प वस्त्र वाला होने के कारण लज्जावश बड़े लोगों से दूर होकर ही चलता है अर्थात् दूर ही रहता है। इसलिए मैं मानता हूँ कि दरिद्रता एक प्रबल छठा महापाप है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है। अपि च -

दारिद्रय ! शोचामि भवन्तमेवमस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा।
विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये ममेति चिन्ता क: गमिष्यसि त्वम् ।। 38 ।।

अन्वय – हे दारिद्रय ! भवन्तम् एवम् शोचामि (यत्) अस्मच्छरीरे सुहृद् इति उषित्वा मयि मन्दभाग्ये विपन्नदेहे (सति) त्वं क: गमिष्यसि इति मम चिन्ता अस्ति **।। 38 ।।**

अर्थ – और भी – हे दारिद्रय ! तुम्हारे विषय में मुझे यही चिन्ता है कि मेरे शरीर में मित्र के समान निवास करके मुझ अभागे के मर जाने पर तुम कहाँ जाओगे।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

विदूषक:-(सवैलक्ष्यम्) भे वयस्य ! यदि मया गन्तव्यम् तदेयापि मम सहायिनी रदनिका भवतु।

विदूषक:- (लज्जापूर्वक)हे मित्र ! यदि मुझे जाना ही है तो यह रदनिका भी मेरे साथ चलें।

चारूदत्त:- रदनिके ! मैत्रेयमनुगच्छ।

चारूदत्त:- रदनिके ! मैत्रेय के साथ जाओ।

चेटी – यदार्य आज्ञापयति।

चेटी – जैसी आर्य की आज्ञा।

विदूषक:- भवति रदनिके ! गृहाण बलिं प्रदीपं च। अहमपावृत्तं पक्षद्वारकं करोमि।

विदूषक:- हे रदनिके ! बलि और दीपक को पकड़ो। मैं पक्षद्वार (खिड़की) को खोलता हूँ।

वसन्तसेना–पटान्तेन निर्वाप्य प्रविष्टा ममाभ्युपपत्तिनिमित्तमिवापावृतं पक्षद्वारकम् । तद्यावत्प्रविशामि।(दृष्टवा) हा धिक् हा धिक्, कथं प्रदीप:।

वसन्तसेना – मानो मुझ पर दया करने के लिए बगल का द्वार (खिड़की) खुल गया है। तो जब तक प्रवेश करती हूँ। (देखकर) हाय हाय, क्या दीपक (जल रहा) है।

चारूदत्त:- मैत्रेय ! किमेतत् ?

चारूदत्त:- मैत्रेय ! यह क्या है ?

विदूषक:- अपावृत्तपक्षद्वारेण निर्वापित: प्रदीप: । भवति रदनिके ! निष्क्रामं त्वं पक्षद्वारकेण । अहमप्यभ्यन्तरचतु:शालात: प्रदीपं प्रज्वाल्यागच्छामि। (इति निष्क्रान्त:)

विदूषक:- पक्षद्वार के खुलते ही हवा के झोंके से दीपक बुझा दिया गया।

हे रदनिके ! तुम पक्षद्वार से बाहर चलो। मैं भी भीतरी चतु:शाला से दीपक जलाकर आ रहा हूँ।(निकल जाता है) **शकार:-** भाव भाव ! अन्वेष्यामि वसन्तसेनिकाम् ।

शकार:- भाव भाव ! मैं वसन्तसेना को ढूँढ रहा हूँ।

विटः- अन्विष्यतामन्विष्यताम्।

विटः- ढूँढिये, ढूँढिये।

शकारः- (तथा कृत्वा) भाव भाव ! गृहीत्वा गृहीत्वा।

शकारः- (खोजकर) भाव भाव ! पकड़ ली गयी, पकड़ ली गयी।

विटः- मूर्ख ! नन्वहम्।

विटः - मूर्ख ! (यह तो) मैं हूँ।

शकारः- इतस्तावद्भूत्वा एकान्ते भावस्तिष्ठतु। पुनरन्विष्य चेटं गृहीत्वा ,भाव भाव ! गृहीतां गृहीतां।

शकारः- तो आप इधर होकर एकान्त में खड़े रहे। फिर ढूँढु कर और चेट को पकड़कर, भाव भाव ! पकड़ ली गयी, पकड़ ली गयी।

चेटः- भट्टारक ! चेटोऽहम्।

चेटः- स्वामी ! यह तो मैं (चेट) हूँ।

शकारः- इतो भाव: इतश्चेट: । भावश्चेट: चेटो भाव: युवां तावदेकान्ते तिष्ठतम् । (पुनरन्विष्य रदनिकां केशेषु गृहीत्वा) भाव भाव ! साम्प्रतं गृहीतां वसन्तसेनिकाम् ।

शकारः- इशर भाव(विट) उधर चेट। भाव-चेट, चेट-भाव। तुम दोनों तो एकान्त में खडे रहो (फिर खोजकर और रदनिका का केश पकड़कर) भाव भाव ! अब वसन्तसेना पकड़ ली गयी।

अन्धकारे पलायमाना माल्यगान्धेन सूचिता।
केशवृन्दे परामृष्टां चाणक्येनेव द्रौपदी ।। 39 ।।

अन्वय- अन्धकारे पलायमाना, माल्यगन्धेन सूचिता (वसन्तसेना) चाणक्येन द्रौपदी इव केशवृन्दे परामृष्टां।

अर्थ- अन्धकार में भागती हुई माला की गन्ध से सूचित 'वसन्तसेना' मेरे द्वारा उसी प्रकार प्रकार केशों से पकड़ ली गयी है जैसे 'चाणक्य' के द्वारा 'द्रौपदी'।

टिप्पणी – इस श्लोक में हतोपमा अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है।

विटः- एषासि वयसो दर्पात्कुलपुत्रानुसारिणी।
केशेषु कुसुमाढयेषु सेवितव्येषु कर्षिता ।। 40 ।।

अन्वय – वयस: दर्पात् कुलपुत्रानुसारिणी एषा त्वम् कुसुमाढयेषु सेवितव्येषु केशेषु कर्षिता असि **।। 40 ।।**

अर्थ- विट- युवावस्था के अहंकार से कुलीन पुत्र (चारूदत्त) का अनुगमन करने वाली यह (तुम) फुलों से सजे हुए सेवा करने के योग्य बालों से पकड़ कर खींची जा रही हो।

टिप्पणी – इस श्लोक में अनुष्टुप छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 2 - निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए -

1- दारिद्रय ! शोचामि भवन्तमेव
मस्मच्छरीरे सुहृदित्युषित्वा।
विपन्नदेहे मयि मन्दभाग्ये

ममेति चिन्ता क: गमिष्यसि त्वम् ।।

2- अन्धकारे पलायमाना माल्यगान्धेन सूचिता ।
केशवृन्दे परामृष्टां चाणक्येनेव द्रौपदी ।।

2.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन से आपने यह जाना कि किस प्रकार विट एवं शकार के द्वारा पीछा की जाती हुई वसन्तसेना भयभीत होकर भागती चली जा रही थी और वह उनसे बचने के लिए अनजाने में चारूदत्त के घर में छिप जाती है । इधर चारूदत्त विदूषक से बलिपूजा करने के लिये कहता है विदूषक के द्वारा पूजा के लिए मना करने पर वह कहता है कि दरिद्रता सबसे बड़ा छठा महापाप है दरिद्र व्यक्ति का कोई साथ नहीं देता है । तब विदूषक रदनिका के साथ पूजा के लिये जाता है और दीपक के बुझ जाने पर रदनिका से कहता है कि रदनिके ! तुम पक्षद्वार से बाहर चलो । मैं भी भीतरी चतु:शाला से दीपक जलाकर आ रहा हूँ। इधर शकार ने वसन्तसेना के भ्रम में एक बार विट,चेट और चारूदत्त की सेविका रदनिका को पकड़ लेता है और प्रसन्न होकर कहता है कि वसन्तसेना पकड़ ली गयी है।

2.6 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
वेशवास:	वेश्यालय का निवास
द्विजवर:	ब्राह्मण
उन्मीलिता	खुली हुई
निमीलिता	बन्द

तम:	अन्धकार
दारिद्रयात्	दरिद्रता के कारण
अल्पच्छद:	अल्प वस्त्र वाला
सवैलक्ष्यम्	लज्जापूर्वक
वातेन	वायु से
निर्वासिता:	बुझा दिया गया

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 -

(1) असत्य (2) सत्य (3) असत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2 - प्रश्न 1 व 2 का उत्तर इकाई में देखें

2.8 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

2.9 उपयोगी पुस्तकें :-

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- मृच्छकटिकम् के प्रथम अंक के 21 से 40 श्लोकों का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2- भयभीत वसन्तसेना का वर्णन कीजिए।

इकाई 3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 58 तक

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 50 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
3.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 51 से 58 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)
3.5 सारांश
3.6 शब्दावली
3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
3.9 उपयोगी पुस्तकें
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:-

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के 21 से 40 श्लोकों का अध्ययन किया और जाना शकार अत्यन्त अभिमानी, दुराग्रही एवं पापी है वह स्त्री का सम्मान नहीं करता है , वह विट से कहता है कि वह बहुत बहादुर है क्योंकि वह सैकड़ों स्त्रियों को मार सकता है। तथा शकार से भयभीत वसन्तसेना की मनोदशा के बारे में जाना।

प्रस्तुत इकाई में आप 41 से 58 श्लोंको का अध्ययन करेंगे। शकार रदनिका को वसन्तसेना समझ कर पकड़ लेता है और कहता है कि अब तुमको ईश्वर भी नहीं बचा सकेंगे। विट शकार से कहता है कि यह आवाज वसन्तसेना की नहीं है।इधर विदूषक रदनिका को शकार द्वारा पकड़ा हुआ देखकर कहता है कि अरे राजश्यालक(राजा के साले), नीच मनुष्य ! यह उचित नही है। यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है। जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है। विट यह जानकर कि यह चारूदत्त की सेविका है, वह विदूषक से क्षमा मांग लेता है। वसन्तसेना चारूदत्त से वार्तालाप के पश्चात् शकार से बचने के लिए अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेंगे कि चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है इसीलिए शकार के द्वारा रदनिका को पकड़े जाने पर वह विदूषक से क्षमा माँगता है। वसन्तसेना अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

3.2 उद्देश्य :-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्लोंको में प्रयुक्त अलंकार एवं छन्द का नाम बता सकेगे।
- चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है यह बता सकेंगे।
- वसन्तसेना अपना विश्वास चारूदत्त पर प्रकट करती है और अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है इसकी व्याख्या कर सकेंगे।

3.3 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 41 से 50 तक

(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

शकार:- एषासि वासु शिरसि गृहीता केशेषु बालेषु शिरोरूहेषु।
आक्रोश विक्रोश लपाधिच्चण्डं शंभुं शिवं शंकरमीश्वरं वा ।। **41** ।।

अन्वय – हे वासु ! एषा (त्वम्) शिरसि केशेषु बालेषु शिरोरूहेषु गृहीता असि (सम्प्रति) आक्रोश विक्रोश वा शम्भुम् शिवम् शंकरम् ईश्वरम् अधिचण्डम् लप **।। 41 ।।**

अर्थ – हे बाले ! यह तुम शिर के बालों, केशों, शिरोरूहों के माध्यम से पकड़ ली गयी हो अर्थात् तुम्हारे शिर के बाल पकड़ में आ गये हैं, अब तुम गाली दो चिल्लाओ शम्भु, शिव, शंकर अथवा ईश्वर को जोर से पुकारो (हमें किसी से भय नहीं है)।

टिप्पणी – इस श्लोक में इन्द्रवज्रा छन्द है।

रदनिका – (सभयम्) किमार्यमिश्रैर्व्यवसितम् ?

रदनिका – (भयपूर्वक) आप ने यह क्या किया ?

विटः - काणेलीमातः ! अन्य एवैष स्वरसंयोगः।

विटः- काणेली केपुत्र ! यह स्वर तो दूसरा सा लगता है अर्थात् यह वसन्तसेना की आवाज नहीं है।

शकारः- भाव भाव ! यथा दधिभक्तलुब्धायाः मार्जारिकायाः स्वरपरिवृत्तिर्भवति तथा दास्याः पुत्र्या स्वरपरिवृत्तिः कृता।

शकारः- भाव भाव ! जिस प्रकार दही भात की लोभी बिल्ली के स्वर में परिवर्तन हो जाता है उसी प्रकार दासी की पुत्री इस (वसन्तसेना) ने भी स्वर में परिवर्तन कर लिया है।

विटः- कथं स्वरपरिवर्तः कृतः ? अहो चित्रम् अथवा किमत्र चित्रम् ?

इयं रंगप्रवेशेन कलानां चोपशिक्षया।
वञ्चनापण्डितत्वेन स्वरनैपुण्यमाश्रिता।। 42 ।।

अन्वय – इयम् रंगप्रवेशेन कलानाम् उपशिक्षयावञ्चनापण्डितत्वेन च स्वरनैपुण्यम् आश्रिता **।। 42 ।**

अर्थ – **विट** - क्या स्वर में परिवर्तन कर लिया?अहो आश्चर्य है अथवा इसमें आश्चर्य ही क्या है ?

इस 'वसन्तसेना' ने नाटयशाला में प्रवेश एवं कलाओं की शिक्षा के द्वारा (दूसरो को) ठगने में कुशलता प्राप्त कर लेने के कारण स्वर (परिवर्तन) में निपुणता प्राप्त कर ली है।

टिप्पणी – इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार तथा अनुष्टुप छन्द है।

विदूषकः - (विटं दृष्टवा)भाव एषोऽपराध्यति।एष खल्वत्रापराध्यति(शकारं दृष्टवा)अरेरे राजश्यालक संस्थानक दुर्जनः दुर्मनुष्यः ! युक्तं नेदम्। यद्यपि नाम तत्रभवानार्यचारूदत्तो दरिद्रः संवृत्तः। तत्किं तस्य गुणैर्नालंकृतोज्जयिनी ? येन तस्य गृहं प्रविश्य परिजनस्येदृशः उपमर्दः क्रियते ?

मा दुर्गतः इति परिभवो नास्ति कृतान्तस्य दुर्गतो नाम।
चारित्र्येण विहीन आढयोऽपि न दुर्गतो भवति।। 43 ।।

अन्वय – (अयम्) दुर्गतः इति परिभवः मा (कर्तव्यः) कृतान्तस्य (समीपे) दुर्गतः न अस्ति नाम च चारित्र्येण विहीनः आढयाः अपि अुर्गतः भवति **।। 43 ।।**

अर्थ – **विदूषक-** (विट को देखकर) यहाँ यह अपराध नहीं कर रहा है। (शकार को देखकर) निश्चय ही यही अपराधी है। अरे राजश्यालक(राजा के साले), संस्थानक (शकार का नाम) दुष्ट, नीच मनुष्य ! यह उचित नही है। यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या

उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है। जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है।

अर्थ - (यह) 'निर्धन' हैं इसलिए अपमान मत करें। यमराज के यहाँ निर्धन कोई नही है और चरित्रहीन धनवान् भी दुर्दशा को प्राप्त होता है।

टिप्पणी – इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार एवं गाथा छन्द है।

विट:- (सवैलक्ष्यम्) महाब्राह्मण ! मर्षय मर्षय। अन्यजनशंकया खल्विदमनुष्ठितम् , न दर्पात्। पश्य-

सकामान्विष्यतेऽस्माभि: काचित्स्वाधीनयौवना।
सा नष्टा शंकया तस्या: प्राप्तेयं शीलवञ्चना ।। 44 ।।

अन्वय- अस्माभि: सकामा स्वाधीनयौवना काचित् अन्विष्यते सा नष्टा तस्या: शंकया इयम् शीलवञ्चना प्राप्ता **।। 44 ।।**

विट – (लज्जापूर्वक) महाब्राह्मण क्षमा करो, क्षमा करो। किसी दूसरे व्यक्ति के भ्रम से ऐसा कार्य हो गया , अहंकार से नहीं। देखो - कोई अपने यौवन की स्वामिनी स्त्री (अर्थात् वेश्या) किन्तु वह रमणी तो भाग गयी और उसी के भ्रम में यह चरित्र की हानि हुई (अर्थात् इस प्रकार सदाचार का उल्लंघन हो गया।

टिप्पणी - इस श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है।

विट:- एष ते प्रणयो विप्र ! शिरसा धार्यते मया।
गुणशस्त्रैर्वयं येन शस्त्रवन्तोऽपि निर्जिता: ।। 45 ।।

अन्वय – हे विप्र ! एष: ते प्रणय: मया शिरसा धार्यते , येन शस्त्रवन्त: अपि वयम् गुणशस्त्रै: निर्जिता: **।। 45 ।।**

विट – हे ब्राह्मण ! तुम्हारे इस अनुग्रह को मैं शिरोधार्य करता हूँ। जिन कारणों से शस्त्रधारी होते हुए भी हम लोग आप के गुणरूपी शस्त्र से पराजित कर दिये गये हैं।

टिप्पणी – इस श्लोक में रूपक अलंकार पथ्यावक्त्र छन्द है।

शकार:- (सासूयम्) किंनिमित्तं पुनर्भाव ! एतस्य दुष्टबटुकस्य कृपणाञ्जलि कृत्वा पादयोर्निपतित:।

शकार- (ईर्ष्या) भाव ! विनयपूर्वक हाथ जोड़कर आप इस दुष्ट ब्राह्मण के पैरों पर क्यों गिर रहे ?

विट:- भीतोऽस्मि।

शकार:- कस्मात्त्वं भीत: ?

शकार – तुम किससे डर गये हो ?

विट:- तस्य चारूदत्तस्य गुणेभ्य:।

विट – उस चारूदत्त के गुणों से।

शकार:- के इव तस्य गुणा यस्य गृहं प्रविश्याशितव्यमपि नास्ति।

शकार – उसके क्या गुण हैं ? जिसके घर में घुसने पर कुछ खाने योग्य भी नही है।

विट: - मा मैवम् - **सोऽस्मद्विधानां प्रणयै: कृशीकृतो**

न तेन कश्चिद्विभवैर्विमानितः ।
निदाघकालेष्विव सोदको ह्रदो
गुणा स तृष्णामपनीय शुष्कवान्।। 46 ।।

अन्वय - सः अस्मद्विधानां प्रणयैः कृशीकृतः तेन कश्चित् विभवैः न विमानितः नृणाम् तृष्णाम् अपनीय सः निदाघकालेषु सोदकः ह्रदः इव शुष्कवान् ।। 46 ।।

अर्थ – विट- ऐसा मत कहो – यह हम जैसे लोगो की ही प्रेमपूर्ण मांगो से क्षीण (धनहीन) हो गये हैं। उन्होनें किसी को भी धन के गर्व से अपमानित नही किया है। मनुष्यों की धन सम्बन्धी प्यास (तृष्णा) को मिटाकर वे गर्मी के समय में जलयुक्त तालाब के समान सूख गये हैं अर्थात् निर्धन हो गये हैं।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं वंशस्थ छन्द है।

शकारः - (सामर्षम्) कः स गर्भदास्याः पुत्रः ?

शूरो विक्रान्तः पाण्डवः श्वेतकेतुः पुत्रो राधाया रावण इन्द्रदत्तः ।
आहो कुन्त्यास्तेन रामेण जातः अश्वत्थामा धर्मपुत्रो जटायुः ।। 47 ।।

अन्वय- विक्रान्तः शूरः (सः किम्) पाण्डवः श्वेतकेतुः, इन्द्रदत्तः राधाया पुत्रः रावणः आहो तेन जातः कुन्त्याः (पुत्रः) अश्वत्थामा (वा) धर्मपुत्रः जटायुः **।। 47 ।।**

अर्थ – शकार – (क्रोधपूर्वक) कौन है यह जन्मदासी का पुत्र ?

क्या यह शूरवीर पाण्डुपुत्र श्वेतकेतु है ? अथवा इन्द्र प्रदत्त राधा का पुत्र रावण है ? अथवा प्रसिद्ध उस राम से उत्पन्न कुन्ती का पुत्र अश्वत्थामा है ? अथवा धर्मपुत्र जटायु है।

टिप्पणी – शकार की उक्ति होने के कारण सभी गलतियाँ क्षम्य हैं। इस श्लोक में वैश्वदेवी छन्द है।

विटः - मूर्ख ! आर्यचारूदत्तः खल्वसौ ,

दीनानां कल्पवृक्षः स्वगुणफलनतः सज्जनानां कुटुम्बी
आदरोः शिक्षितानां सुचरितनिकषः शीलवेलासमुद्रः ।
सत्कर्ता नावमन्ता पुरूषगुणनिधिर्दक्षिणोदारसत्त्वो
ह्येकः श्लाघ्यः स जीवत्यधिकगुणतया चोच्छवसन्तीव चान्ये ।। 48 ।।

तदितो गच्छामः।

अन्वय-दीनानां स्वगुणफलनतःकल्पवृक्षः सज्जनानाम् कुटुम्बी ,शिक्षितानाम् आदर्शः सुचरितनिकषः शीलवेलासमुद्रः सत्कर्ता न अवमन्ता पुरूषगुणनिधिः दक्षिणोदारसत्त्वः हि अधिकगुणतया श्लाघ्यः एकः सः जीवति अन्ये उच्छवसन्ति इव च **।। 48 ।।**

विट – अरे मूर्ख ! यह तो आर्य 'चारूदत्त' हैं ।जो दीनों के (कामनाओं को पूर्ण करने वाले) अपने गुण रूपी फलों से नम्र कल्पवृक्ष हैं। साधुओं के बन्धु, शिक्षितों के आदर्श, सच्चरित्र की कसौटी,

सदाचार रूपी मर्यादा के (न लांघने वाले) सागर सत्कार करने वाले, किसी का अनादर न करने वाले, मनुष्योचित गुणों के खजाना, सरल एवं उदार स्वभाव वाले हैं। गुणों की अधिकता के कारण प्रशंसनीय यह आर्य चारूदत्त ही (यथार्थ रूप में) जीवित हैं और अन्य लोग तो सिसकते ही हैं अर्थात् इनके अतिरिक्त अन्य गुणहीन व्यक्तियों का जीवन निरर्थक है। तो यहाँ से चलें।

टिप्पणी – इस श्लोक में उल्लेख अलंकार एवं स्रग्धरा छन्द है

शकार:- अगृहीत्वा वसन्तसेनाम् ?

शकार – वसन्तसेना को बिना पकड़े ही ?

विट: - नष्टा वसन्तसेना।

विट – वसन्तसेना तो अदृश्य हो गयी।

शकार:- कथमिव ?

शकार – किस प्रकार ?

विट:- **अन्धस्य दृष्टिरिव पुष्टिरिवातुरस्य**
मूर्खस्य बुद्धिरिव सिद्धिरिवालसस्य।
स्वल्पस्मृतेर्व्यसनिन: परमेव विद्या
त्वां प्राप्य सा रतिरिवारिजने प्रनष्टा ।। 49 ।।

अन्वय – सा त्वाम् प्राप्य अन्धस्य दृष्टि: इव आतुरसय पुष्टि: इव मूर्खस्य बुद्धि: इव अलसस्य सिद्धि: इव अल्पस्मृते: व्यसनिन: परमा विद्या इव अरिजने रति: इव प्रनष्टा **।। 49 ।।**

अर्थ – **विट-** वह तुम्हें प्राप्त करके अन्धे की दृष्टि के समान, रोगी के बल के समान, मूर्ख की बुद्धि के समान, आलसी की सफलता की भाँति, कम स्मरण शक्ति वाले दुर्गुणासक्त (व्यक्ति) की उत्कृष्ट विद्या की तरह, शत्रुओं के प्रेम के समान अदृश्य हो गयी है।

शकार:- अगृहीत्वा वसन्तसेनां न गमिष्यामि।

शकार – वसन्तसेना को बिना लिये नहीं जाऊँगा।

विट: - एतदपि न श्रुतं त्वया ?

आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्यासु गृह्यते।
हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम् ।। 50 ।।

अन्वय – हस्ती आलाने गृह्यते,वाजी वल्यासु गृह्यते, नारी हृदये गृह्यते, यदि इदम् नास्ति (तदा) गम्यताम् **।। 50 ।।**

विट – क्या तुमने यह भी नहीं सुना है ? (कि) - हाथी खम्बे में (बाँध कर) वश में किया जाता है,

घोड़ा लगाम से वश में किया जाता है और स्त्री हृदय से (हृदय के प्रेम से) वश में की जाती है। यदि यह (हृदय का प्रेम) नही है तो जाइये।

टिप्पणी - इस श्लोक में निदर्शना अलंकार और पथ्यावक्त्र छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1 -

सत्य असत्य बताइये -

1. संस्थानक शकार का नाम है।
2. विट राजश्यालक है।
3. चारूदत्त ब्राह्मण है।
4. विदूषक विट का मित्र है।
5. स्त्री हृदय को प्रेम से वश में किया जात है।

अभ्यास प्रश्न 2 -

श्लोक का अनुवाद करें -

1- मा दुर्गत: इति परिभवो नास्ति कृतान्तस्य दुर्गतो नाम।
चारित्र्येण विहीन आढयोऽपि न दुर्गतो भवति ।।

2.आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्यासु गृह्यते।
हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम् ।।

3.4 मृच्छकटिकम् प्रथम अंक श्लोक संख्या 51 से 58 तक
(मूल पाठ, अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या)

तत्पश्चात् शकार और विदूषक के मध्य वार्तालाप होता है और विदूषक कहता है कि हम भाग्य के द्वारा बैठा दिये गये हैं और पुन: भाग्य के अनुकूल होने पर हम प्रसन्न होगें। तब शकार कहता है कि यह वसन्तसेना हमारे द्वारा बलपूर्वक मनायी जाती हुई तुम्हारे(चारूदत्त के) घर में प्रविष्ट हो गयी है

यदि तुम उसे सहर्ष मुझे सौंप दोगे तो तुम्हारे साथ मेरा दृढ़ प्रेम हो जायेगा और न लौटाने पर जीवन भर की शत्रुता हो जायेगी।

शकार:- अपि च प्रेक्षस्व -

कूष्माण्डी गोमत्तलिप्तवृन्ता शाकं च शुष्कं गलितं खलु मांसम्।
भक्तं च हेमन्तिकारात्रिसिद्धं लीलायां च वेलायां न खलु भवति पूति ।। 51 ।।

अन्वय – गोमत्तलिप्तवृन्ता कूष्माण्डी शुष्कम् शाकम् च गलितम् मांसम् खलु हेमन्तिकारात्रिसिद्धम् भक्तम् च वेलायाम् लीलायाम् च न खलु पूति भवति ।। 51 ।।

अर्थ – शकार – और भी देखो – गोबर से लिप्त डण्ठल वाली कुम्हड़ी, सूखा हुआ शाक, तला हुआ मांस, हेमन्त ऋतु की रात्रि में पकाया हुआ भात, अधिक काल बीत जाने पर भी विकृत नहीं होते है।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा इन्द्रवज्रा छन्द है।

विदूषक:- भणिष्यामि।

विदूषक – कह दूँगा।

शकार:- (अपवार्य) चेट ! गत: सत्यमेव भाव:।

शकार – (अलग हट कर) सचमुच ही भाव (विट) चले गये ?

चेट:- अथ किम्।

चेट – और क्या।

शकार:- तच्छीगमपक्रमाव:।

शकार – **तो हम दोनों शीघ्र ही चलें।**

चेट:- तद् गृहात्तु भट्टारकोऽसिम्।

चेट - तो स्वामी तलवार को ग्रहण करें।

शकार – तदैव हस्ते तिष्ठतु।

शकार – तुम्हारे ही हाथ में रहे।

चेट:- एष भट्टारक: ! गृह्णात्वेनं भट्टरकोऽसिम्।

चेट – स्वामिन् ! यह है आप इस तलवार को ले लें।

शकार:- (विपरीतं गृहीत्वा)

निर्वल्कलं मूलकवेशीवर्णं स्कन्धेन गृहीत्वा च कोशमुत्तम्

कुक्कुरैः कुक्कुरीभिश्रं बुक्कयमानो यथा श्रृगालः शरणं प्रयामि ।। 52 ।।

(परिक्रम्य निष्क्रान्तो)

अन्वय - निर्वल्कलम् मूलकवेशीवर्णम् कोशमुत्तम् (असिम्) स्कन्धेन गृहीत्वा च कुक्कुरैः कुक्कुरीभिः च बुक्कयमानः श्रृगालः यथा शरणम् प्रयामि **।। 52 ।।**

अर्थ – शकार – (उलटी पकड़कर) नंगी तथा मूली के छिलके के समान रंगवाली, कोष (म्यान) में स्थित तलवार को कन्धे पर रखकर मैं कुत्ते और कुतियों के द्वारा भौकें जाते हुए गीदड़ की भांति घर को जाता हूँ। (घूमकर निकल जाते हैं)

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा उपजाति छन्द है।

विदूषकः- भवति रदनिके ! न खलु तेऽयमपमानस्तत्रभवतश्चारूदत्तस्य निवेदयितव्यः । दौर्गत्यपीडितस्य मन्ये द्विगुणतरा पीडा भविष्यति।

विदूषक – अरी रदनिके ! अपने इस अपमान को परम श्रद्धेय आर्य चारूदत्त से मत कहना। दुर्दशा से पीडित उनकी पीड़ा दुगुनी हो जायेगी।

रदनिका – आर्य मैत्रेय ! रदनिका खल्वदं संयतमुखी।

रदनिका - आर्य मैत्रेय ! मैं 'रदनिका' अपने मुख को वश में रखने वाली हूँ।

विदूषकः - एवमिदम्।

विदूषक – ऐसा ही है।

चारूदत्तः- (वसन्तसेनामुद्दिश्य) रदनिके ! मारूताभिलाषी प्रदोषसमयशीतातो रोहसेनः । ततः प्रवेश्यतामभ्यन्तरमयम्। अनेन प्रावारकेण छादवैनम्। (इति प्रावारकं प्रयच्छति)

चारूदत्तः - (वसन्तसेना को लक्ष्य करके) रदनिके ! वायु (सेवन) का इच्छुक 'रोहसेन' (चारूदत्त का पुत्र) रात्रि के प्रथम प्रहर की ठण्ड से पीडित है। इसलिए भीतर ले जाओ और इस उत्तरीय से इसे ढँक दो। (ऐसा कहकर उत्तरीय प्रदान करता है)

वसन्तसेना – (स्वगतम्) कथं परिजन इति मामवगच्छति । (प्रावारकं गृहीत्वा समाघ्राय च स्वगतम् सस्पृहम्) आश्चर्यम् ,जातीकुसुमवासितः प्रावारकः । अनुदासीनमस्य यौवनं प्रतिभासते । (अपवारितकेनं प्रावृणोति)

वसन्तसेना – (अपने आप) क्या (भूल से) मुझे अपना परिजन समझ रहे हैं ? (उत्तरीय लेकर के सूँघ कर अपने आप अभिलाषा पूर्वक) अहो ! उत्तरीय जाती-पुष्पों (चमेली के फूलों) से सुवासित है। (अतः अभी) इनका यौवन उपभोग की तृष्णा से उदासीन नही हुआ है। (अलग हटकर अपने आप को ढक लेती है)

चारूदत्त - ननु रदनिके ! रोहसेनं गृहीत्वाभ्यन्तरं प्रविश।

चारूदत्त - हे रदनिके ! रोहसेन को लेकर भीतर चली जाओ।

वसन्तसेना – (स्वगतम्) मन्दभागिनी खल्वहं तवाभ्यन्तरस्य।

वसन्तसेना – (अपने आप) मैं अभागिनी तुम्हारे घर के भीतर प्रवेश करने के योग्य नही हूँ।

चारूदत्त:- ननु रदनिके ! द्रतिवचनमपि नास्ति। पश्य -

यदा तु भाग्यक्षयपीडितां दशां
नर:कृतान्तोपहितां प्रपद्यते।
तदास्य मित्राण्यपि यान्त्यमित्रतां
चिरानुरक्तोऽपि विरज्यते जन: ।। 53 ।।

अन्वय – यदा तु नर: कृतान्तोपहिताम् भाग्यक्षयपीडिताम् दशाम् प्रपद्यते तदा अस्य मित्राणि अपि अमित्रताम् यान्ति चिरानुरक्त: जन: अपि विरज्यते **।। 53 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - अरी रदनिके ! (तुम्हारे पास) उत्तर भी नही है ? खेद है,

जब मनुष्य क्रुद्धदेव के द्वारा उपस्थित की गयी भाग्यनाश के कारण दलित दशा को प्राप्त हो जाता है तब इस (धनहीन) के मित्र भी शत्रु हो जाते हैं और बहुत दिनों से प्रेम करने वाला व्यक्ति भी विमुख हो जाता है।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा वंशस्थ छन्द है।

चारूदत्त:- इयं वा रदनिका इयमपरा का ?

अविज्ञातावसक्तेन दूषिता मम वासवा।
छादिता शरदभ्रेण चन्द्रलेखेव दृश्यते।। 54 ।।

अन्वय – (या) अविज्ञातावसक्तेन मम वाससां दूषिता (तथा) शरदभ्रेण छादिता चन्द्रलेखा इव दृश्यते **।। 54 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – यह रदनिका है तो वह दूसरी (स्त्री) कौन है ?

(जो) अनजाने में स्पर्श किये हुए मेरे वस्त्र से दूषित हो गयी, शरद ऋतु के मेघ से ढकी हुई चन्द्रकला के समान दिखलायी पड़ती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

चारूदत्त:- अये, इयं वसन्तसेना (स्वगतम्)

यया मे जनित: काम: क्षीणे विभवविस्तरे।
क्रोध: कुपुरूषस्येव स्वगात्रेष्वेव सीदति।। 55 ।।

अन्वय - विभवविस्तरे क्षीणे यया जनित: मे काम: कुपुरूषस्य क्रोध: इव स्वगात्रेषु एव सीदति **।। 55 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – अरे ! यह वसन्तसेना है ?(अपने आप) - प्रचुर धनराशि के क्षीण हो जाने पर जिस (वसन्तसेना) के द्वारा उत्पन्न की गयी मेरी काम वासना, असमर्थ व्यक्ति के क्रोध की भाँति, अपनी देह में ही विनष्ट हो रही है।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पथ्यावक्त्र छन्द है।

चारूदत्त:- (सावज्ञम्) अज्ञोऽसौ। (स्वगतम्) अये, कथं देवतोपस्थानयोग्या युवतिरियम् ? तेन खलु **तस्याम् वेलायाम् -**

प्रविश गृहमिति प्रतोद्यमाना
न चलति भाग्यकृतां दशामवेक्ष्य।
पुरूषपरिचयेन च प्रगल्भं
न वदति यद्यपि भाषते बहूनि ।। 56 ।।

अन्वय – गृहम् प्रविश इति प्रतोद्यमाना भाग्यकृताम् दशाम् अवेक्ष्य न चलति, यद्यपि (इयम्) बहूनि भाषते (तथापि) पुरूषपरिचयेन प्रगल्भम् न च वदति **।। 56 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - (अनादरपूर्वक) यह (शकार) मूर्ख है। (अपने आप) अहो ! कैसी देवता के समान पूजा करने के योग्य यह युवती है। तभी तो उस समय -

(रोहसेन को लेकर) 'घर में प्रवेश करो' इस प्रकार प्रेरित की गयी (भी प्रतिकूल) भाग्य के द्वारा उपस्थित की गयी मेरी दुरवस्था को देखकर (भीतर) नही गयी यद्यपि (वेश्या होने के कारण) बहुत बोलती है तथापि पुरूषों के संसर्ग से (अर्थात् पुरूषों के समक्ष) धृष्टतापूर्वक नहीं बोलती है।

टिप्पणी – इस श्लोक में पुष्पिताग्रा छन्द है।

तत्पश्चात् आर्य चारूदत्त वसन्तसेना से कहते हैं कि अनजाने में आपके साथ सेवक के समान व्यवहार करने के कारण मैं आपसे सिर झुकाकर क्षमा माँगता हूँ। तब वसन्तसेना कहती है कि मैं आपकी इस पवित्र भूमि में प्रवेश करने के योग्य ही नहीं हूँ इसलिए मैं आपको प्रणाम करके क्षमा चाहती हूँ। वसन्तसेना चारूदत्त से कहती है कि यह शकार आभूषणों के कारण मेरा पीछा कर रहा है अत: आप इन्हे धरोहर के रूप में अपने पास रख लीजिये चारूदत्त कहता है कि मेरा घर धरोहर रखने के लायक नही है। वसन्तसेना के पुन: आग्रह करने पर वह धरोहर रखने को तैयार हो जाता है। वसन्तसेना विदूषक के साथ घर जाने की इच्छा प्रकट करती है तो चारूदत्त विदूषक से कहता है कि इनके साथ घर जाओ। विदूषक चेटी से दीपक जलाने को कहता है तो चेटी कहती है कि तेल के बिना कहीं दीपक जलता है तब चारूदत्त कहता है कि -

चारूदत्त: - मैत्रेय ! भवत: कतं प्रदीपिकानि। पश्य -

उदयति हि शशांक कामिनीगण्डपाण्डु-
र्ग्रहगणपरिवारो राजमार्गंप्रदीप: ।
तिमिरनिकरमध्ये रश्मयो यस्य गौरा:
स्रुतजल इव पंके क्षीरधारा: पतन्ति ।। 57 ।।

(सानुरागं) भवति वसन्तसेने ! इदं भवत्यां पश्यप्रविशतु भवती ।

(वसन्तसेना सानुरागमवलोकयन्ती निष्क्रान्ता)

अन्वय - हि कामिनीगण्डपाण्ड: ग्रहगणपरिवार: राजमार्गप्रदीप: शशांक: उदयति यस्य गौरा: रश्मय: सुतजले पंके क्षीरधारा: इव तिमिरनिकरमध्ये पतन्ति **।। 57 ।।**

अर्थ – चारूदत्त - मैत्रेय ! रहने दो , प्रदीपिकाओं की आवश्यकता नहीं है । देखो - सुन्दर युवती के कपोल के समान उज्जवल (गौरवर्ण) नक्षत्रसमूह रूपी परिवार वाला तथा राजमार्ग को प्रकाशित करने वाला चन्द्रमा उदित हो रहा है । जिसकी श्वेत किरणें सूखे हुए जलवाले कीचड़ में दूध की धाराओं के समान अन्धकार समूह के मध्य में पड़ रही है । (प्रेम के साथ) वसन्तसेने ! यह आपका घर है आप (इसमें) प्रवेश करे । (वसन्तसेना प्रेमपूर्वक देखते हुए निकल जाती है) ।

टिप्पणी – इस श्लोक में मालिनी छन्द है ।

चारूदत्त: - वयस्य ! गता वसन्तसेना तदेहि । गृहमेव गच्छाम: ।

राजमार्गो हि शून्योऽयं रक्षिण: संचरन्ति च ।
वञ्चना परिहर्तव्यां बहुदोषा हि शर्वरी ।। 58 ।।

(परिक्रम्य) इदं च सुवर्णमाण्डं रक्षितव्यं त्वया रात्रौ वर्धमानकेनापि दिवा ।

विदूषक:- यथा भवानाज्ञापयति । इति निष्क्रान्तौ

अन्वय – हि अयम् राजमार्ग: शून्य: च रक्षिण: सञ्चरन्ति वञ्चना परिहर्तव्यां हि शर्वरी बहुदोषा (भवति) **।। 58 ।।**

अर्थ – चारूदत्त – मित्र ! वसन्तसेना गयी तो आओ घर को ही चलें ।

यह राजमार्ग सूना है और रक्षक लोग घूम रहे हैं । ठगों (चोरों) से बचना चाहिए । क्योंकि रात वस्तुत: बड़ी दोषपूर्ण होती है । अर्थात् चोरी आदि अपराध रात्रि में ही होते हैं । (घूमकर) इस सोने के पात्र की रक्षा तुमको रात्रि में और 'वर्धमानक' को दिन में करनी चाहिए ।

विदूषक – जैसी आपकी आज्ञा । (दोनों निकल जाते हैं)

टिप्पणी – इस श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार और पथ्यावक्त्र छन्द है ।।

।। **इति मृच्छकटिकेऽलंकारन्यासो नाम प्रथमोअंक: ।।अलंकार – न्यास नामक प्रथम अंक समाप्त हो जाता है ।**

3.5 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि शकार रदनिका को वसन्तसेना समझ कर पकड़ लेता है और कहता है कि अब तुमको ईश्वर भी नहीं बचा सकेंगे । विट शकार से

कहता है कि यह आवाज वसन्तसेना की नहीं है ।इधर विदूषक रदनिका को शकार द्वारा पकड़ा हुआ देखकर कहता है कि अरे राजश्यालक(राजा के साले), नीच मनुष्य ! यह उचित नही है । यद्यपि आर्य चारूदत्त (इस समय) निर्धन हो गये हैं, तो भी क्या उज्जयिनी नगरी उनके गुणों से विभूषित नही है । जिससे उनके घर में घुसकर उनके सेवक का इस प्रकार अपमान किया जा रहा है । विट शकार को डाँट कर चारूदत्त के घर में प्रवेश करने से रोकता है वह विदूषक से यह जानकर कि रदनिका चारूदत्त की सेविका है क्षमा मांग लेता है । वसन्तसेना चारूदत्त से वार्तालाप के पश्चात् शकार से बचने के लिए अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है और प्रथम अंक समाप्त हो जाता है।

3.6 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
शिरोरूहेषु	शिर के बालों में
रंगप्रवेशेन	नाट्यशाला में प्रवेश करने से
परिभव:	अपमान
विप्र	ब्राह्मण
विमानित:	अपमानित किया गया
निदाघकालेषु	गर्मी के समयों में
दीनानाम्	दीनों के
शीलवेलासमुद्र:	सदाचार रूपी मर्यादा के सागर
श्लाघ्य:	प्रशंसनीय
हस्ती	हाथी
आलाने	हाथी को बाँधने का खम्भा
वाससा	वस्त्र से
प्रगल्भम्	धृष्टतापूर्वक
रक्षिण:	पहरेदार

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) सत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) असत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 2- 1- उत्तर इकाई में देखें। 2- उत्तर इकाई में देखें।

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

3.9 उपयोगी पुस्तकें:-

1. मृच्छकटिकम् लेखक - शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक - शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थ कानपुर

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- इस इकाई के किन्हीं पाँच श्लोको की ससन्दर्भ व्याख्या कीजिए।

इकाई 4 – मृच्छकटिकम् द्वितीय अंक श्लोक संख्या 1 से 20 तक

इकाई की रूपरेखा

- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या
- 4.4 श्लोक संख्या 11 से 20 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या
- 4.5 सारांश
- 4.6 शब्दावली
- 4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ
- 4.9 उपयोगी पुस्तकें
- 4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:-

इससे पूर्व की इकाई में आपने प्रथम अंक के 21 से 58 श्लोंको का अध्ययन किया और जाना कि चारूदत्त के गुणों का सम्मान विट भी करता है इसीलिए शकार के द्वारा रदनिका को भ्रमवश वसन्तसेना समझ कर पकड़े जाने पर वह विदूषक से क्षमा माँगता है। वसन्तसेना अपने गहने चारूदत्त के पास धरोहर के रूप में रख देती है।

प्रस्तुत इकाई में आप द्वितीय अंक का अध्ययन करेंगे इस अंक का नाम 'द्युतक-संवाहक' है। वसन्तसेना अपनी चेटी मदनिका के साथ चारूदत्त सम्बन्धी वार्तालाप कर रही है । इसी समय संवाहक आता है । जुआरी और द्यूतकरों का मुखिया (माथुर) उसका पीछा करते हुए आते हैं । वसन्तसेना अपना स्वर्णाभूषण देकर संवाहक को छुड़ाती है । संवाहक विरक्त होकर बौद्ध भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में उसे पकड़ कर कुचलना ही चाहता है कि वसन्तसेना का सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। इससे प्रसन्न होकर चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला कर्णपूरक को उपहार में दे देते हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह बता सकेंगे कि किस प्रकार वसन्तसेना संवाहक को छुड़ाती है और संवाहक बौद्ध भिक्षु बन जाता है उन्मत्त हाथी के द्वारा कर्णपूरक उसे बचाता है। निर्धन होने पर भी चारूदत्त उसे पुरस्कृत करता है।

4 .2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- इस अंक के नाम की सार्थकता को सिद्ध कर सकेंगे।
- द्तिीय अंक के श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्लोंकों के साहित्यिक वैशिष्ट्य को समझा सकेंगे।
- वसन्तसेना ने संवाहक को माथुर से मुक्त कराया यह बता सकेंगे।

4.3 श्लोक संख्या 1 से 10 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

चेटी- मात्रार्यासकाशं संदेशेन प्रेषितास्मि । तद्यावत्प्रविश्यार्यासकाशं गच्छामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) एषार्या हृदयेन किमप्यालिखन्ती तिष्ठति। तद्यावदुपसर्पामि। (प्रवेश करके)

अर्थ- चेटी- वसन्तसेना की माताजी के द्वारा सन्देश के साथ आर्या (वसन्तसेना) के पास भेजी गयी हूँ।अत: प्रवेश करके आर्या के समीप चलती हूँ 1 (घूमकर और देखकर) यह आर्या तल्लीनतापूर्वक कुछ सोचती हुई बैठी है। तो तब तक उनके समीप चलती हूँ।

(तत: प्रविशत्यासनस्था सोत्कण्ठा वसन्तसेना मदनिकां च)

वसन्तसेना – चेटि ! ततस्तत: ।

(इसके बाद आसन पर बैठी हुई उत्कण्ठित वसन्तसेना तथा मदनिका प्रवेश करती हैं)

वसन्तसेना- चेटि ! इसके बाद।

चेटी- आर्ये न किमपि मन्त्रयसि। किं ततस्ततः।

चेटी- आर्ये कुछ कहती तो हो नही, फिर इसके बाद क्या ?

वसन्तसेना- किं मया भणितम् ?

वसन्तसेना – मैनें क्या कहा ?

चेटी- ततस्ततः इतिः।

चेटी- इसके बाद।

वसन्तसेना – (संभ्रूक्षेपम्) आं एवम्। (उपसृत्य)

वसन्तसेना- (भौं घुमाकर) अच्छा इस प्रकार? (समीप जाकर)

प्रथमा चेटी- आर्ये ! माताऽऽदिशति - 'स्नाता भूत्वा देवतानां पूजा निर्वतय' इति।

प्रथमा चेटी- आर्ये ! माताजी का आदेश है कि – 'स्नान कर देवताओं की पूजा कर लो'।

वसन्तसेना- चेटि ! विज्ञापय मातरम् -अद्य न स्नास्यामि । 'तंब्राह्मण एव पूजानिर्वर्तयत्'।

वसन्तसेना- चेटि ! माताजी से कह दो कि – आज मैं स्नान नही करूंगी। अतः ब्राह्मण ही पूजा को निपटायें।

चेटी- यदार्याज्ञापयति। (इति निष्क्रान्ता)

चेटी- जैसी आपकी आज्ञा। (ऐसा कहकर चली जाती है)

मदनिका- आर्ये ! स्नेहः पृच्छति ,न पुरोभागितां ,तत्किं न्विदम्।

मदनिका- आर्ये ! दोष की इच्छा नही किन्तु (मेरा आपके प्रति) प्रेम पूछने को प्रेरित करता है कि यह क्या बात है। (अर्थात् आप की यह दशा क्यों हैं)।

वसन्तसेना- मदनिके ! कीदृशीं मां प्रेक्षसे ?

वसन्तसेना- मदनिके ! तुम मुझको कैसी देख रही हो ?

मदनिका - आर्यायाः शून्यहृदयत्वेन जानामि हृदयगतं कमप्यार्याभिलषतीति।

मदनिका – आपके मन की उदासी के कारण यह समझ रही हूँ कि आप अपने हृदय में स्थित किसी (प्रेमी) को चाहती हैं।

वसन्तसेना- सुष्ठु त्वया ज्ञातम्। परहृदयग्रहणपण्डितां मदनिका खलु त्वम्।

वसन्तसेना- तुमने ठीक जाना। दूसरों के हृदय के भावों को समझने में तुम चतुर हो मदनिका।

मदनिका- विद्याविशेषालंकृतः किं कोऽपि ब्राह्मणयुवां काम्यते ?

मदनिका- क्या किसी खास विद्या को जानने वाले ब्राह्मण युवक को आप चाहती हैं ?

वसन्तसेना- पूजनीयो मे ब्राह्मणजनः।

वसन्तसेना- ब्राह्मण लोग तो हमारे पूज्य हैं।

टिप्पणी – इस प्रकार मदनिका के द्वारा बार-बार उस प्रेमी का नाम पूछे जाने पर वसन्तसेना बताती है कि वह आर्य चारूदत्त ही हैं। वह यह भी कहती है कि धन देने में असमर्थ होने के कारण कही उनसे मिलना भी दुर्लभ न हो जाय इसीलिए मैंने अपने आभूषणों को उनके पास धरोहर के रूप में रक्खा है।

वसन्तसेना- चेटी ! सुष्ठु त्वया ज्ञातम् ।

(नेपथ्ये) अरे भट्टारक ! दशसुवर्णस्य रूद्धो द्यूतकर: प्रपला यत: प्रपलायित: । तद् गृहाण गृहाण । तिष्ठ तिष्ठ ,दूरात्प्रदृष्टोऽसि ।

(प्रविश्यापटीक्षेपेण संभ्रान्त:)

अर्थ- वसन्तसेना- चेटी ! तुमने ठीक जाना 1

(नेपथ्य में) अरे स्वामी दश सुवर्ण के लिए बाँधा हुआ जुआरी भाग गया,भाग गया । तो (उसे) पकड़ो पकड़ो । ठहरो ठहरो दूर से ही दिखलायी पड़ गया है ।

(बिना पर्दा उठाए घबराया हुआ प्रवेश करके)

संवाहक:- आश्चर्यम् ,कष्ट एष द्यूतकरभाव: ।

संवाहक:- आश्चर्य है ! यह जुआरीपन बहुत ही कष्टदायक है ।

नवबन्धनमुक्तयेव गर्दभ्या हा ताडितोऽस्मि गर्दभ्या ।
अंगराजमुक्तयेव हा शक्त्या घटोत्कच इव पातितोऽस्मि शक्त्या ।। 1 ।।

अन्वय- हा ! नवबन्धनमुक्तया गर्दभ्या,इव गर्दभ्या ताडित: अस्मि। हा ! अंगराजमुक्तया शक्त्या घटोत्कच: इव शक्त्या पातित: अस्मि ।

अर्थ - हाय ! नवीन बन्धन से खुली हुई गर्दभी (गधी) के समान गर्दभी नामक पासे ने मुझे मार दिया । अंगराज (कर्ण) द्वारा छोड़ी हुई शक्ति से घटोत्कच के समान मैं भी शक्ति (जुएं में कौड़ियों की एक विशेष चाल) के द्वारा मारा गया **।। 1 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में संसृष्टि अलंकार तथा चित्रजाति छन्द है ।

लेखकव्यापृतहृदयं सभिकं दृष्टवा झटिति प्रभ्रष्ट: ।
इदानींमार्गनिपतित: कं तु खलु शरणं प्रपद्ये ।। 2 ।।

अन्वय- लेखकव्यापृतहृदयं सभिकम् दृष्टवा झटिति प्रभ्रष्ट: इदानीम् मार्ग निपतित: (अहम्) तु कम् खलु शरणम् प्रपद्ये **।। 2 ।1**

अर्थ- जुआरियों के अगुआ (सभिक) को कुछ लिखने में उलझा हुआ देखकर जल्दी ही (आँख बचाकर) भाग निकला और अब रास्ते पर आ गया मैं किसकी शरण में जाऊँ ? ।। 2 ।।

टिप्पणी- इस श्लोक में गाथा छन्द हे ।

तद्यावदेतौ सभिकद्यूतकरावन्यतो मामन्विष्यत: तावदहं विपरीताभ्यां पादाभ्यामेतच्छून्यदेवकुलं प्रविश्य देवीभविष्यामि ।(बहुविधं नाट्यं कृत्वा तथा स्थित:)

अर्थ- तो जब तक जुआरियों के अगुआ(सभिक) और जुआरी मुझे दूसरी ओर ढूँढ़ते है तब तक मैं उलटे पैरों से चलकर (जैसे दक्षिण की ओर जाना हैतो उत्तर की ओर मुँह करके) इस सूने देव मन्दिर में प्रवेश कर देवता की मूर्ति बन जाऊँ। (बहुत प्रकार का अभिनय करके देवता की मूर्ति बन कर बैठ जाता है) । (तत: प्रविशति माथुरो द्यूतकरश्च)

माथुर: - अरे भट्टारक ! दशसुवर्णस्य रूद्धो द्यूतकर: प्रपला यत: प्रपलायित:। तद् गृहाण गृहाण ।

तिष्ठ तिष्ठ ,दूरात्प्रदृष्टोऽसि।

माथुर:- अरे स्वामी दश सुवर्ण के लिए बाँधा हुआ जुआरी भाग गया,भाग गया। तो (उसे) पकड़ो पकड़ो। ठहरो ठहरो दूर से ही दिखलायी पड़ गया है।

द्यूतकर:- यदि व्रजसि पातालमिन्दं शरणं च सांप्रतं यासि।
सभिकं वर्जयित्वैकं रूद्रोऽपि न रक्षितं तरति ।। **3** ।।

अन्वय – यदि पातालम् व्रजसि इन्द्रम् शरणम् च यासि (किन्तु) एकम् सभिकम् वर्जयित्वा रूद्र: अपि (त्वाम्) रक्षितुं न तरति ।। **3** ।।

अर्थ- यदि (अपने बचाव के लिए तुम) भूमि से नीचे के लोक (पाताल लोक) में जाते हो अथवा (देवताओं के स्वामी) इन्द्र की शरण में चले जाते हैं तो (भी) इस समय केवल सभिक को छोड़कर शिव भी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते ।। **3** ।।

माथुर:- कुत्र कुत्र सुसभिकविप्रलम्भक !
पलायसे रे भयपरिवेषितांगक !
पदे पदे समविषमं स्खलन्कुलं
यशोऽतिकृष्णं कुर्वन् ।4।।

अन्वय- हे सुसभिकविप्रलम्भक ! भयपरिवेषितांगक ! कुलं यश: अतिकृष्णम् कुर्वन् पदे पदे समविषमम् स्खलन, कुत्र कुत्र पलायसे ।। **4** ।।

अर्थ- माथुर – अरे (मुझ जैसे) सच्चे और सीधे जुआरियों के अगुआ (सुसभिक) को भी धोखा देने वाले ! डर के मारे काँपते हुए शरीर वाले ! अपने कुल एवं कीर्ति को अत्यन्त काली करते हुए, पग-पग पर ऊँचे-नीचे लड़खड़ाते हुए तू कहाँ-कहाँ भाग रहा है ।। **4** ।।

टिप्पणी- इस श्लोक में रूचिरा छन्द है।

द्यूतकर:- एष व्रजति। इयं प्रनष्टा पदवी।

द्यूतकर:- जुआरी- (पैरों के चिह्न को देखकर) यह जा रहा है। यहाँ पैर के चिह्न गायब हो गये (अर्थात् जाने के पैर के चिह्न गायब हो गये किन्तु आने के हैं)।

माथुर:- (आलोक्य सवितर्कम्) अरे विप्रतीपौ पादौ प्रतिमाशून्यं देवकुलम् (विचिन्त्य) द्यूतो द्यूतकरो विप्रतीपाभ्यां पादाभ्याम् देवकुलं प्रविष्ट:।

माथुर: - (देखकर तर्कपूर्वक) अरे पैर (पैरों के चिह्न) उलटे हैं। देवताओं का यह मन्दिर मूर्ति से रहित है। (सोच कर) ठग जुआरी उलटे पैरों से मन्दिर में घुस गया है।

द्यूतकर:- ततोऽनुसराव:

द्यूतकर:- तो (उसका) पीछा करते हैं।

माथुर:- एवं भवेत्।

माथुर:- ऐसा ही हो। (उभौ देवकुलप्रवेशं निरूपयाम: दृष्ट्वाऽन्योन्यं संज्ञाप्य)

द्यूतकर:- कथं काष्ठमयी प्रतिमा: ?

द्यूतकर:- क्या यह काठ की मूर्ति है ?

माथुर:- अरे न खलु ,न खलु शैलप्रतिमा एव भवतु । एहि द्यूतेन क्रीडाव: । (इति बहुविधं द्यूतं क्रीडति)

माथुर:- अरे? नहीं,नहीं पत्थर की मूर्ति है। ऐसा कह कर उसे विविध प्रकार से हिलाता डुलाता है और इशारा करके अच्छा ऐसा हो। आओ जुआ खेलें। ऐसा कह कर बहुत तरह से जुआ खेलता है)

संवाहक- (द्यूतेच्छाविकारसंवरणं बहुविधं कृत्वा, स्वगतम्)

अरे, कत्ताशब्दो निर्माणकस्य हरति हृदयं मनुष्यस्य।
ढ़क्काशब्द इव नराधिपस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य ।। 5 ।।
जानामि न क्रीडिष्यामि सुमेरूशिखरपतनसंनिभं द्यूतम्।
तथापि खलु कोकिलमधुर: कत्ताशब्दो मनो हरति ।। 6 ।।

अन्वय- अरे ! कत्ताशब्द: निर्माणकस्य मनुष्यस्य प्रभ्रष्टराज्यस्य नराधिपस्य ढक्काशब्द: इव हृदयम् हरति **।। 5 ।।**

द्यूतम् सुमेरूशिखरपतनसंन्निभम् जानामि (अत:) न क्रीडिष्यामि तथापि कोकिलमधुर: कत्ताशब्द: खलु मन: हरति **।। 6 ।।**

अर्थ – संवाहक – (जुआ खेलने की इच्छा को जैसे तैसे रोक कर अपने आप)

यह कौड़ी अथवा पासा की (खनखनाहट की) आवाज निर्धन (जुआरी) मनुष्य के हृदय को उसी तरह लुभाती है जिस प्रकार हाथ से राज्य निकल जाने वाले किसी राजा को ढक्का अर्थात् भेरी का शब्द (लड़ाई आदि के लिए ललचाता है) ।। 5 ।।

जुआ (खेलना) सुमेरू पर्वत की चोटी से गिरने के समान (हानिकारक) है (मैं यह) जानता हूँ। अत: नहीं खेलूँगा तथापि कोयल के गले से निकली हुई मीठी कूक के समान कौड़ी की खनखनाहट मन को लुभा ही लेती है ।। 6 ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा विपुला छन्द है ।। 5,6 ।।

इसके पश्चात् संवाहक अपने जुआ खेलने के लोभ को रोक नहीं पाता है और जुआरी और माथुर के सामने आ जाता है। उनके द्वारा पकड़ लिए जाने पर वह कहता है कि उसके पास दश स्वर्ण मुद्रा नही है तो माथुर कहता है कि स्वयं को बेच कर दो वह बाजार में स्वयं को बेचने जाता है किन्तु कोई उसे खरीदने को तैयार नहीं होता है तब वह कहता है कि आर्य चारूदत्त के धनहीन हो जाने के कारण मैं अभागा होकर जी रहा हूँ। माथुर उसे स्वर्ण मुद्रा देने के लिए पुन: कहता है और उसके कहाँ से दूँ कहने पर उसे पकड़ कर घसीटता है।

(तत: प्रविशति दर्दुरक:)

दर्दुरक- भो: ! द्यूतं हि नाम पुरूषस्यासिंहासनं राज्यम्।

न गणयति पराभवं कुतश्चित्हरति ददाति च नित्यमर्थजातम् ।
नृपतिरिव निकाममायदर्शी विभववता समुपास्यते जनेन ॥ 7 ॥

अन्वय- (द्यूतं) कुतश्चित् पराभवं न गणयति, नित्यम् अर्थजातम् हरति, ददाति च, निकामम् आयदर्शी राजा इव विभावता जनेन समुपास्यते **॥ 7 ॥**

अर्थ- (इसके बाद दर्दुरक प्रवेश करता है)

दर्दुरक:- अरे ! जुआ तो मनुष्य का बिना सिंहासन का राज्य हे ।

(जुआ) किसी से अपमान की परवाह नहीं करता है । (यह) नित्य ही धन लेता(उत्पन्न) और देता है । राजा की भाँति काफी लाभ दिखलाने वाला जुआ बड़े-बड़े धनी व्यक्तियों के द्वारा भी सेवित होता है (अर्थात् खेला जाता है) ॥ 7 ॥

टिप्पणी- इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं पुष्पिताग्रा छन्द है ।

अपि च -

द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव ।
दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव ॥ 8 ॥

अन्वय- द्यूतेन एव द्रव्यम् लब्धम् द्यूतेन एव दारा: , मित्रम् (लब्धम्) द्यूतेन एव दत्तम्, भुक्तम् , द्यूतेन एव सर्वम् नष्टम् ॥ 8 ॥

अर्थ- और भी – जुआ से ही मैंने धन कमाया, स्त्री और मित्र जुएं से ही प्राप्त किया, जुएं से ही (किसी को कुछ) दिया और खाया और जुए से ही (अपना) सब कुछ गवाँ दिया ॥ 8 ॥

टिप्पणी – इस श्लोक में विषम अलंकार एवं विद्युन्माला छन्द है ।

अपि च -

त्रेताहृतसर्वस्व: पावरपतनाच्च शोषितशरीर: ।
नर्दितदर्शितमार्ग: कटेन विर्निपातितोयामि ॥ 9 ॥

अन्वय- त्रेताहृतसर्वस्व: पावरपतनात् शोषितशरीर:नर्दितदर्शितमार्ग:कटेन विनिपातित: यामि ॥ 9 ॥

अर्थ - और भी – त्रेता ('तीया'नामक एक खास दाँव) के कारण सब कुछ छीन लिया जाने वाला, पावर('दूआ' नामक एक प्रकार का दाँव) के द्वारा सन्न शरीर वाला, नर्दित ('नक्का' नामक एक तरह का दाँव) के द्वारा (घर का रास्ता दिखाया जाने वाला) कट ('पूरा'नामक एक ढंग का दाँव) के द्वारा मारा हुआ (मै) जा रहा हूँ (अर्थात् तोया, दूआ और नक्का के कारण मैं पूर्ण रूप से मिट चुका हूँ) ॥ 9 ॥

टिप्पणी – इस श्लोक में त्रेता, पावर, नर्दित और कट ये चार जुए के विशेष दाँव बताये गए हैं। इस श्लोक में आर्या छन्द है ।

(अग्रतोऽवलोक्य) अयमस्माकं पूर्वसभिको माथुर इत एवाभिवर्तते । भवतु, अपक्रमितुं न शक्यते । तदवगुण्ठयाभ्यात्मानम् । (बहुविधं नाट्यं कृत्वा स्थित:, उत्तरीयं निरीक्ष्य)

अयं पट: सूत्रदरिद्रतां गतो ह्ययं पटश्छिद्रशतैरलंकृत: ।
अयं पट: प्रावरितु न शक्यते ह्ययं पट: संवृत: एव शोभते ॥ 10 ॥

अन्वय- अयम् पट: सूत्रदरिद्रताम् गत: अयम् पट: हि छिद्रशतै: अलंकृत: अयम् पट: प्रावरितुम् न शक्यते अयम् पट: हि संवृत: एव शोभते ॥ 10 ॥

अर्थ- (सामने की ओर देखकर) यह हमारा पहले का सभिक (जुआ कराने वाला) माथुर इसी ओर आ रहा है। अच्छा , भागा तो नही जा सकता। इसलिए अपने शरीर को ढक लेता हूँ।(कई प्रकार से शरीर ढकने का नाटक करके खड़ा हो जाता है, अपने दुप्पटे को देखकर)

यह कपड़ा सूत्रों की जीर्णता को प्राप्त हो गया है, यह वस्त्र निश्चय ही सैकड़ों छेदों से परिपूर्ण है। यह वस्त्र शरीर ढ़कने के लायक नही है। यह कपड़ा लपेटा हुआ रहने पर ही अच्छा लगता है ॥ 10 ॥

टिप्पणी- इस श्लोक में वंशस्थ छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1

निम्नलिखित श्लोंको का अनुवाद कीजिए -

1- यदि व्रजसि पातालमिन्दं शरणं च सांप्रतं यासि।
सभिकं वर्जयित्वैकं रूद्रोऽपि न रक्षितं तरति ॥

2- **द्रव्यं लब्धं द्यूतेनैव दारा मित्रं द्यूतेनैव।**
दत्तं भुक्तं द्यूतेनैव सर्वं नष्टं द्यूतेनैव ॥--

4.4 श्लोक संख्या 11 से 20 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

अथवा किमयं तपस्वी करिष्यति ? यो हि -

पादेनैकेन गगने द्वितीयेन च भूतले।
तिष्ठाभ्युल्लम्बितस्तावद्यावत्तिष्ठति भास्कर: ॥ 11 ॥

अन्वय- एकेन पादेन गगने द्वितीयेन च भूतले उल्लम्बित: तावत् तिष्ठाम यावत् भास्कर: तिष्ठति ॥ 11 ॥

अर्थ- अथवा यह तुच्छ (माथुर मेरा) कर ही क्या सकता है ? जो कि (मैं) - एक पैर आकाश में करके और दूसरा पैर जमीन पर रख तब तक लटका हुआ रह सकता हूँ जब तक सूरज रहता है। (अर्थात् जब मैं पूरे दिन इतना कठिन कार्य कर सकता हूँ तो माथुर से डरने की क्या आवश्यकता ? वह इससे और कठोर दण्छ क्या देगा।

टिप्पणी – इस श्लोक में पथ्यावक्त्र छन्द है ॥

माथुर: - द्वापय द्वापय।

माथुर:- दिलाओ, दिलाओ।

संवाहक:- कुतो दास्यामि ।

संवाहक – कहाँ से दूँ ?

(माथुर: कर्षति) (माथुर घसीटता है)

दर्दुरक: - अये ! किमेतदग्रत: ? (आकाशे) किं भवानाहं- अयं द्यूतकर: सभिकेन खलीक्रियते न कश्चिन्मोचयति इति ? नन्वयं दर्दुरो मोचयति। (उपसृत्य) अन्तरमन्तरम्। (दृष्टवा) अये कथं माथुरो धूर्त: ?अयमपि तपस्वी संवाहक: -

अर्थ- दर्दुरक:- अरे ! यह सामने क्या हो रहा है ?(आकाश की ओर) क्या कहा आपने कि 'यह जुआरी जुआ कराने वाले (सभिक) के द्वारा मार-पीट कर अपमानित किया जा रहा है, और कोई छुड़ाता भी नही है'। तो लो यह दर्दुरक छुड़ाता है। (समीप जाकर) बस, बस हटो हटो। (देखकर) अरे क्या यह धूर्त 'माथुर' है ? और यह दूसरा बेचारा 'संवाहक' है -

य: स्तब्धं दिवसान्तमानतशिरा नास्ते समुल्लम्बिती
यस्योद्धर्षणलोष्टकैरपि सदा पृष्ठे न जात: किण:।
यस्यैतच्च न कुक्कुरैरहरजंघान्तरं चर्व्यते।
तस्यात्यायतकोमलस्य सततं द्यूत: संगेन किम् ? ॥ 12 ॥

अन्वय – य: दिवसान्तम् आनतशिरा: (सन्) स्तब्धम् समुल्लम्बित न आस्ते, यस्य पृष्ठे उद्धर्षणलोष्ठकै: अपि सदा किण: न जात: यस्य च एतत् जंघान्तरम् कुक्कुरै: अह: अह: न चर्व्यते अत्यायतकोमलस्य तस्य सततम् द्यूतप्रसंगेन किम् ? ॥ 12 ॥

अर्थ- जो व्यक्ति (मेरे समान) दिन भर नीचे शिर करके (और ऊपर पैर करके) चुपचाप लटका हुआ नही रह सकता। जिसकी पीठ पर (पैसा न दे सकने पर दूसरे जुआरियों के द्वारा) नित्य घसीटने से ढेलो के द्वारा घट्ठा (चोट का चिह्न) भी नहीं पड़ा है। (पैसा न दे सकने के कारण भागने पर जुआरियों के द्वारा दौड़ाए गये) कुत्तों से जिसकी जांघ का यह भीतरा हिस्सा प्रतिदिन काटा नहीं जाता ऐसे अत्यन्त कोमल व्यक्ति का निरन्तर जुआ खेलने से क्या प्रयोजन ? अर्थात् जुआ खेलना आसान काम नहीं है इसमें कठिन से कठिन दु:ख भोगने पड़ते हैं। अत: कोमल व्यक्तियों को इधर नही आना चाहिए।

टिप्पणी- इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

दर्दुरक: - अरे मूर्ख ! नन्वहं दशसुवर्णान्कटकरणेन प्रयच्छामि। तत्किं यस्यास्ति धनं स किम्क्रोडे कृत्वा दर्शयति ? अरे -

दुर्वर्णोऽसि विनष्टोऽसि दशस्वर्णस्य कारणात्।
पञ्चेन्द्रियसमायुक्तो नरो व्यापाद्यते त्वया ॥ 13 ॥

अन्वय- (हे माथुर ! त्वम्) दुर्वर्ण: असि, विनष्ट: असि, (यत्) त्वया दशस्वर्णसय कारणात् पञ्चेन्द्रियसमायुक्त: नर: व्यापाद्यते ॥ 13 ॥

अर्थ- दर्दुरक:- अरे मूर्ख ! सोने की दश मोहरें तो मैं एक दाँव से दे सकता हूँ। तो जिसके पास धन होता है तो क्या वह उसको अंक (गोद) में रख कर दिखलाता फिरता है। अरे - माथुर ! तुम अधम एवं पतित हो (जो कि) सोने की दश मोहरों के कारण से पञ्च इन्द्रियों से युक्त मनुष्य को मार रहे हो ।। **13** ।।

टिप्पणी - इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है।

संवाहक:- (आत्मगतम्) कथं धनिकात्तुलितमस्या भयकारणम् ? सुष्ठु खल्वेवमुच्यते -

य आत्मबलम् ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्य: ।
तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते ।। 14 ।।

अन्वय- य: मनुष्य: आत्मबलम् ज्ञात्वा तुलितं भारं वहति, तस्य स्खलनं न जायते कान्तारगत: च (स:) न विपद्यते ।। **14 ।1**

अर्थ–संवाहक–(अपने मन में) क्या मेरे ही समान इसको भी धनी व्यक्ति से भय लग रहा है? वास्तव में यह सत्य ही कहा जाता है – जो मनुष्य अपनी सामर्थ्यानुसार (ताकत के अनुसार) बोझ उठाता है वह कभी भी गड्ढे में नहीं गिरता है और न ही दुर्गम मार्ग पर चलने से नष्ट ही होता है। अर्थात् यदि मैंने अपने धन का ख्याल करके जुआ खेला होता तो आज यह स्थिति नही होती ।। **14** ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं आर्या छन्द है।

संवाहक:- **सत्कारधन: खलु सज्जन: कस्य न भवति चलाचलं धनम् ।**
य: पूजविद्रुमपि न जानाति न पूजाविशेषमपि जानाति ।। 15 ।।

अन्वय – सत्कारधन: सज्जन: (भवति) खलु कस्य धनम् चलाचलम् न भवति। य: पूजयितुम् अपि न जानाति अपि य: पूजाविशेषम् जानाति ।। 15 ।।

अर्थ- संवाहक:- दूसरों का सम्मान करना ही सज्जनों का धन होता है। किसका धन चंचल नहीं होता है अर्थात् (सभी लोगो का धन नश्वर होता है)। जो व्यक्ति दूसरों को आदर भी करना नहीं जानता है ,वह क्या आदर के विशेष तरीके को जानता है ? (अर्थात् नहीं जानता है) ।। **15** ।।

टिप्पणी – इस श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार एवं वैतालीय छन्द है।

माथुर:- **कस्य त्वं तनुमध्ये अधरेण रतदष्टदुर्विनीतेन ।**
जल्पसि मनोहरवचन्मालोकयन्ती कटाक्षेण ।। 16 ।।

अन्वय – हे तनुमध्ये ! कटाकक्षेण आलोकयन्ती त्वम्, रतदष्टदुर्विनीतेन अधरेण मनोहरवचनम् कस्य जल्पसि ।**1 16** ।।

अर्थ- हे क्षीण कटि वाली, कटाक्ष से देखती हुई रतिकाल में क्षत इस धृष्ट ओठ से मनोहर वचन किससे बोल रही हो ।। 16 ।1

टिप्पणी - इस श्लोक में गाथा छन्द है।

संवाहक:- आर्ये ! कृतो निश्चय:,

द्यूतेन तत्कृतं मम यद्विहस्तं जनस्य सर्वस्य ।
इदानीं प्रकटशीर्षो नरेन्द्रमार्गेण विहरिष्यामि ।। 17 ।।

अन्वय- द्यूतेन मम तत् कृतम् यत् सर्वस्य जनस्य (समक्षम्) विहस्तम् इदानीम् प्रकटशीर्ष: नरेन्द्रमार्गेण विहरिष्यामि **।। 17 ।।**

अर्थ- संवाहक - आर्य, मैंने निश्चय कर लिया है। (घूम कर) जुएं ने मेरे लिए ऐसा किया कि सब व्यक्तियों से व्याकुल (अपमानित)करा डाला। इस समय खुले सिर राजमार्ग पर घूमूंगा **।। 17 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में आर्या छन्द है।

कर्णपूरक:- अपनयत बालकजनं त्वरितमारोहत वृक्षप्रासादम्।
किं न खलु प्रेक्षव्यं पुरतो दुष्ट हस्तीत एति ।। 18 ।।

अपि च - विचलति नूपुरयुगलं छिद्यन्ते च मेखला मणिखचिता:।
वलयाश्च सुन्दरतरा रत्नाकुरजालप्रतिबद्धा: ।। 19 ।।

अन्वय- बालकजन: अपनयत, वृक्षप्रासादम् त्वरितम् आरोहत, किम् न खलु प्रेक्षव्यम् पुरत: दुष्ट: हस्ती इत: एति **।। 18 ।।**

अन्वय- नूपुरयुगलं विचलति मणिखचिता: मेखला: रत्नाकुरजालप्रतिबद्धा: सुन्दरतरा वलया: च छिद्यन्ते **।। 19 ।।**

अर्थ – बालकों को (मार्ग से) हटा लो, शीघ्र ही पेड़ों एवं घरों पर चढ़ जाओ। क्या देख नहीं रहे हो कि बदमाश हाथी सामने से इधर ही आ रहा है **।। 18 ।।**

अर्थ - और भी – (हाथी के भय से भागती हुई स्त्रियों के) पायजेब का जोड़ा गिर रहा है, रत्नों से जड़ी हुई करधनियाँ , तथा छोटे-छोटे रत्नों से जड़े हुए सुन्दर-सुन्दर कंगन (भागने से आपसी धक्का-मुक्की के कारण) टूट रहे हैं **।। 19 ।।**

टिप्पणी – श्लोक संख्या 18 एवं 19 में आर्या छन्द है।

नोट - इसके बाद कर्णपूरक वसन्तसेना को यह बताता है कि उस दुष्ट हाथी ने एक सन्यासी को अपनी सूँड़ में लपेट लिया तब मेरे द्वारा उस सन्यासी को हाथी से बचाया गया। यह सुनकर वसन्तसेना कहती है कि तुमनें यह बहुत अच्छा कार्य किया किन्तु उसके बाद क्या हुआ ? तब कर्णपूरक कहता है कि उसके बाद सम्पूर्ण उज्जयिनी की जनता ने मुझे वाह कर्णपूरक वाह ! यह कह कर घेर लिया तब उनमें से एक नागरिक (चारूदत्त) ने अपने आभूषणविहीन अंगों को देख कर लम्बी साँस लेकर यह दुप्पटा मेरे ऊपर फेंक दिया। वसन्तसेना के द्वारा उस दुप्पटे को ओढ लेने पर चेटी और कर्णपूरक कहते हैं कि यह आर्या के शरीर पर अच्छा लग रहा है। वसन्तसेना उस दुप्पटे के बदले में उसे आभूषण देती है और पूँछती है कि आर्य चारूदत्त कहाँ होगें। तब कर्णपूरक कहता है कि इसी मार्ग पर होगें और वसन्तसेना चेटी के साथ छत पर चारूदत्त को देखने चली जाती है।इसी के साथ यह द्यूतकरसंवाहक तामक द्वितीय अंक समाप्त हो जाता है।

।। द्यूतकरसंवाहक नामक द्वितीय अंक समाप्त ।।

अभ्यास प्रश्न 2-

निम्नलिखित वाक्यों में सत्य असत्य बताइये –

1. शकार बौद्ध भिक्षु बन जाता है।

2. इस अंक का नाम अलंकारन्यास है।
3. चारूदत्त कर्णपूरक को अपना दुशाला उपहार स्वरूप देता है।
4. जुआरियों के मुखिया का नाम माथुर है।
5. वसन्तसेना की दासी का नाम मदनिका है।

अभ्यास प्रश्न 3 -

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए -

1- य आत्मबलम् ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्य: ।
तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते ।।

2- सत्कारधन: खलु सज्जन: कस्य न भवति चलाचलं धनम् ।
य: पूजविद्रुमपि न जानाति न पूजाविशेषमपि जानाति ।।

4.5 सारांश:-

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि अंक के प्रारम्भ में मदनिका वसन्तसेना की माताजी का सन्देश लेकर आती है कि वह स्नान करके देवताओं की पूजा कर ले। उसके द्वारा स्नान के लिए मना कर देने पर मदनिका उसके व्यथित होने का कारण पूछती है तब वसन्तसेना अपनी चेटी मदनिका के साथ चारूदत्त सम्बन्धी वार्तालाप करती है। इसी समय संवाहक आता है। जुआरी और द्यूतकरों का मुखिया (माथुर) उसका पीछा करते हुए आते हैं। वसन्तसेना अपना स्वर्णाभूषण देकर संवाहक को छुड़ाती है। संवाहक विरक्त होकर बौद्व भिक्षु बन जाता है उसी दिन प्रातः काल वसन्तसेना का हाथी रास्ते में उसे पकड़ कर कुचलना ही चाहता है कि वसन्तसेना का सेवक कर्णपूरक उसे बचाता है। इससे प्रसन्न होकर चारूदत अपना बहुमूल्य दुशाला कर्णपूरक को उपहार में दे देते हैं।

4.6 शब्दावली:-

शब्द **अर्थ**

ताडित:	मारा गया
झटिति	जल्दी ही
सभिकम्	जुआरियों के अगुआ को
कत्ताशब्द:	कौड़ी की खनखनाहट
शैलप्रतिमा	पत्थर की मूर्ति
वर्जयित्वा	छोड़कर
अतिकृष्णम्	अत्यन्त काला
शोषितशरीर:	शुष्क शरीर वाला
संवृत:	लपेटा हुआ
आनत शिरा:	नीचे शिरवाला
स्खलनम्	पतन
नुपूरयुगलम्	पायजेब का जोड़ा
पतन	गिरना

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 का उत्तर इकाई में देखें।

अभ्यास प्रश्न 2 – (1) असत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) सत्य (5) सत्य

अभ्यास प्रश्न 3 का उत्तर इकाई में देखें।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.9 उपयोगी पुस्तकें

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थम कानपुर

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1- द्वितीय अंक का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

2- जुयें में हारे हुए व्यक्ति की क्या दशा होती है।

तृतीय सेमेस्टर / SEMESTER- III

खण्ड 3

मृच्छकटिकम् व्याख्या

इकाई 1 – मृच्छकटिकम् तृतीय अंक श्लोक संख्या 1 से 15 तक

इकाई की रूपरेखा

- 1.1 प्रस्तावना
- 1.2 उद्देश्य
- 1.3 श्लोक संख्या 1 से 15 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या
- 1.4 सारांश
- 1.5 शब्दावली
- 1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
- 1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ
- 1.8 उपयोगी पुस्तकें
- 1.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मृच्छकटिकम् प्रकरण के तृतीय खण्ड की यह प्रथम इकाई है । इससे पूर्व की इकाई के अध्ययन से आप यह जान चुके हैं कि किस प्रकार वसन्तसेना संवाहक को छुड़ाती है और संवाहक बौद्ध भिक्षु बन जाता है उन्मत्त हाथी के द्वारा कर्णपूरक उसे बचाता है । निर्धन होने पर भी चारूदत्त उसे पुरस्कृत करता है ।

प्रस्तुत इकाई में आप तृतीय अंक का अध्ययन करेंगे जिसका नाम सधिच्छेद है। इस अंक के प्रारम्भ मे चारूदत्त और मैत्रेय संगीत सुनकर आते हैं । वे घर में आकर सो जाते हैं । इधर मदनिका को दासता से मुक्त कराने के लिए शर्विलक चसरूदत्त के घर में सेंध लगाता है और वसन्तसेना के आभूषणों को चुरा कर ले जाता है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप श्लोको की व्याख्या कर सकेंगे और यह बता सकेंगे कि चारूदत्त भी संगीत प्रेमी हैं इसीलिए वह विदूषक से रेमिल के संगीत की प्रशंसा करता है और उसका संगीत सुनकर रात में वापस घर आकर सो जाते हैं । इसी बीच शर्विलक चारूदत्त के घर में सेध लगा कर वसन्तसेना के आभूषणों को चोरी कर ले जाता है ।

1.2 उद्देश्य:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप -

- श्लोंको की व्याख्या कर सकेंगे ।
- श्लोंको के साहित्यिक सौन्दर्य को बता सकेंगे ।
- सज्जन व्यक्ति सदैव अपने सेवको के हितों का ध्यान रखते हैं इसकी व्याख्या कर सकेंगे।
- यह समझा सकेंगे कि मनुष्य में जो भी स्वाभाविक दोष होते हैं उन्हें दूर नहीं किया जा सकता ।
- संगीत में प्रयुक्त मूर्छना शब्द का क्या अर्थ होता है यह बता सकेंगे ।
- विश्लेषित कर सकेंगे कि धनी किन्तु दुष्ट स्वामी से सेवको पर दया करने वाला सज्जन स्वामी निर्धन होने पर भी श्रेष्ठ होता है ।

1.3 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 1 से 15 तक मूल पाठ,अन्वय, अर्थ एवं व्याख्या

(तत: प्रविशति चेट:) (उसके बाद चेट प्रवेश करता है)

चेट:- सुजन: खलु भृत्यानुकम्पक: स्वामी निर्धन्कोऽपि शोभते ।
पिशुन: पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्कर: खलु परिणामदारूण: ।। 1 ।।

अपि च -

सस्यलम्पटबलीवर्दो न शक्यो वारयितु-
मन्य कलत्र प्रसक्तो न शक्यो वारयितुम् ।

द्यूतप्रसक्तमनुष्यो न शक्यो वारयितुं
योऽपि स्वाभाविकदोषो न शक्यो वारयितुम् ।1 2 ॥

अन्वय- भृत्यानुकम्पक: सुजन: स्वामी निर्धनक: अपि (सन्) खलु शोभते पुन:,द्रव्यगर्वित: पिशुन: दुष्कर: परिणामदारूण: खलु (भवति) **॥ 1 ॥**

अपिच–सस्यलम्पटबलीर्वद: वारयितुं न शक्य:, अन्यकलत्रप्रसक्त: वारयितुं न शक्य:,द्यूतप्रसक्तमनुष्य: वारयितुं न शक्य: य: अपि स्वाभाविकदोष: (अस्ति स:) वारयितुम् न शक्य: ॥ 2 ॥

अर्थ – **चेट** – सेवको पर दया करने वाला सज्जन स्वामी निर्धन होने पर भी सुखदायी (शोभित) होता है। किन्तु धन के अहंकार में चूर दुष्ट स्वामी दु:ख से सेवा करने योग्य तथा अन्त में भंयकर होता है ॥

और भी – हरे धान का लोभी सांड़, परस्त्री में आसक्त रहने वाला पुरूष, जुआ खेलने का लती मनुष्य इन सब को रोका नहीं जा सकता । और जो भी स्वाभाविक बुराइयां होती है उन्हें भी छोड़ा नहीं जा सकता ॥ 2 ॥

अर्थात् धनी किन्तु अहंकारी मालिक की सेवा करने से तो श्रेष्ठ यह होगा कि किसी निर्धन किन्तु सज्जन व्यक्ति की सेवा करे क्योंकि सज्जन व्यक्ति सदैव अपने सेवको के हितों का ध्यान रखते हैं । श्लोक संख्या 2 का भाव यह है कि मनुष्य में जो भी स्वाभाविक दोष होते हैं उन्हें दूर नहीं किया जा सकता ।

टिप्पणी – श्लोक सेख्या 1 में अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकार तथा वैतालीय छन्द है तथा श्लोक संख्या 2 में अप्रस्तुतप्रशंसा एवम् दृष्टान्त अलंकार की संसृष्टि है तथा शकरी जाति नामक छन्द है ।

कापि वेलार्यचारूदत्तस्य गान्धर्वं श्रोतुं गतस्य । अतिक्रामत्यर्धरजनी अद्यापि नागच्छति । तद्यावद्वहिर्द्वारशालायां गत्वा स्वप्स्यामि । (इति तथा करोति)

(तत: प्रविशति चारूदत्तो विदूषकश्च)

अर्थ – गीत सुनने के लिए गये हुए आर्य चारूदत्त को कितनी देर हो गई । आधी रात बीत रही है । अब भी नहीं आये । तो तब तक बाहरी दरवाजे वाली कोठरी में सोऊँगा ।(वैसा ही करता है)

(इसके बाद चारूदत्त और विदूषक प्रवेश करते हैं)

चारूदत्त: - अहो अहो ! साधु साधु ,रेमिलेन गीतम् । वीणा हि नामासमुद्रोत्थितं रत्नम् । कुत: -

उत्कण्ठितस्य हृदयानुगुणा वयस्या
संकेतके चिरयति प्रवरो विनोद: ।
संस्थापना प्रियतमा विरहातुराणां
रक्तस्य रागपरिवृद्धिकर: प्रमोद: ॥ 3 ।1

अन्वय – (वीणा) उत्कण्ठितस्य , हृदयानुगुणा वयस्या , संकेतके चिरयति प्रवर: विनोद:, विरहातुराणाम् ,प्रियतम: संस्थापना रक्तस्य रागपरिवृद्धिकर: ,प्रमोद: (अस्ति) **।।3।।**

चारूदत्त – वाह वाह ! रेमिल ने बहुत अच्छा गाया । वीणा तो , सही में समुद्र से निकला हुआ रत्न

है। क्योकि -

अर्थ – (वीणा) अत्यधिक विरह पीड़ासे व्याकुल व्यक्ति के लिए हृदयानुरूप सखी है। इशारा किये गये स्थान पर आने में प्रेमी के विलम्ब करने पर यह वीणा मनबहलाव का अच्छा साधन है। विरह से पीड़ित को प्रिय ढाढ़स बधाने वाली (प्रेमिका) है। और प्रेमीजनों के राग(दूसरें के प्रति कामपूर्ण प्रेम) को बढ़ाने वाला मनोरंजन है **।। 3 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक में वीणा का वयस्या ,आदि अनेक रूपों में उल्लेख किया गया है, अत: उल्लेख अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

विदूषक:- भो;एहि !गृहं गच्छाव:।

अर्थ- विदूषक- अजी, आइए घर चलें।

चारूदत्त:- अहो! सुष्ठु भावरेमिलेन गीतम्।

अर्थ- चारूदत्त- अहा ! 'रेमिल' महोदय ने अच्छा गाया।

विदूषक:- मम तावद्वाभ्यामेव हास्यं जायते। स्त्रियाँ संस्कृतं पठन्त्या, मनुष्येण च काकलीं गायत:। स्त्री तावत्संस्कृतं पठन्ती, दत्तनवनस्येव सृष्टि:, अधिकं सूसूशब्दं करोति। मनुष्योऽपि काकलीं गायन् ,शुष्कसुमनोदामवेष्टितो वृद्धपुरोहितं इव मन्त्रं जपन्,दृढ़ मे न रोचते।

अर्थ- विदूषक – मुझे तो संस्कृत पढ़ती हुई स्त्री तथा धीमी राग (काकली) में गाते हुए मनुष्य,इन दोनों पर ही हँसी आती है। संस्कृत पढ़ती हुई स्त्री पहले पहल ब्याई हुई(प्रसूता) अत: नाक में नाथी गयी गाय के समान बहुत अधिक सू,सू, शब्द करती है। महीन स्वर से गाता हुआ मनुष्य भी ,सूखे फूलों की माला पहने मन्त्र जपते हुए बूढ़े पुरोहित की भाँति मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता।

चारूदत्त:- वयस्य ! सुष्ठुं खल्वद्य गीतं भावरेमिलेन। न च भवान्परितुष्ट:।

रक्तं च नाम मधुरं च समं स्फुटं च
भावान्वितं च ललितं च मनोहरं च।
किंवा प्रसस्तवचनैर्बहुभिर्मदुक्तै:-
रन्तर्हितां यदि भवेदवनितेति मन्ये ।। 4 ।।

अपि च -

तं तस्य स्वरसंक्रमं मृदुगिर: श्लिष्टं च तन्त्रीस्वनं
वर्णानामपि मूर्च्छनान्तरगतं तारं विरामे मृदुम्।
हेलासंयमितं पुनश्च ललितं रागाद्विरूच्चारितं
यत्सत्यं विरतेऽपि गीतसमये गच्छामि श्रुण्वन्निव ।। 5 ।।

अन्वय- (गीतम्) नाम रक्तम् च मधुरं च, समम् स्फुटं च, भावान्वितम् च ललितं च, मनोहरं च (आसीत्) वा मदुक्तै: बहुभि:, प्रशस्तवचनै: किम् ?यदि वनिता अन्तर्हिता भवेत् इति मन्ये**।।4 ।।**

अन्वय- सत्यम् यत् ,गीत समये विरते अपि वर्णानाम्, मूर्च्छनान्तर गतम् अपि तारम् विरामे मृदुम् पुन: च हेलासंयमितम् रागद्विरूच्चारितम् , तस्य मधुरगिर: तम् स्वरसंक्रमम् श्लिष्टम्, तन्त्रीस्वनम् च श्रुण्वन् इव अहम् गच्छामि **।। 5 ।1**

अर्थ- चारूदत्त – मित्र ! रेमिल महोदय ने आज सच में बहुत ही अच्छा गीत गाया फिर भी आप प्रसन्न नहीं हुए।

(रेमिल का यह गीत) निश्चय ही रागपूर्ण,सुनने में मधुर लगने वाला(स्वर तथा लय आदि की) समता वाला, स्पष्ट, भावपूर्ण, ललित एवं मनोहर था। अथवा हमारे बहुत प्रशंसा करने से क्या (लाभ)। मुझे तो ऐसा लगता था कि (रेमिल के रूप में) मानों स्त्री छिपी हुई हो ॥ 4 ॥

और भी - यह सत्य है कि गाने का समय बीत जाने पर भी अक्षरों की मूर्च्छना (स्वरों का क्रमश: उतार और चढ़ाव) के अन्तर्गत (चढ़ाने के समय) काफी ऊँचा,विराम के समय कोमल और पुन: लीलापूर्वक नियन्त्रित, रागों में दो बार उच्चारण की हुई उस (रेमिल) की कोमल वाणी की उस स्वरयोजना को तथा (उससे) मिली हुई वीणा की आवाज को, मैं सुनता हुआ सा जा रहा हूँ (अर्थात् सब प्रकार से सुन्दर रेमिल का गाना अब भी हमारे कानों में गूंज रहा है) ॥ 5 ॥

टिप्पणी – इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है। ॥ 4 ॥

इस श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द है।॥ 5 ।1

विदूषक:- भो वयस्य ! आपणान्तररथ्याविभागेषु सुखं कुक्कुरा अपि सुप्ता:। तद् गृहं गच्छाव:। (अग्रतोऽवलोक्य) वयस्य ! पश्य पश्य एषोऽप्यन्धकारस्येवावकाशं दद्न्तरिक्षप्रासादादवतरति भगवांश्चन्द्र:।

अर्थ –विदूषक:- हे मित्र ! बाजार की गलियों में स्थान -स्थान पर कुत्ते भी सुख से सो गये हैं। तो घर चलें। (सामने देखकर) मित्र देखो,देखो। अंधेरे को (फैलने के लिए) जगह (अवकाश)सा देते हुए चन्द्रदेव भी आकाश रूपी महल से उतर रहें हैं।

चारूदत्त:- सम्यगाह भवान् -

चारूदत्त:- आपने ठीक कहा -

असौ हि दत्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दु:।
जलावगाढ़स्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणायमिवावशिष्टम् ॥ 6 ॥

अन्वय - जलावगाढ़स्य, वनद्विपस्य,अवशिष्टम् तीक्ष्णं विषाणायम् इव हि उन्नतकोटि असौ इन्दु: तिमिरावकाशं दत्त्वा अस्तम् व्रजति **॥ 6 ॥**

अर्थ- जल में डूबे हुए जंगली हाथी के (जल में डूबने से) बचे हुए दाँत के तीखे अगले हिस्से की तरह उन्नत अग्रभागवाला यह चन्द्रमा अंधेरे को (फैलने के लिए) मौका देकर अस्ताचल को जा रहा है **॥ 6 ॥**

टिप्पणी – अवगाढ़:- अव+गाढ् +क्त। इस श्लोक में उपमा अलंकार एवं उपजाति छन्द है।

विदूषक:- भो:, इदमस्माकं गेहम्। वर्धमानक, वर्धमानक ! उद् घाटय द्वारम्।

विदूषक:- श्रीमानजी यह हमारा घर है। वर्धमानक,वर्धमानक दरवाजा खोलो।

चेट:- आर्यमैत्रेयस्य स्वरसंयोग: श्रूयते। आगत आर्यचारूदत्त:। तथावद् द्वारमस्योद्घाटयामि।(तथा कृत्वा) आर्य! वन्दे मैत्रेय ! त्वामपि वन्दे। अत्र विस्तीर्णं आसने निसीदतमार्यो।(उभौ नाटयेन प्रविश्योपविशत:)

चेटः- आर्य मैत्रेय की आवाज सुनाई पड़ती है। चारूदत्त आगए। तो अब इनके लिए किवाड़ों को खोल दूँ।(खोलकर) आर्य! प्राणाम करता हूँ। मैत्रेय, तुम्हें भी नमस्कार करता हूँ।इस बिछे हुए आसन पर आप दोनों बैठे।

(दोनों अभिनय के द्वारा प्रवेश करके बैठ जाते हैं)

विदूषकः- वर्धमानक ! रदनिकामाकारय पादौ धावितुम्।

विदूषकः- वर्धमानक ! पैर धुलवाने के लिए रदनिका को बुलवाओ।

चारूदत्तः- (सानुकम्पयम्) अलं सुप्तजनं प्रबोधयितुम्।

चारूदत्तः- (कृपापूर्वक) सोये हुए को मत जगाओ।

चेटः-आर्य मैत्रेय ! अहं पानीयं गृह्णामि। त्वं पादौ धाव।

चेटः- आर्य मैत्रेय ! मैं पानी लाता हूँ। तुम (चारूदत्त के) पैरों को धोओ।

विदूषकः- (सक्रोधम्) भो वयस्य ! एष इदानीं दास्याः पुत्री भूत्वाः पानीयं गृह्णाति। मां पुनर्ब्राह्मणं पादौ धावयति।

विदूषकः- (क्रोध के साथ) हे मित्र !यह नीच जाति का होकर इस समय पानी लेता है और मुझ ब्राह्मण से पैर धोने के लिए कहता है।

चारूदत्तः- वयस्य मैत्रेय ! त्वमुदकं गृहाण। वर्धमानक पादौ प्रक्षालयतु।

चारूदत्तः- मित्र मैत्रेय ! तुम पानी लो। वर्धमानक पैरों को धोवे।

चेटः- आर्य मैत्रेय ! देहुदकम्। (विदूषकस्तथा करोति, चेटश्चारूदत्तस्य पादौ प्रक्षाल्यापसरति)।

चेटः- आर्य मैत्रेय ! जल दीजिए। (विदूषक जल देता है। चेट चारूदत्त का पैर धोकर हट जाता है)।

चारूदत्तः- दीयतां ब्राह्मणस्य पादोदकम्।

चारूदत्तः- इस ब्राह्मण (विदूषक) को पैर धोने के लिए पानी दो।

विदूषकः- किं मम पादोदकैः ? भूम्यामेव मया ताडितगर्दभेनेव पुनरपि लोटितव्यम्।

विदूषकः- मुझे पैर धोने के लिए जल से क्या मतलब ? पीटे गयें गधे की भाँति मुझे तो फिर जमीन पर ही लोटना (सोना) है।

चेटः- आर्य मैत्रेय **!** ब्राह्मणः खलु त्वम्।

चेटः- आर्य मैत्रेय ! तुम तो ब्राह्मण हो।

विदूषकः- यथा सर्वनागानां मध्ये डुण्डुमः तथा सर्वब्राह्मणानां मध्येऽहं ब्राह्मणः।

विदूषकः- जैसे सभी साँपों में डोडहा (जल में रहने वाला साँप) होता है। उसी प्रकार सब ब्राह्मणों के बीच में मैं भी (नाममात्र का) ब्राह्मण हूँ। अर्थात् साँप की सार्थकता जहरीला होने में है। जहरविहीन डोडहा साँप नाममात्र के लिए साँप है उसी प्रकार विद्या,तप आदि से रहित मैत्रेय भी नाममात्र का ब्राह्मण है।

चेटः- आर्य मैत्रेय ! तथापि धाविष्यामि (तथा कृत्वा)। आर्य मैत्रेय! एतत्तत्सुवर्णमाण्डं मम दिवा,तव रात्रौ च तद् गृहाणः। (इति दत्त्वा निष्क्रान्तः)

चेट:- आर्य मैत्रेय ! तो भी धुलाऊँगा। (पैर धुलवा कर) आर्य मैत्रेय ! यह सोने के आभूषण का सन्दूक दिन में मेरा और रात में तुम्हारा (है) अर्थात् दिन में मुझे तथा रात्रि में तुमको इसकी रक्षा करनी है। तो लो (देकर चला जाता है)।

विदूषक:- (गृहीत्वा) अद्याप्येततिष्ठति । किमत्रोज्जयिन्यां चौरोऽपि नास्ति, य एतं दास्या:पुत्रं निद्राचौरं नापहरति। भो वयस्य ! अभ्यन्तरचतु:शालकं प्रवेशयाभ्येनम्।

विदूषक:- (लेकर के) यह आज भी मौजूद है। क्या इस 'उज्जयिनी' में कोई चोर भी नहीं है जो नींद में बाधा डालने वाले, अधम, सोने के आभूषणों के इस सन्दूक (बक्स) को नहीं चुरा लेता है। हे मित्र ! इसको (सन्दूक को) भीतरी चौपाल में भेजता हूँ।

चारूदत्त:-

अलं चतु:शालमिमं प्रवेश्य प्रकाशनारीधृत एष यस्मात्।
तस्मात्स्वयं धारय विप्र: ! तावद्यावन्न तस्या: खलु भो: समर्प्यते ।। 7 ।।

(निद्रां नाटयन्, 'तं तस्य स्वरसंक्रमम्-'(3/5) इति पुन: पठति)

अन्वय- इमम् चतु:शालम्, प्रवेश्य अलम् यस्मात् एष: प्रकाशनारीधृत:, तस्मात् भो विप्र:! तावत् स्वयं धारय यावत् खलु तस्या: (हस्ते) न समपर्यते **।। 7 ।।**

अर्थ- चारूदत्त - इसे (बचाव के लिए) चौपाल में भेजना ठीक नहीं है, क्योंकि यह वेश्या की धरोहर है। इसलिए हे ब्राह्मण ! जब तक यह वसन्तसेना को लौटा नहीं दिया जाता, तब तक इसकी रखवाली तुम स्वयं करो **।। 7 ।।**

(निद्रा का अभिनय करता हुआ, 'उसका वह स्वर का उतार-चढ़ाव (3/5)यह फिर पढ़ता है)

टिप्पणी – इस श्लोक में उपजाति छन्द है।

विदूषक:- अपि निद्राति भवान्।

विदूषक:- क्या आप सो रहे हैं ?

चारूदत्त:- अथ किम्।

इयं हि निद्रा नयनावलम्बिनीं ललाटदेशादुपसर्पतीव माम्।
अदृश्यरूपा चपला जरेव या मनुष्यसत्त्वं परिभूयं वर्धते ।। 8 ।।

अन्वय- हि ललाटदेशात् नयनावलम्बिनीं इयं निद्रा माम् उपसर्पतीव इव अदृश्यरूपा, चपला, जरा,इव या मनुष्यसत्त्वं परिभूयं वर्धते।

अर्थ- चारूदत्त:- और क्या ?

मस्तक से आँखों में उतरती हुई यह नींद मेरी ओर आ रही है (अर्थात् धीरे-धीरे मुझे वश में कर रही है) दिखाई न पड़ने वाली चंचल वृद्धावस्था की भाँति यह नींद भी मनुष्यों के बल को अभिभूत(तिरस्कृत) करके बढ़ती है **।। 8 ।।**

टिप्पणी – इस श्लोक के पूर्वार्द्ध में उत्प्रेक्षा एवं उत्तरार्ध में उपमा अलंकार है तथा वंशस्थ छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 1 –

निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर अति संक्षेप में दीजिए -

1. जल में रहने वाले साँप का क्या नाम होता है।
2. किस प्रकार का व्यक्ति अपने सेवकों के लिए श्रेष्ठ होता है।
3. चारूदत्त किसके संगीत की प्रशंसा करते है।
4. श्लोक संख्या 6 में कौन सा अलंकार है।
5. वसन्तसेना के आभूषणों की जिम्मेदारी रात्रि में चारूदत्त किसको सौंपता है।

अभ्यास प्रश्न 2 –

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद करें।

1- सुजन: खलु भृत्यानुकम्पक: स्वामी निर्धन्कोऽपि शोभते।
पिशुन: पुनर्द्रव्यगर्वितो दुष्कर: खलु परिणामदारूण: ॥

2- असौ हि दत्वा तिमिरावकाशमस्तं व्रजत्युन्नतकोटिरिन्दु: ।
जलावगाढ़स्य वनद्विपस्य तीक्ष्णं विषाणायमिवावशिष्टम् ॥

विदूषक – तत्स्वपिव: नाटयेन स्वपिति। (तत: प्रविशति शर्विलक:)

विदूषक:- तो सोते हैं, अभिनय के द्वारा सो जाता है। (इसके बाद शर्विलक प्रवेश करता है)

शर्विलक:-

कृत्वा शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं
शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम्।
गच्छामि भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्वो
निर्मुच्यमान: इव जीर्णतनुर्भुजंग: ॥ 9 ॥

अन्वय:- शिक्षाबलेन च बलेन च शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं ,कर्ममार्गम् कृत्वा भूमिपरिसर्पणघृष्टपार्श्वो (सन् अहम्) निर्मुच्यमान: ,जीर्णतनु: भुजंग: इव गच्छामि **॥ 9 ॥**

अर्थ- शर्विलक – अपनी शिक्षा के जोर तथा बल के प्रभाव से (अपने) देह की लम्बाई चौड़ाई के सुख से प्रवेश के लायक सेंध लगा करके जमीन पर घिसटने से छिले हुए पार्श्वभागवाला मैं (शर्विलक) केंचुल छोड़ते हुए जर्जर देह वाले साँप के समान सेंध में जाता हूँ **॥ 9 ॥**

टिप्पणी- निर्मुच्यमाना – निर्+मुच्+शानच् (कर्मणि) । इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा वसन्ततिलका छन्द है।

(नभोऽवलोक्य सहर्षम्) अये, कथमस्तमुपगच्छति स भगवान्मृगांक:।

(आकाश की ओर देखकर प्रसन्नता के साथ) क्या यह भगवान् चन्द्रमा डूबने जा रहे हैं।
तथा हि -

नृपतिपुरूषशंकितप्रचारं परगृहदूषणनिश्चितैकवीरम्।
घनपटलतमोनिरूद्धतारा रजनिरियं जननीव संवृणोति ।। 10 ।।

वृक्षवाटिकापरिसरे सन्धि कृत्वा प्रविष्टोऽस्मि मध्यमकम्। तद्यावदिदानीं चतु:शालकमपि दूष्यामि।
अन्वय–घनपटलतमोनिरूद्धताराइयम्रजनीजननीइवनृपतिपुरूषशंकितप्रचारंरगृहदूषणनिश्चितैकवीरम् (माम्) संवृणोति ।। **10 ।।**

अर्थ- क्योंकि -बादलों के समूह की भाँति गाढ़े अन्धकार से ताराओं को ढ़कने वाली यह रात माता के समान, राजा के सिपाही जिसके आने-जाने को शंका की दृष्टि से से देखते हैं तथा जो दूसरों के घरों में सेंध लगाने में माना हुआ सबसे बड़ा वीर है। ऐसे मुझको ढ़क रही है। अर्थात् (अंधेरी रात चोरों को छिपाकर उसी प्रकार से उनकी रक्षा करती है, जिस प्रकार माता अपने बालक की) **।। 10 ।**

बागीचे के पास की चहारदीवारी में सेंध लगाकर (चारूदत्त के) घर में घुस आया हूँ। तो अब इस चौपाल में भी सेंध लगाता हूँ।

टिप्पणी - इस श्लोक में उपमा अलंकार तथा पुष्पिताग्रा छन्द है।

भो:, **कामं नीचमिदं वदन्तु पुरूषा: स्वप्ने च यद्वर्धते**
विश्वस्तेषु च वञ्चनापरिभवश्चौर्यं न शौर्यं हि तत्।
स्वाधीना वचनीयतापि हि वरं बद्धो न सेवाञ्जलि-
र्मागो ह्येष नरेन्द्रसौप्तिकवधे पूर्वं कृतो द्रौणिना ।। 11 ।।

तत्कस्मिन्नुदेशे संधिमुत्पादयामि।
अन्वय – यत् स्वप्ने वर्धते विश्वस्तेषु वञ्चनापरिभव: च हि तत् चौर्यं शौर्यं न (अत:) इदम् कामम् नीचम् वदन्तु स्वाधीना वचनीयता अपि हि वरम् बद्ध: सेवाञ्जलि: न हि एष: मार्ग: पूर्वम् द्रौणिना नरेन्द्रसौप्तिकवधे कृत: **।। 11 ।।**

अर्थ – जो (चोरी) मनुष्यों के सो जाने पर होती है तथा जिसमें (चोरी में) विश्वास के साथ सोये हुए लोगो के धन का छिनना (अपहरण) रूप अपमान होता है वह चोरी है,शूरता नहीं। अत: मनुष्य लोग उस चोरी को भले ही अधम कहें (किन्तु फिर भी मेरा तो यही विचार है कि) किसी के भी अधीन न होने के कारण यह चोरी रूप निन्दित काम भी अच्छा है। किसी की सेवा में हाथ जोड़ना अच्छा नहीं। और यह चोरी का रास्ता तो पहले ही राजा (पाण्डव) के सोये हुए (पुत्रों) की हत्या में 'द्रोणाचार्य' के पुत्र (अश्वत्थामा) ने दिखा दिया है **।। 11 ।।**

तो किस स्थान पर सेंध लगाऊँ।
टिप्पणी – सौप्तिक = निद्रासम्बन्धी ,स्वप् +क्त =सुप्त: +ड़स् (इक्)।
इस श्लोक में काव्यलिंग एवं अर्थान्तरन्यास अलंकार एवं शार्दूलविक्रीडित छन्द है।

देश: को नु जलावसेकशिथिलो यस्मिन्न शब्दो भवे-

द्भित्तीनां च न दर्शनान्तरगत: संधि: करालो भवेत् ।
क्षारक्षीणतया च लोष्टककृशं जीर्णं क हर्म्यं भवे-
कस्मिन्स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत्स्यादर्थसिद्धिश्च मे ।। 12 ।।

अन्वय – क: नु भित्तीनाम् देश: जलावसेकशिथिल: भवेत् यस्मिन्न शब्दा न भवेत् सन्धि: च कराल: भवेत् न च दर्शनान्तरगत: क्व च हर्म्यं क्षारक्षीणतया, लोष्टककृशं, जीर्णम् च भवेत् ,कस्मिन् स्त्रीजनदर्शनं च न भवेत् मे अर्थसिद्धि: च स्यात् ।। 12 ।।

अर्थ- हमेशा पानी पड़ने से गीला अत: कमजोर हुआ दीवारों का कौन वह ऐसा स्थान होगा, जिसमें (सेंध लगाते समय) आवाज न हो, सेंध बड़ी हो,किन्तु (बगल में भी आने जाने वालों को) दिखलायी न पड़े। और कहाँ की दीवार लोनख(क्षार) लग जाने से पतली हो जाने के कारण कम ईटों वाली एवं जर्जर होगी ? किस जगह (सेंध करने से) स्त्रियों का सामना न होगा और मेरे चोरों के कार्य में सफलता भी मिलेगी ।। 12 ।।

टिप्पणी – जीर्णम् = पुराना – जृ+क्त । इस श्लोक में शार्दूलविक्रीडित छन्द है ।

(भित्ति परामृश्य) नित्यादित्यदर्शनोद्कसेचनेन दूषितेयं भूमि: क्षारक्षीणा । मूषिकोत्करश्चेह । हन्त, सिद्धोऽयमर्थ: । प्रथममेतत्स्कन्दपुत्राणां सिद्धिलक्षणम् । अथ कर्मप्रारम्भे कीदृशमिदानीं संधिमुत्पादयामि । इह खलु भगवता कनकशक्तिना चतुर्विध: संध्युपायो दर्शित: । तद्यथा पकेष्टकानामाकर्षणम् , आमेष्टकानां छेदनम्, पिण्डमयानां वेधनम्, काष्ठमयानां पाटनमिति । तदत्र पकेष्टके इष्टिकाकर्षणम् । तत्र -

अर्थ – (भित्ति को टटोलकर) प्रतिदिन प्रात: सूर्य के दिखलायी पड़ने पर जल देने से यह (भूमि) दीवार गीली एवं लोनल लगने से फटी हुई है। यहाँ चूहों के द्वारा (खने गये छोटे-छोटे मिट्टी के टुकड़ों का) ढेर भी है । वाह ! काम बन गया । 'कार्तिकेय' के पुत्रों (चोरों) का यह (आसानी से सेंध फोड़ने का उपाय मिलना) कार्य सिद्ध होने का प्रथम चिह्न है । अब काम शुरू करने पर यहाँ कैसी सेंध बनाऊँ । वास्तव में तो इस सम्बन्ध में तो भगवान 'कनकशक्ति' (चोरी का उपाय बताने वाले एक आचार्य) ने चार प्रकार का सेंध फोड़ने का उपाय बतलाया है । जैसे कि पक्की ईटों (के मकान में ईटों)का बाहर खींचना,कच्ची ईटों (के घरों में ईटों)का काटना, मिट्टी के पिण्डों (से बनी हुई दीवारों) को पानी से सींचना, काठ(से बनी दीवारों के काठो) को उखाड़ना । तो यहाँ पक्की ईटों (के मकान में ईटों) का खींचना ही ठीक होगा । यहाँ -

पद्मव्याकोशं भास्करं बालचन्द्रं
वापी विस्तीर्णं स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम् ।
तत्कस्मिन्देशे दर्शयाभ्यात्मशिल्पं
दृष्टवा श्वो यं यद्विस्मयं यान्ति पौरा: ।। 13 ।।

तदत्र पक्वेष्टके पूर्णकुम्भं एव शोभते । तमुत्पादयामि ।

अन्वय:- पद्मव्याकोशम्, भास्करं बालचन्द्रं, वापी विस्तीर्णम् स्वस्तिकं पूर्णकुम्भम् (एते सप्त

सन्धिप्रकारा सन्ति) तत् कस्मिन् देशे आत्मशिल्पम् दर्शयामि, यत् यम् दृष्टवा श्वः पौराः विस्मयम् यान्ति ।। **13** ।।

अर्थः- खिले हुए कमल, सूर्य(गोल), द्वितीया के चन्द्रमा(अर्द्धचन्द्राकार) ,बावड़ी, विस्तृत स्वस्तिक, पूर्ण घड़ा, (ये सात सेंध के प्रकार हैं)तो किस जगह अपनी (सेंध फोड़ने की) चतुराई दिखलाऊँ । जिसे देखकर प्रातः नगर के लोग आश्चर्यचकित हो जाँय ।। **13** ।।

तो इस पकें ईटों (वाले मकान) में पूर्ण घड़े के आकार की सेंध ही अच्छी लगती है(अतः) उसी को बनाता हूँ।

टिप्पणी- विस्मयम् – आश्चर्य को, वि+स्मि+अच् । इस श्लोक में वैश्वदेवी छन्द है।

अन्यासु भित्तिषु मया निशि पाटितासु
क्षारक्षतासु विषमासु च कल्पनासु ।
दृष्टवां प्रभातसमये प्रतिवेशिवर्गो
दोषांश्च मे वदति कर्मणि कौशलं च ।। 14 ।।

नमोवरदाय कुमारकार्तिकेयाम्, नमः कनकशक्तये ब्रह्मणदेवाय देवव्रताय ,नमो भास्करनन्दिने, नमोयोगाचार्याय यस्याहं प्रथमः शिष्यः । तेन च परितुष्टेन योगरोचना मे दत्ता ।

अन्वय- निशि अन्यासु क्षारक्षतासु ,भित्तिषु,विषमासु, कल्पनासु, मया पाटितासु प्रभातसमये प्रतिवेशिवर्गः दृष्टवा मे दोषाम् कर्मणि कौशलम् च वदति ।

अर्थ- रात के समय दूसरी, लोनल से कटी हुई दीवारों के, विचित्र सूझ-बूझ के साथ मेरे द्वारा, फोड़ी जाने पर प्रातःकाल पड़ोसी लोग(सेंध को) देखकर मेरे अपराध(दोष)एवं (सेंध बनाने के)काम की चतुराई को कहेगें ।। **14** ।।

वरदानी कुमार कार्तिकेय(शिव के पुत्र) को नमस्कार है । कनकशक्ति, ब्रह्मणयदेव, एवं देवव्रत के लिए नमस्कार है । भास्करनन्दी के लिए नमस्कार है ।योगाचार्य को नमस्कार है जिनका मैं प्रथम शिष्य हूँ ।मुझसे सन्तुष्ट होकर उन्होने योगरोचना (एक ऐसा मलहम जिसके लगा लेने से मनुष्य दिखलाई नहीं पड़ता और न तो शस्त्र आदि के मारने से चोट ही लगती है)मुझे दी है।

टिप्पणी- इस श्लोक में तुल्ययोगिता अलंकार एवं वसन्ततिलका छन्द है।

अनया हि समालब्धं न मां द्रक्ष्यन्ति रक्षिणः ।
शस्त्रं च पतितं गात्रे रूजं नोत्पादयिष्यति ।। 15 ।।

अन्वयः- अनया समालब्धम् माम् रक्षिणः हि न द्रक्ष्यन्ति (तथा) गात्रे पतितम् शस्त्रम् च रूजम् न उत्पादयिष्यति ।। **15** ।।

अर्थ- (शरीर में) इस (योगरोचना) के लेपन कर लेने पर मुझको पहरों में घूमने वाले सिपाही नहीं देख सकेगें । और शरीर पर पड़ा हुआ शस्त्र पीड़ा नहीं उत्पन्न करेगा ।। **15** ।।

टिप्पणी – समालब्धम् – सम्+आ+लभ्+क्त । इस श्लोक में समुच्चय अलंकार एवं अनुष्टुप छन्द है।

अभ्यास प्रश्न 3 –

निम्नलिखित श्लोकों का अनुवाद कीजिए –

1- **कृत्वा शरीरपरिणाहसुखप्रवेशं**
शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम् ।
गच्छामि भूमिपरिसर्पणघृष्टपाश्र्वो
निर्मुच्यमानः इव जीर्णतनुर्भुजंगः ।।

2- **नृपतिपुरूषशंकितप्रचारं परगृहदूषणनिश्चितैकवीरम् ।**
घनपटलतमोनिरूद्धतारा रजनिरियं जननीव संवृणोति ।।

1.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने यह जाना कि चारूदत्त और मैत्रेय संगीत सुनकर आते हैं। वे घर में आकर सो जाते हैं। इधर मदनिका को दासता से मुक्त कराने के लिए शर्विलक चारूदत्त के घर में सेंध लगाता है और वसन्तसेना के आभूषणों को चुरा कर ले जाता है।

1.5 शब्दावली:-

शब्द	**अर्थ**
द्यूतप्रसक्तमनुष्य:	जुआं खेलने का लती मनुष्य
भृत्यानुकम्पक:	सेवको पर दया करने वाला
द्रव्यगर्वित:	धन के मद में चूर
सुजन:	सज्जन
स्फुटम्	स्पष्ट
प्रशस्तवचनै:	प्रशंसा के वाक्यों से
जलावगाढ़स्य	जल में डूबे हुए
तीक्ष्णम्	तीखे, नुकीले

इन्दु:	चन्द्रमा
अपसरति	हटता है
चतु:शालम्	चौपाल में
रजनी	रात
हर्म्यम्	महल
सन्धिप्रकारा:	सेंधों के प्रकार
आत्मशिल्पम्	अपनी कला को
भित्तिषु:	दीवारों में

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 – (1) डोडहा (2) सज्जन व्यक्ति (3) रेमिल (4) उपमा (5) मैत्रेय।
अभ्यास प्रश्न 2 – उत्तर इकाई में देखें।
अभ्यास प्रश्न 3 – उत्तर इकाई में देखें।

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ:-

1. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक -शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थ कानपुर

1.8 उपयोगी पुस्तकें:-

1. मृच्छकटिकम् लेखक - शूद्रक, प्रकाशक – चौखंभा संस्कृत भारती चौक वाराणसी
2. मृच्छकटिकम् लेखक - शूद्रक, प्रकाशक – ग्रन्थ कानपुर

1.9 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1- तृतीय अंक का सारांश निज शब्दों में लिखिए।

इकाई -2 मृच्छकटिकम् तृतीय अंक श्लोक 16 से 30, मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा
2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 श्लोक संख्या 16 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    2.3.1 श्लोक संख्या 16 से 20 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    2.3.2 श्लोक संख्या 21 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    2.3.3 श्लोक संख्या 26 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
2.4 सारांश
2.5 पारिभाषिक शब्दावली
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भग्रन्थ
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् तृतीय खण्ड से सम्बन्धित यह द्वितीय इकाई है इसके पूर्व की इकाईयों में आपने प्रथम अंक से लेकर तृतीय अंक की 9 वीं इकाई में उल्लिखित नाटकीय संवादों का भली प्रकार अध्ययन किया इसके पूर्व के श्लोकों में विदूषक, चारूदत्त , शर्विलक आदि के संवादों का अध्ययन कर तथ्यों से परिचय प्राप्त किया है।

प्रस्तुत इकाई में इन्ही पात्रों से सम्बन्धित संवादों का अध्ययन कराना ही इस इकाई का विषय है। शर्विलक चोरी की विद्या द्वारा अपने शरीर की लम्बाई , चौडाई के अनुपात में सेंध लगाकर बूढे सर्प की भाति सेंध में घुसता है। वह योगाचार्यो को प्रणाम कर उनके द्वारा दी गयी योगरोचना का लेप लगाकर निश्चिन्त हो जाता है कि अब मुझे देख कर भी पहचान नही सकता है। न ही कोई मार सकता है। किन्तु लेप लगाने के पश्चात वह पश्चाताप करते हुए जो कहता है। उसी तथ्य का वर्णन इसी इकाई में श्लोक संख्या 16 से प्रारम्भ है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तृतीय अंक में वर्णित चौर विद्या एवं अन्य तथ्यों से अवगत होकर तृतीय अंक की अन्यान्य विशेषताओं को बता सकेगें।

2.2 उद्देश्य:-

मृच्छकटिकम तृतीय अंक में नवीं इकाई के वर्णन के पश्चात शेष अंश के अध्ययन की इस दसवीं इकाई में विदूषक, चारूदत्त , शर्विलक आदि से सम्बन्धित संवादों का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- योगरोचना के वैशिष्ट्य को बता सकेगें।
- सेंध काटने के विधान से परिचित हो सकेगें।
- शपथ के महत्व को बता सकेगें।
- गो और व्राह्मण के सम्बन्ध में ली गयी शपथ का विशेष महत्व होता है यह भी समझा सकेगें।
- पशुओं, माया ,भाषा ,दीप, पानी आदि के महत्व से परिचित हो सकेगें।

2.3 श्लोक संख्या 16 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

श्लोक संख्या 16 के ठीक पूर्व वर्णित तथ्यों को यहॉ प्रकट करना नितान्त उचित है। शर्विलक चोरी की गयी विद्या में प्रवीण है। वह विदूषक के सो जाने के बाद मंच में प्रवेश करते हुए कहता है -

अपनी चोर विद्या के जोर से तथा अपनी ताकत से, अपनी देह की लम्बाई चौड़ाई के अनुपात में सेंध लगाकर, जमीन पर बराबर सरकने के कारण देह के छिले होने वाले में केंचुल छोडे. बूढे सॉप की तरह सेंध में घुसता है।

(आकाश की ओर देखकर खुशी के साथ)

अरे , क्या भगवान् चन्द्रमा अस्त होने जा रहे है ? उसी प्रकार- राजकीय पहरेदारों की सन्दिग्ध दृष्टि से देखने वाला, तथा दूसरों के घरों में सेंध लगाने वाला शातिर वीर, मुझे, अपनी सघन अन्धकार में सारे संसार को डुबाने वाली यह रात मॉ की तरह अपनी अन्धकार रूपी स्नेहान्चल से ढॅक रही है। फुलवाड़ी के पास की चहार दीवारी में सेंध लगाकर मैं आहाते के भीतर तो घुस आया हॅू, अब इस चौपाल में भी सेंध लगा दी लूँ –

लोग चोरी को अधम भले ही कहें , जो लोगों के सो जाने पर ही होती है, तथा जिसमें धोखे से विश्वस्त लोगों का धन अपहृत कर उन्हें अपमानित किया जाता है इसीलिये यह चोरी है, वीरता नहीं। पर मेरी मान्यता कुछ और है- किसी के आगे दास बनकर हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने की अपेक्षा चोरी का यह ध्नधा स्वतन्त्र होने के कारण उत्तम है। यह रोजगार यहॉ बहुत पहले से चला आ रहा है। द्रोणाचार्य के पुत्र अश्वत्थामा ने चोरी से ही युधिष्ठिर के बेटों को मारा था। अत: इस काम में कोई दोष नहीं है।

तो फिर सेंध कहॉ काटी जाये-

(सोचना यह है कि) लगातार पानी गिरने से दीवार को कौन भाग कमजोर होगा, जिसमें सेंध लगाते आवाज नहीं होगी। सेंध बड़ी हो पर अगल –बगल से गुजरने वालों की निगाह से बची हो, साथ ही यह भी देखना होगा कि नोनी लग जाने के कारण दीवार का कौन-सा भाग कमजोर हो गया है और किस जगह सेंध लगाने से औरतों का सामना किये बिना काम में सफलता हासिल होगी।

(दीवार टटोलकर) रोज-रोज सूर्य की उपासना के क्रम में पानी गिरने के कारण यहॉ की मिट्टी गीली बनी है, साथ ही चूहों ने भी यहॉ ही धूल का ढेर लगा दिया है। चलो, हमारा काम तो अपने आप बन गया। क्योंकि, आसानी से सेंध काटने की जगह का मिल जाना चोरों की सफलता का पहला लक्षण है। तो फिर इस चोरी के लिए इस दीवार में कैसी सेंध लगाऊँ ? चोरों के गुरू भगवान् कनक-शक्ति ने सेंध लगाने के चार तरीकें बतलाये हैं, पक्की ईटों से बनी दीवार से ईटों को खीचकर, कच्ची दीवार से ईटों को काटकर, मिट्टी की भीत को पानी से फुला कर तथा काठ की दीवार को चीर कर सेंध लगाना चाहिए। तो फिर, इस पक्की दीवार से ईटों को खींचना चाहिए – खिले कमल की तरह या सूर्य-मण्डल की तरह गोल अथवा दूज के चॉद की तरह टेढी , या विशाल सरोवर की तरह चौकोर अथवा स्वस्तिक की तरह तिकोनी या घडे की तरह फैली सिकुड़ी कैसी सेंधकाटूँ ? जिसे कल सबेरे देखकर लोग दंग रह जायें।

तो फिर , इस पक्की ईट की दीवार में घडे के आकार की सेंध ही ठीक फबती है, तो वैसी ही सेंध क्यों न काटूँ –रात की इस निस्तब्धता में काई लगी इस सीली दीवार में काटी गई भयंकर सेंध को जब कल सबेरे लोग देखेंगे, तो एक ओर जहॉ मेरे चौर्य कर्म की निन्दा करेंगे, वहीं मेरी सेंध काटने की कला की प्रशंसा भी अवश्य करेंगे। मनोवांछित फलदाता कुमार कार्त्तिकेय को मेरा पहला प्रणाम। फिर प्रभावशाली ब्रह्मण्य देव को नमस्कार। पुन: देवपरायण चौराचार्य कनकशक्ति को नमस्कार। भास्करनन्दी को प्रणाम । प्रणाम योगाचार्य को जिनका मैं पहला

चेला हूँ । उन्होंने प्रसंन्न होकर मुझे योगरोचना दी। इस योगरोचना का लेप मैंने अपनी देह में कर लिया है। फलत: अब न मुझे कोई पहरेदार ही देख सकता है और न तो शस्त्र के आघात से कोई चोट लग सकती है।

इस प्रकार उपर्युक्त वर्णनों के क्रम में वह अपनी योजना के अनुसार जो करता है। उसी का वर्णन अग्रिम श्लोक में प्रदर्शित है-

2.3.1 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 16 से 20 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

(तथा करोति)धिक् कष्टम, प्रमाणसूत्रं से विस्मृतम्। (विचिन्त्य) आं, इदं यज्ञोपवीतं प्रमाणसूत्रं भविष्यति। यज्ञोपवीतं हि नाम ब्राह्मणस्य महदुपकरणद्रव्यम्, विशेषतोऽस्मद्विधस्य। कुत:

एतेन मापयति भित्तिषु कर्ममार्ग-
मेतेन मोचयति भूषणसम्प्रयोगान्।
उद्घाटको भवति यन्त्रदृढे कपाटे
दष्टस्य कीटभुजगै: परिवेषनञ्च ।।16।।

अन्वय:- एतेन , भित्तिषु, कर्ममार्गम्, मापयति, एतेन, भूषणसंयोगान्, मोचयति, यन्त्रदृढे, कपाटे, उद्घाटक:, भवति, कीटभुजगै: दष्टस्य, परिवेष्टनम्, च भवति।

हिन्दी अनुवाद - उसी प्रकार करता है। (देह में लेप लगाकर) हाय, हाय, मैं तो नापने वाली रस्सी ही लाना भूल गया। (कुछ सोचकर) अच्छा तो यह जनेऊ ही नापने का धागा बन जायेगा। ब्राह्मण के लिए तो जनेऊ बड़े काम की वस्तु है। विशेषकर मुझे जैसे ब्राह्मण के लिए तो यह और उपयोगी है क्योंकि –

इससे सेंध काटते समय भीत नापी जाती है। इसक मदद से देह में पहने हुए जेवरों की हुक खोली जाती है। इसकी सहायता से कसकर लगाई गई किवाडों की किल्ली आसानी से खुल जाती है। जहरीले कीड़े या सॉपों के काटने पर इससे मजबूत गॉठ लगाई जाती है।

मापयित्वा कर्म समारभे। (तथा कृत्वा, अवलोक्य च) एकलोष्ठावशेषोऽयं सन्धि:। धिक् कष्टम्। अहिना दष्टोऽस्मि। (यज्ञोपवीतेनाड्.गुलिं वद्ध्वाविषवेगं नाटयति। चिकित्सां कृत्वा) स्वस्थोऽस्मि। (पुन: कर्म कृत्वा, दृष्ट्वा च) अये! ज्वलति प्रदीप:। तथाहि-

शिखा प्रदीपस्य सुवर्णपिञ्जरा
महीतले सन्धिमुखेन निर्गता।
विभाति पर्यन्ततम:समावृता
सुवर्णरेखेव कषे निवेशिता ।। 17 ।।

अन्वय: - सुवर्णपिंजरा, सन्धिमुखेन, महीतले, निर्गता,पर्यन्ततम: समावृता, प्रदीपस्य, शिखा , कषे ,निवेशिता, सुवर्णरेखा, इव, विभाति।

हिन्दी अनुवाद- तो फिर इसी से नाप कर सेंध काटना शुरू कर दूँ। (उसी तरह करके तथा देखकर) अब तो इस सेंध से एक ही ईट निकालना वच गया। हाय राम, मुझे तो सॉप ने काट लिया। (जनेऊ से अँगुली बॉधकर देह में जहर छहरने का अनुभव करताहै; कुछ उपचार करने

के बाद) अब ठीक हो गया। (सेंधलगाने के बचे कामों को पुराकर तथा भीतर झॉंकर) अरे भीतर तो दीप जल रहा है। जैसे – अन्धकार में डूबी काली धरती पर, दीवार से काटी गई सेंध की राह से निकाली दीप की पीली लौ काली कसौटी पर खींच गई स्वर्णरेखा की तरह सुशोभित हो रही है। **17**॥

प्रस्तुत श्लोक में दीपक की पीली लौ को काली कसौटी के ऊपर खीची गयी रेखा के समान बताया गया है अत: यहॉं पर श्रौती उपमा अलंकार है। इस पूरे श्लोक में वंशस्थ छन्द का प्रयोग है। (पुन: कर्म कृत्वा) समाप्तोऽयं सन्धि।भवतु:प्रविशामि । अथवा न तावत् प्रविशामि, प्रतिपुरूषं निवेशयामि । (तथा कृत्वा) अये ! न कश्चित्। नम: कार्त्तिकेयाय। (प्रविश्य, दृष्ट्वा च) अरे ! पुरूषद्वयं सुप्तम् । भवतु, आत्मरक्षार्थद्वारमुद्धाटयामि। कथं जीर्णत्वाद् गृहस्य विरीति कपाटम् । तद् यावत् सलिलमन्वेषयामि । क्व नु खलु सालिलं भविष्यति ?! (इतस्ततो दृष्ट्वा, सलिलं गृहीत्वा क्षिपन्,सशड्कम्)मा तावत् भूमौ पतत् शब्दमुत्पादयेत्। (पृष्ठेन प्रतीक्ष्य कपाटमुद्धाटय) भवतु, एवं तावददिानीपरोक्षे। किं लक्ष्यसुप्तम्,उत परमार्थसुप्तमिदं द्वयम् ? (त्रासयित्वा, परीक्ष्य च) अये ! परमार्थसुप्तेनानेन भवितव्यम्। तथाहि-

नि:श्वासोऽस्य न शड्किकत: सुविशद: लुल्यान्तरं वर्त्तते
दृष्टिर्गाढनिमीलिता न विकला नाभ्यन्तरे चञ्चला।
गात्रं स्रस्तशरीरसन्धिशिथिलं शय्याप्रमाणाधिकं
दीपञ्चापिन मर्षयेदभिमुखं स्याल्लक्ष्यसुप्तं यदि ॥18॥

अन्वय:- अस्य, नि:श्वास:, शड्किकत:, न सुविशद:, तुल्यान्तरम्, वर्त्तते, दृष्टि:, गाढनिमीलिता, न, विकला, अभ्यन्तरे,न, चञ्चला, गात्रम्, स्रस्तशरीरसन्धिशिथिलम्, शय्याप्रमाणाधिकम्, यदि,लक्ष्यसुप्तम्, स्यात्, अभिमुखम् ,दीपम् चअपि,न , मर्षयेत् ॥18॥

हिन्दी अनुवाद- (फिर सेंध काटकर) सेंध तो अब पूरी कट चुकी है। तो फिर अब इसमें घुस कर देखूँ अथवा पहले स्वयं न घुसकर इस कठपुतले को ही घुसाता हूँ (कठपुतले को घुसाकर) अरे घर में तो कोई नहीं है। अच्छा तो अपने बचाव के लिए किवाड़ तो खेल लूँ । पुराना घर होने के कारण खोलते समय किवाड़ें चरमराती हैं। तो पहले इन्हें ठीक करने के लिए पानी खोजता हूँ ,पर पनी मिलेगा कहॉं ? (इधर-उधर देखते हुए, पानी लेकरऔर उसे छींटकर सन्देह के साथ) पानी गिरने से तो आवाज होगी,अच्छा तो ऐसाकरूँ। (पीठ के सहारे किवाड़ी उतारकर) अब इन्हें भी क्यों न जॉंच लूँये सोने का बहाना किए है अथवा सचमुच सोये हैं। (डरा कर और जॉंचकर) अरे, ये दोनों तो सचमुच सोये हैं। क्योंकि -

ये दोनों नि:शंक रूप से सोये है। इनकी सॉंसे स्वाभाविक रूप से चल रही है। लगातार इसकी सॉंसे समान अन्तर पर चल रही है। ऑंखे अच्छी तरह मूँदी है। उनमें न किसी प्रकार की विकृतियॉं है और न इनकी पुतलियॉं ही चंचल हैं, शरीर के प्रत्येक अंग शिथिल पड़े हैं। बिछावन से हाथ –पैर बाहर लटके रहे हैं। अगर ये सचमुच सोये नही होते तो सामने जलते दीप की रोशनी सहन नहीं कर पाते।18॥

इस श्लोक में समुच्च तथा अनुमान दो अलंकारों का प्रयोग है। पूरे श्लोक में शार्दूलविक्रीवित्त छन्द है।

(समन्तादवलोक्य) अये ! कथं मृदड्.ग:, अयं दर्दुर:, अयं पणव:, इयमपि बीणा, एते वंशा:, अमी पुस्तका: । कथं नाटयाचार्यस्य गृहमिदम् । अथवा , भवनप्रत्ययात् प्रविष्टोऽस्मि । तत् किं परमार्थदरिद्रोऽयम्? उत राजभयाच्चोरभयाद्वा भूमिष्ठं द्रव्यं धारयति तन्ममापि नाम शर्विलकस्य भूमिष्ठं द्रव्यम। भवतु बीजं प्रक्षिपामि । (तथा कृत्वा) निक्षिप्तं बीजं न क्वचित् स्फारीभवति। अये ? परमार्थदरिद्रोऽयम् । भवतु गच्छामि ।

हिन्दी अनुवाद- (चारों ओर देखकर) अरे यह मृदंग है, यह पखावज है,ये छोटे ढोल हैं, यह वीणा, ये ऑसूरियॉ, ये पुस्तकें । तो क्या मैं किसी संगीतशिक्षक के घर में घुस आया हूँ। या घर की विशालता के धोखें में घुसा हूँ । तो क्या गृहपति निश्चय ही दरिद्र है ? या राजा और चोर के डर से धन को धरती से गाड़ कर रखता है क्या ? तो धरती के नीचे का गड़ा हुआ धन तो शर्विलक का होता ही है। अच्छा तो इसे जॉचने के लिए सरसों फेंकता हूँ । (सरसों फेंककर) अरे यह तो बढती ही नहीं है। तो क्या ये सचमुच दरिद्र है ? तो यहॉ से मैं चलता हूँ।

विदूषक:- {भो वयस्य ! सन्धिरिव दृश्यसे, चौरमिव पश्यामि , तद्गृह्णातु भवानिदं सुवर्णभाण्डम् }।

विदूषक:- (सपने में बड़बड़ाता है।) हे मित्र , सेंध दिखलाई पड़ रही है, चोर को मैं देख रहा हूँ । लो , इस गहने की पेटी को अपने पास रक्खो।

शर्विलक:- किं नु खलु अयमिह मां प्रविष्टं ज्ञात्वा दरिद्रोस्मीत्युपअये , जर्जर –स्नानशाटीनिबद्धं दीपप्रभयोद्दीपितं सत्यमेवैतदलड्करणभाण्डम्। भवतु,गृह्णामि । अथ वा, न युक्तं तुल्यावस्थं कुलपुत्रजनंपीडयितुम् । तद् गच्छामि ।

शर्विलक- तो क्या मैं यहॉ आया हूँ , यह जानकर मेरी निर्धनता की यह खिल्ली उड़ा रहा है? तो क्या इसे मार डालूँ या कमजोर दिमाग का होने के कारण सपने में बड़बडा रहा है ? (देखकर) फटी पुरानी नहाने की धोती की गॉठ में लपेटा हुआ जेवरों का डिब्बा तो दीप के प्रकाश में सचमुचचमचमा रहा है। अच्छा तो इसे लेता हूँ। अथवा –अपने ही तरह सुवंश में उत्पन्न इस गरीब को सताना क्या उचित होगा ? तो लौट चलूँ।

विदूषक: - {भो वयस्य ! शापितोऽसि गोब्राह्मणकाम्यया,यवि एतत् सुवर्णभाण्डं न गृह्णासि। }

अनुवाद – विदूषक – हे मित्र, तुम्हें गाय और ब्राह्मण की कसम है; यदि इस डिब्बे को तुम न लो।

शर्विलक: - अनतिक्रमणीयाभगवती गोकाम्या, ब्राह्मणकाम्या च। तद् गृह्णामि । अथ वा, ज्वलतिप्रदीप: । अस्ति च, मया प्रदीपनिर्वापणार्थमाग्नेय: कीटो धार्यते। तं तावत् प्रवेशयामि, तस्यायं देशकाल: । एष मुक्ती मया कीटो यात्वेव । तं तावत् प्रवेशयामि, तस्यां देशकाल:। एष कुक्ती पक्षद्वयानिलेन निर्वापितो भद्रपीठेन, धिक् कृतमन्धकारम्। अथ वा, मयापि अस्मद् ब्राह्मकुले नधिक् कृतमन्धकारम्?अहं हि चतुर्वेदविदोऽप्रतिग्राहकस्य पुत्र: शर्विलको नाम ब्राह्मणो गणिकामदनिकार्थमकार्यमनुतिष्ठामि। इदानीं करोमि ब्राह्मणस्य प्रणयम्। (इति जिघृक्षति।)

अनुवाद –शर्विलक- गो-ब्राह्मण की कसम तो उपेक्षणीय नहीं है। इसीलिए लेता हूँ पर, दीपक जो जल रहा है। तो फिर इसे बुझाने वाले फतिंगे तो मेरे पास हैं ही। लो इसे छोड़ दिया। देखो कैसे विचित्रढंग से यह दीप शिखा पर घूमा रहा है। बस, अपी पॉख की हवा से बुता दिया। धुप अन्धेरा छा गया। मैंने भी तो इस ब्राह्मण के कुल को अन्धकाराच्छन्न कर दिया। मैं भी तो वेदश अप्रतिग्राही ब्राह्मण का बेटा शर्विलक हूँ। फिर भी एक मदनिका नामक वेश्या के लिए मुझे ये अनुचित काम करना पड़ रहा है। फिर मैं अब ब्राह्मण देवता से प्रेम करूँ। (जेवरात लेनाचाहता है।)

विदूषक :- { भो वयस्य ! शीतलस्ते अग्रहस्त: । }

अनुवाद विदूषक- मित्र तुम्हारी अँगुलियॉं तो बड़ी ठंडी हो रही है।

शर्विलक:- धिक् प्रमाद: । सलिलसम्पर्कात्शीतलो में अग्रहस्त: । भवतु, कक्षयोर्हस्तं प्रक्षिपामि। (नाटयेन सव्यहस्तमुष्णीकृत्य गृह्णाति ।)

अनुवाद शर्विलक: -हाय, हाय, यह तो मेरी असावधानी के कारण ही हुआ है। पानी छूने से मेरी अंगुलियॉं ठंडी हो गयी है। (अंगुलियॉं को कॉख के नीचे दबाकर गरमाता है। फिर अभिनय पूर्वक जेवर ले लेता है।)

विदूषक :- { गृहीतम् ?}

अनुवाद विदूषक- ले लिया ?

शर्विलक:- अनतिक्रमणीयोयं ब्राह्मणप्रणय: । तद् गृहीतम्।

अनुवाद- इस ब्राह्मण की कसम टाली नहीं नहीं जा सकती, इसलिए ले लिया।

विदूषक :-दाणीं विक्किणिद-पण्णा विअ वाणिओ, अहं सुहंसुविस्सं । इदानीं विक्रीतपण्य इव वाणिज: अहं सुखं स्वप्स्यामि।

विदूषक – अपना समान बेचकर निश्चिन्त होकर सोने वाले बनिए की तरह सुख की नींद सोऊँगा।

शर्विलक: - महाब्रह्मण ! स्वपिहि वर्षशतम्। कष्टस्, एवं मदनिकागणिकार्थे ब्राह्मणकुलं तमसि पातितम्। अथवा, आत्मा पातित: !

शर्विलक- महाब्राह्मण, सौ साल तक अब सोते रहो। मुझे अफसोस केवल यही है कि एक सामान्य वेश्या मदनिका के लिए मैंने अपने एक सगोत्रीय ब्राह्मण को सदा के लिए अन्धकार में डाल दिया, या अपनी आत्मा का पतन कर डाला।

धिगस्तु खलु दारिद्रयमनिवेदितपौरूषम्।
यदेतद्गर्हितं कर्म निन्दामि च करोमि च ।। 19 ।।

अन्वय: -अनिवेदितपौरूषम् , दारिद्रयम्, धिक्, अस्तु, खलु, यत्, एतत् गर्हितम्, कर्म, निन्दामि, च, करोमि च।

हिन्दी अनुवाद – अप्रदर्शित पुरूषार्थ वाली इस गरीबी को धिक्कार है। जिस काम की मैं स्वयं निन्दा करता हूँ उसे ही करने के लिए इस गरीबी के कारण विवश भी होता हूँ। 19।।

इस श्लोक में प्रस्तुत तथा अप्रस्तुत का वर्णन तुलनात्म रूप से किया गया है इस लिए दीपक अलंकार है। पूरे श्लोक अनुष्टुप छन्द का प्रयोग है।

तद्यावत् मदनिकाया निष्क्रयणार्थ वसन्तसेनागृहं गच्छामि।(परिक्रम्य अवलोक्य च) अये ! पदशब्द इव। मा नाम रक्षितण:। भवतु, स्तम्भीभूत्वा तिष्ठामि। अथवा ममापि नाम शर्विलकस्य रक्षिण: ? योऽहम्।

मार्जार: क्रमणे, मृग: प्रसरणे, श्यलेनो ग्रहालुञ्चने
सुप्तासुप्तमनुष्यवीर्यतुलने श्वा, सर्पणे पन्नग:।
माया रूप- शरीर-वेश –रचने ,वाग् देशभाषान्तरे ,
दीपो रात्रिषु, सड्कटेषु डुडुभो, वाजी स्थले , नौर्जले ।।20 ।।

अन्वय: - क्रमणे,मार्जर:, प्रसरणे , मृग:, ग्रहालुञ्चने, श्येन:, सुप्तासुप्तमनुष्यवीर्यतुलने, श्वा:, सर्पणे, पन्नग:, रूपशरीरवेशरचने, माया, देशभाषान्तरे, वाक्, रात्रिषु, दीपक:, सड्कटेषु,डुडुभ:, स्थले, वाजी, जले नौ।

हिन्दी अनुवाद- तो फिर, अब वसन्तसेना के घर चलूँ और जेवर देकर मदनिका को उससे मुक्त करा लूँ। (घूमकर और देखकर) अरे किसी के चलने की आवाज सुनाई पड़ती है। क्या कोई चौकीदार तो नहीं आ गया। तो कुछ देर रूक जाऊँ। या मुझ शर्विलक को इन चौकीदारों से क्या डर ? जो मैं-

कूद कर भागने में बिलाव, तेज दौड़ने में हिरण, झपट्टा मारकर छीनने में बाज सोते-जागते आदिमी की ताकत मापने में कुत्ता, सरककर चलने में सॉप, रूप परिवर्तन में माया , भाषा परिवर्तन में वाणी , रात के लिए दीप ,संकट के समय सियार ,धरती पर घोड़े और पानी में नाव की तरह की तरह हूँ। ।**20** ।। इस श्लोक में एक ही के लिए बहुत प्रकार से वहुधा उल्लेख होने के कारण उल्लेख अलंकार है। समस्त श्लोक शार्दूलविक्रीडित छन्द में है।

2.3.2 श्लोक संख्या 21 से 25 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

अपि च –

भुजग इव गतौ,गिरि: स्थिरत्वे,
पतगपते: परिसर्पणे च तुल्य:।
शश इव भुवनावलोकनेऽहं
वृक इव च ग्रहणे बले च सिंह: ।।21।।

अन्वय - अहम् गतौ भुजग इव, स्थिरत्वे, गिरि:, परिसर्पणे , च पतगपते:, तुल्य:, भुवनालोकने, शश:, इव, ग्रहणे, च, वृक, इव बले च, सिंह: ।21।

हिन्दी अनुवाद- और भी – मैं सरकने में सॉप ,धीरज में पहाड़, तेज भागने में गरूड़ , संसार को नाप लेने शशक, पकड़ में भेड़िये और पराक्रम में वनराज की तरह हूँ। ।21।

इस श्लोक में उत्प्रेक्षा के साथ उल्लेख अलंकार का प्रयोग है तथा पुष्पिताग्रा छन्द है।

रदनिका- (प्रविश्य) हद्धी ! हद्धी ! वाहिर-दुआर –सालाए पसुत्तो वड्ढमाण्ओ, सोवि एत्थ ण दीसइ। भोदु, अज्जमित्तेअं सद्दावेमि। (इति परिक्रामति।) { हा धिक्, हा धिक् ! बिहर्द्वारशालायां प्रसुसो वर्द्धमानकः, सोऽप्यत्र न दृश्यते। भवतु,आर्यमैत्रेयं शब्दापयामि।}

हिन्दी अनुवाद – रदनिका- (प्रवेश कर) हाय रे हाय, बैठके में वर्द्धमान सोया था, वह भी कहीं गायब है? अच्छा, आर्य मैत्रेय को ही पुकारती हूँ। (घूमती है ।)

शर्विलकः- (रदनिकां हन्तुमिच्छति। निरूप्य) कथं स्त्री ! भवतु, गच्छामि ।(इति निष्क्रान्तः।)

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक-(रदनिका को मारना चाहता है। देखकर) अरे, यह तो औरत है, तो चलूँ। (चला जाता है ।)

रदनिका- (गत्वा सत्रासम्) {हा धिक्, हा धिक् ! अस्मकं गेहे सन्धि कल्पयित्वा चौरो निष्क्रामति। भवतु, मैत्रेयं गत्वा प्रबोध्यामि ,आर्यमैत्रेय ! उत्तिष्ठ उत्तिष्ठ, अस्माकं गेहे सन्धि कल्पयित्वा चौरो निष्क्रान्तः । }

हिन्दी अनुवाद- (जाकर डरते हुए) हाय, हमारे घर में तो सेंध लगाकर चोर भाग रहा हैं अच्छज्ञ,मैत्रेय को जगाती हूँ। (विदूषक के पास जाकर) आर्य मैत्रेय , उठो, घर में चोर सेंध लगाकर भाग गया।

विदूषकः- (उत्थाय ।) आः दासीए धीए ! किं भणासि 'चोरं कप्पिअ सन्धी णिक्कन्तो ?' । {आः दास्याः पुत्रि ! किं भणसि 'चोरं कल्पयित्वा सन्धि निष्कान्तः ?' }

विदूषक – (उठकर) क्या कहा रे दासी पुत्री ,चोर काटकर सेंध निकल गई।

रदनिका –{हताश! अलं परिहासेन। किं न प्रेक्षसे एनम् ?!}

रदनिका- अरे शरारती, तुम्हें मजाक सूझता है। इसे देखते नहीं क्या ?

विदूषकः -{आः वास्याः पुत्रि ! किं भणसि ? द्वितीयमिव द्वारकम् उद्घाटितमिति। भो वयस्य ! चारूदत्तः उत्तिष्ठ।अस्माकं गेहे सन्धि दत्वा चौरो निष्कान्तः। }

विदूषकः - अरी छोकरी, क्या बोलती हो- 'दूसरा दरवाजा ही खोल दिया है।' मित्र चारूदत्त, उठो-उठो, हमारे घर में सेंध लगाकर चोर भाग गया है।

चारूदत्तः - भवतु। भोः ! अलं परिहासेन।

चारूदत्त- अच्छा, मजाक क्यों करते हो ?

विदूषकः - { भोः ! न परिहासः प्रेक्षतां भवान् ।}

विदूषक- मजाक नहीं करता दोस्त, जरा इधर देखो तो सही।

चारूदत्तः - कस्मिन्नुद्देशे ? ।

चारूदत्त- तो फिर कहॉ सेंध लगाया है ?

विदूषक : - भोः एषः।

विदूषक – ये क्या है ?

चारूदत्तः- (विलोक्य) अहो ! दर्शनीयोऽयं सन्धिः।

उपरितलनिपातितेष्ट कोऽयं

शिरसि तनुर्विपुलश्च माध्यदेशें।
असदृश जन-सम्प्रयोगभीरो –
हृदयमिव स्फुटितं महागृहस्य ।। 22 ।।

अन्वय:-उपरितलनिपातितेष्टक,शिरसि, तनु:मध्यदेशे,विपुल:,च,अयम् असदृशजनसम्प्रयोगभीरो: , महागृहस्य, स्फुटितम्, हृदयम्, इव **।। 22 ।।**

हिन्दी अनुवाद-- (देखकर) अहा, यह सेंध तो देखने लायक है।

ऊपर की ईटें खिसकाकर संकरे मुँह और बड़े पेट वाली सेंध काटी गई है। लगता है घर में नीच चोर के घुसने से इस विशाल भवन की छाती ही फट गई हो॥22॥

हृदय की तरफ महागृह के फट जाने की बात कहकर उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया गया है। तथा पूरे श्लोक में पुष्पिताग्रा छन्द है। तो क्या सेंध काटने में भी चतुराई होती है क्या?

विदूषक: - भो वयस्य ! एष सन्धिर्द्वाभ्यामेव दत्तो भवेत्। अथवा आगन्तुकेन शिक्षितुकामेन वा। अन्यथा इह उज्जयिन्यां क: आस्माकं गृहविभवं नजानाति ?

विदूषक- निश्चय ही सेंध काटने वाला चोर कोई बाहर का होगा या नीसिखुआ। अन्यथा इस उज्जयिनी में कौन ऐसा आदमी है जो इस घर की गरीबी को नहीं जानता ?

चारूदत्त: -

वैदेश्येन कृतो भवेन्मम गृहे व्यापारमभ्यस्यता
नासौ वेदितवान् धनैविरहितं विस्रब्धसुप्तं जनम्।
दृष्ट्वा प्राङ्महतीं निवासरचनामस्माकमाशान्वित:,
सन्धिच्छेदनखिन्न एव सुचिरं पश्चान्निराशो गत: ।।23।।

अन्वय: - वैदेश्येन , व्यापारम्, अभ्यस्यता, सम, गृहे ,कृत:, भवेत्, असौ , धनै:, विरहितम्, विश्रब्धसुप्तम्, जनम्, न, वेदितवान्, प्राक्, महतीम्, अस्माकम्, निवासरचनाम्, दृष्ट्वा, आशान्वित:, सुचिरम्, सन्धिच्छेदखिन्न, पश्चात्, निराश:, एव, गत: ।।23।।

चारूदत्त- अनजाने ही किसी विदेशी ने अथवा नौसिखुए चोर ने यह सेंध लगाई होगी। गरीबी के कारण निश्चिन्त सोने वाले मुझे वह जान ही नहीं सका। घर की विशालता के भ्रम से इतनी मेहनत से उसने सेंध लगाई और भीतर कुछ हाथ नहीं लगने पर निराश होकर लौट जाना पड़ा होगा **।।23।।**

इस श्लोक में विपरीत सम्बन्ध स्थापित करने के कारण अनुमान अलंकार है।

विदूषक:- भो: ! कथं तमेव चौरहतकमनुशोचसि। तेन चिन्तितम्- महदेतद्गेहम् इतो रत्नभाण्डं सुबर्णभाण्डं वा निष्कामयिष्यामि। कृत्र तत् सुवर्णभाण्डकम् ? भो वयस्य ! त्वं सर्वकालं भणसि –'मूर्खोमैत्रेय:अपण्डितो मैत्रय:' इति । सुष्ठु मया कृतं तत् सुवर्णभाण्डं भवतो हस्ते समर्पयता। अन्थया दास्या: पुत्रेण हपहतं भवेत्।

विदूषक- हाय, तुम तो उस नीच के बारे में सोचने लगे, जिसने सोचा होगा कि यह तो विशाल भवन है, निश्चय ही इस घर में मणिमन्जूषा या सोने के जेबरात निकाल लूँगा। (कुछ यादकर,

दु:खी होते हुए , अपने आप) अच्छा तो वह जेवर वाला बक्सा कहॉं है? (फिर कुछ याद कर, सुनाकर) मित्र, तुम तो हर समय मैत्रेय को मूर्ख और बुद्धू ही कहते हो, पर सोचो वसन्तसेना के जेवरों के उस डिब्बे को तुम्हारे हाथों में देकर मैने कितना अच्छा काम किया, अन्यथा यह अधम चोर तो हमसे चुरा ही लिये होता।

विदूषक:- भो: ! यथा नाम अहं मूर्ख:, तत् किं परिहासस्यापि देशकालंन जानामि?

विदूषक- अरे, मैं मूर्ख तो हूँ , पर क्या हँसी और मजाक करने की जगह और समय भी नहीं जानता क्या?

चारूदत्त:- कस्यां वेलायाम्?

चारूदत्त – तुमने कब दिया ?

विदूषक:- भो: यदा त्वं मया भणितोऽसि - शीतलस्ते अग्रहस्त:।

विदूषक-जिस समय मैंने कहा था- 'आपकी अँगुलियॉं तो बड़ी ठंडी है।'

विदूषक:- समाश्चसितु भवन्। यदि न्यासश्चौरेणापहृत:, त्वं किं मोहमुपगत: ?

क: श्रद्धास्यति भूतार्थ सर्वो मां तुलयिष्यति।
शड्कनीया हि लोकेस्मिन निष्प्रतापा दरिद्रता।। 24 ।।
भो: ! कष्टम्।
यदि तावत् कृतान्तेन प्रणयोर्थेषु में कृत:।
किमिदानीं नृशंसेन चारित्रमपि दूषितम्।। 25।।

अन्वय: -क:, भूतार्थम्, श्रद्धास्यति, सर्व:, माम्, तूलयिष्यति, ही , अस्मिन्, लोके, निष्प्रतापा, दरिद्रता, शड्कनीया ।।24।।

अन्वय: - यदि, तावत्, कृतान्तेन, में,अर्थेषु, प्रणय:, कृत:, नृशंसेन, इदानीम्, चारित्रम्, अपि दूषितम् ।।25।।

हिन्दी अनुवाद- - अरे , आप धीरज तो रक्खें ,यदि धरोहर को चोरों ने चुरा लिया तो फिर इसके लिए आप मूच्छित क्यों हो रहे हैं ?

भला सच्ची बात पर कौन विश्वास करेगा? लोग तो मुझ पर ही उल्टे सन्देह करेंगे। क्योकि , इस संसार में अपनी प्रभावहीनता के कारण गरीबी ही सारे शक का कारण होती है **।।24।।** हाय कितनी तकलीफ है-

यदि भाग्य ने मेरा विभव छीन ही लिया तो क्या अब इस निष्ठुर ने मेरे चरित्र पर भी धब्बा लगाकर ही छोड़ा **।।25।।**

2.3.3 श्लोक संख्या 26 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

विदूषक : - अहं खलु अपलपिष्यामि, केन दत्तम्? केन गृहीतम्? को वा साक्षी? इति।

विदूषक- मैं झूठे ही कह दूँ गा कि – किसने दिया? और इसका गवाह कौन है ?

चारूदत्त:- अहममिदानीमनृतमभिधास्ये ?

चारूदत्त- तो अब क्या मैं झूठ भी बोलूँगा।

भैक्ष्येणाप्यर्जयिष्यामि पुनर्न्यसिप्रतिक्रियाम् ।
अनृतं नाभिधास्यामि चारित्रभ्रंशकारणम् ।।26।।

अन्वय: - भैक्ष्येन, अपि , न्यासप्रतिक्रयाम्, पुन:, अर्जयिष्यामि , चारित्रभ्रंशकारणम्, अनृतम्, नैव, अभिधाष्यमि ।। 26 ।।

हिन्दी अनुवाद- मैं भीख मॉगकर भी वंसतसेना का धरोहर लौटा दँगा किन्तु , झूठ बोलकर किसी भी स्थिति में चरित्र की हत्या नहीं करूँगा ।।26 ।।

रदनिका- तद्यावत् आर्याधूतायैगत्वा निवेदयामि।

रदनिका – तो चलकर मान्य धूता को क्यों न सारी बातें बतला दूँ । (यह कहकर सभी बाहर चले गये ।) (तदनन्तर दासी के साथ धूता की मंच पर उपस्थिति ।)

वधू:- अयि ! सत्यम् अपरिक्षतशरीर आर्यपुत्र आर्यमैत्रेयेण सह?

वधू: - (घबराहटपूर्वक) क्या सचमुच, आर्य मैत्रेय के साथ स्वामी सकुशल है?

चेटी- किन्तु य: स वेश्याजनस्य अलंकारक: सोऽपहृत: ।

चेटी- स्वामिनि, मालिक तो ठीक हैं ही, पर उस गणिका के आभूषणों को चोरों ने चुरा लिया।

चेटी-समाश्चसित्वार्या धूता ।

चेटी- (वधू मूर्च्छित होने का अभिनय करती है ।) आर्या धूता,आप धीरज तो धारण करें।

वधू: - किं भणसि –'अपरिक्षतशरीर: आर्यपुत्र:' इति । वरमिदानी स शरीरेण परिक्षत: न पुनश्चारित्रेण । साम्प्रतमुज्जयिन्यांजन एवंमन्त्रयिष्यति- 'दरिद्रतया आर्यपुत्रेणैव ईदृशमकार्यमनुष्ठितम् । भगवन ! कृतान्त ! पुष्करपत्रपतितजलबिन्दुचञ्चलै: क्रीडसिदरिद्रपुरूषभागधेये: । इयञ्च में एका मातृगृहलब्धा रत्नावली तिष्ठति । एतामपि अतिशौण्डीरतया आर्यपुत्रो न ग्रहीष्यति । हञ्जे । आर्यमैत्रेयं तावत् शब्दापय ।

वधू- (सॉस लेकर) चेटी कया कह रही हो कि , उनकी देह में कोई चोट नहीं लगी है। धरोहर अपहरण का जो अब उन पर कलंक जायेगा, इसमें अच्छा होता उनकी देह घायल हो जाती, पर चोरी नहीं होती ।अब तो उज्जयिनि के लोग यही कहेंगे कि गरीबी के कारण चारूदत्त ने धरोहर पचा लिया है। (ऊपर की ओर देखतेहुए, लम्बी सॉस लेकर) हाय रे दै, कमल के पत्तों पर पड़ी हुई पानी के बूँदों की तरह गरीबों के भाग्य से खिलवाड़ करते हो । मुझे नैहर में एक रत्नहार मिला है; अगर मैं इसे देना भी चाहूँगी तो अतिउदार होने के कारण स्वामी इसे भी लेंगे । दासी, आर्य मैत्रेय को तो जरा बुलाओ।

चेटी- यदार्या धूता आज्ञापयति। आर्यमैत्रेय ! धूता त्वां शब्दापयति ।

चेट – जैसी आपकी आज्ञा ।(विदूषक के पास जाकर) आर्य मैत्रेय,आपको धूता बुला रही है ।

विदूषक:- कस्मिन्सा ?

विदूषक: - वे कहा है?

चेटी- एषा तिष्ठति । उपसर्प।

चेट-यहॉं है , आप चलिए तो ।

विदूषक: - स्वस्ति भवत्ये।

विदूषक –(पास जाकर) आपका कल्याण हो।

वधू:- आर्य! वन्दे। आर्य पुरस्तान्मुखो भव।

वधू- आर्य, प्रणाम करती हूँ ,जरा आप पूरब की ओर मुँ ह तो करें।

विदूषक: - एष भवति! पुस्तान्मुख: संवृत्तोऽस्मि।

विदूषक- लीजिए श्रीमति, मैं पूर्वाभिमुख हो गया।

वधू:- आर्य ! प्रतीच्छ इमाम्।

वधू:- आर्य इसे स्वीकार करें।

विदूषक :- किं न्वेतत्?

विदूषक – यह क्या है ?

वधू: - अहं खल् रत्नषष्टीमुपोषिता आसम्।तस्मिन् यथाविभवानुसारेण ब्रह्मण: प्रतिग्राहयितव्य:। स च न प्रतिग्राहित:। तत् तस्य कृते प्रतीच्छ इमां रत्नमालिकाम्।

वधू- आर्य, मैंने रत्नषष्ठी व्रत किया है। इस व्रत में अपने विभव के अनुसार ब्राह्मण को दान दिया जाता है। मैंने वह दान नहीं दिया है। अत: आप इस रत्नावली को स्वीकार करें।

विदूषक:- स्वस्ति। गामिष्यामि। प्रियवयस्यस्य निवेदयामि।

विदूषक- (लेकर) कल्याण हो। चलूं मैं मित्र चारूदत्त को इसकी सूचना दे दूँ।

वधू:- आर्य मैत्रेय ! मा खलु मां लज्जय।

वधू- आर्य मैत्रेय, मुझे अधिक न लजाओ। (कहकर निकल जाती है।)

विदूषक: - अहो। अस्या महानुभावता।

विदूषक- (अचम्भा के साथ) इस औरत की उदारता कमाल है।

विदूषक:- एषोऽसिम गृहाण एताम्।

विदूषक- (पास आकर) अभी आया, इसे लो। (रत्नाहार दिखलाता है।)

विदूषक: - भो: यत् ते सदृशदारसङ्ग्रहस्य फलम्।

विदूषक- अपनी सुयोग्य पत्नी पाने का परिणाम।

आत्मभाग्यक्षतद्रव्य: स्त्रीद्रव्येणानुकम्पित:।
अर्थत: पुरूषो नारी, या नारी सार्थत: पुमान्।।27।।

अन्वय:- आत्मभाग्यक्षतद्रव्य:, स्त्रीद्रव्येण, अनुकम्पित:, पुरूष:, अर्थत:, नारी, या, नारी, सा अर्थत:, पुमान्।।27।।

हिन्दी अनुवाद - अपने खराब भाग्य के कारण अब मैं अपनी पत्नी के धन पर पलने वाला बन गया हूँ। अपने काम से ही पुरूष कभी औरत बन जाता है और अपने काम से ही औरत मर्द बन जाती है।।27।।

धन के दान से धूता पुरूषत्व का आचरण करती है अत: वह नारी की पदवी को धारण कर सहायक बनती है। इस लिए परिणाम अलंकार है।

अथवा, नाहं दरिद्र: । यस्य मम-
अथवा, मैं दरिद्र नहीं हूँ। क्योंकि मेरे,

विभवानुगता भार्या सुखद:सुहृद्भवान् ।
सत्यच न परिभ्रष्टं यद्दरिद्रेषु दुर्लभम् ।।28।।

अन्वय:- भार्या, विभवानुगता, भावन् सुखद:खसुहत्, दरिद्रषु, यत्, दुर्लभम्, सत्यमृ, च, न, परिभ्रष्टम् **।।28।।**

हिन्दी में अनुवाद - विभव के अनुसार निर्वाह करने वाली पत्नी , सुख –दु:ख में साथ निभाने वाला तुम्हारे जैसे मित्र और सच्चाई का पल्ला थामे रहना भला किस गरीब को नसीब है पर, मेरे पास तो ये सारी चीजें मौजूद है **।।28।।**

इस श्लोक में निश्चिन्ता के लिए सभी कारण उल्लिखित है अत: समुच्च अलंकार है।

विदूषक:- मा तावत् अखादितस्य अभुक्तस्य अल्पमूल्यस्य चौररपहृतस्य कारणात् चतु:समुद्रसारभूत रत्नावली दीयते।

विदूषक –नही, नहीं, जिसे तुमने खाया नहीं, अपने किसी काम में लाया नहीं, जो इसकी अपेक्षा कम कीमत की चीज है, जिसे चोरों ने चुरा लिया, उसके बदले इतनी कीमती रत्नावली मत दो।

यं समालम्ब्य विश्वासं न्यासोस्मासु तया कृत:।
तस्यैतन्महतो मूल्यं प्रत्ययस्यैव दीयते ।।29।।

अन्वय: - तया, यम्, विश्वासम्, समालम्ब्य, अस्मासु, न्यास:, कृत:, तस्य, महत:, प्रत्ययस्य, एव, एतत् मूल्यम्, दीयते ।।29।।

हिन्दी अनुवाद- वसन्तसेना ने जिस विश्वास के साथ हमारे पास धरोहर रक्खी है, उसी बड़े विश्वास की यह कीमत दी जा रही है ।।29।।

इसमें सिद्धत्व का अध्यवसाय बताया गया है अत: अतिशयोक्ति अलंकार है।

तद्वयस्य ! अस्मच्छरीरस्पृष्टिकया शापितोसि , नैनामग्रायित्वा अत्रागन्तव्यम् । वर्द्धमानक !इसलिए हे मित्र, तुम्हें मेरी सौगन्ध है यदि तुम इसे उसको बिना दिये लौट आयो अरे ओ वर्द्धमानक,

एताभिरिष्टिकाभि: सन्धि : क्रियातां सुसंहत: शीघ्रम् ।
परिवाद-बहलदोषान्न यस्य रक्षा परिहरामि ।।30।।

अन्वय: - एताभि:, इष्टिकाभि:, सन्धि:, शीघ्रम्, सुसंहत:, क्रियताम् ! परिवादबहलदोषात्, यस्य, रक्षाम्, न, परिहरामि ।।30।।

हिन्दी में अनुवाद – इन बिखरी ईटों से सेंध को शीघ्र भर दो। लोग जान लेंगे तो बड़ी निन्दा होगी। क्योंकि निन्दा बड़ी तेजी से फैलती है **।।30।।**

निन्दा के विस्तार का प्रख्यापन करने से इस श्लोक में काव्यलिंग अलंकार है। इस पूरे श्लोक में आर्या छन्द है।

विदूषक:- भो: ! दरिद्र: किम् अकृपणं मन्त्रयति ?

विदूषक-हाय, क्या कोई गरीब भी निडर होकर कुछ कह सकता है ?

अभ्यास प्रश्न -

1.एक शब्द में उत्तर दिजिए-

(क) शर्विलक ने किस वस्तु का लेपन किया था ?

(ख) चोरी के कर्म में सर्वाधिक उपयोगी वस्तु कौन है ?

(ग) अँगुली बाधने का काम किससे किया जाता है ?

(घ) शर्विलक ने किवाड़ को किसके सहारे उतारा ?

(ड़) शर्विलक कौन है ?

(च) धरती के भीतर धन की जॉच हेतु किस वस्तु का प्रयोग किया गया ?

2. निम्नलिखित में सही उत्तर छॉटकर लिखिए ?

(1) विदूषक का मित्र है ?
  (क) राजा
  (ख) द्वारपाल
  (ग) शर्विलक
  (घ) कोई नहीं

(2) निम्नलिखित में सामान्य वेश्या है ?
  (क) रदनिका
  (ख) मदनिका
  (ग) धीरा
  (घ) कोई नहीं

(3) महाब्राह्मण है?
  (क) राजा
  (ख) द्वारपाल
  (ग) शर्विलक
  (घ) विदूषक

(4) विदूषक रत्नाहार को किसके पास लेकर गया ?
  (क) चेटी
  (ख) धूता
  (ग) शर्विलक
  (घ) वसन्तसेना

2.4 सारांश:-

शर्विलक चोरी विद्या में प्रवीण है उसका मित्र विदूषक है शर्विलक के लिए गो तथा ब्राह्मण की शपथ उपेक्षा के योग्य नही है। यद्यपि वह चोर है। योगरोचना का लेपन करने से चोरी करते समय उसे किसी का भय नहीं है। वह भागनेमें विलाव जैसे, दौड़ने में हिरण जैसा, धैर्य में पहाड़ जैसा है। वह औरत को नही मारता। चारूदत्त कटी हुई सेंधको देखकर विदूषक से कहता है कि कोई अनाड़ी ही इस कार्य को किया होगा क्योंकि उज्जयिनि में ऐसा कौन है जो इस घर की गरीबी को न जानता हो। मैं तो गरीबी के कारण निश्चिन्त सोया हुआ था। विशाल घर देखने के बाद भ्रम में पड़ कर चोर खाली हाथ लौट गया। चारूदत्त कहता है कि प्रभावहीनता के कारण गरीबी समस्त संदेह का कारण बन जाती है। मैं वसन्तसेना का धरोहर लौटा दूगॉ नहीं तो उज्जयिनि के लोग यही कहेंगे कि गरीबी के कारण उसने धरोहर पचा ली है। वह रत्नहार को लेकर वसन्तसेना के पास विदूषक को शपथ दे कर भेजता है। अन्त में चारूदत्त कहता है कि मैं गरीब नहीं हूँ क्योंकि मेरे पास विभव के अनुसार चलने वाली पत्नी है। तृतीय अंक के संवादपरक इस चौरकर्म के दृष्टान्त के अध्ययन के पश्चात आप यह अवश्य बता सकेगें की सम्पन्नता और गरीबी में क्या अन्तर होता है। तत्कालीन समय में घृणित कर्म करने वाला व्यक्ति भी इस प्रकार सैद्धान्तिक है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली:-

सुवर्णपिञ्जरा = कनकवत्पिड़गलवर्णा,
परमार्थसुप्तम् = यथार्थत: शयितम् ,
परमार्थसुप्तेन = यथार्थत: शयितेन,
ब्राह्मणकाम्या = द्विजाभिलाषा,
आग्नेय: = दीपशिखासम्बन्धी,
गणिकामदनिकार्थम् = मदनिकानामकवेश्यानिमित्तकम्,
महाब्राह्मण = परिहाससूचकं सम्बोधनम्,
अनिवेदितापौरूषम् = अप्रदर्शितपुरूषार्थम्,
खलु = निश्चयेन,
गहितम् = निन्दितम्,
निष्क्रयणार्थम् = दासीभावात् उ
परितलनिपातितेष्टका: = ऊर्ध्वभागाकृष्टेष्टका:,

पत्नी- सेवादासी, रतौ वेश्या, भोजने जननीसमा।
विपत्कालेपरं मित्रं सा भार्या भुवि दुर्लभा॥

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

(1) (क) योगरोचना (ख) जनेऊँ (ग) जनेऊँ (घ) सरसों (ड़) चोर (च) पीठ के सहारे

(2) 1.(घ) 2. (ख) 3. (घ) 4. (ग)

2.7 सन्दर्भग्रन्थः-

1. मृच्छकटिकम् – हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ0 रमा शंकर मिश्र –चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2. मृच्छकटिकम - हिन्दी व्याख्या सहित , डॉ0 जगदीशचन्द्र मिश्र- चौखम्भासुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. प्रस्तुत इकाई के आधार पर शर्विलक का चरित्र निरूपित कीजिए ?
2. चारूदत्त के सैद्धान्तिक पक्ष निरूपण कीजिए ?
3. विदूषक और चारूदत्त के संवादो की विशेषता लिखिए ?

इकाई -3 मृच्छकटिकम् चतुर्थ अंक श्लोक 1 से 17 मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 1 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    3.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    3.3.2 श्लोक संख्या 6 से 12 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    3.3.3 श्लोक संख्या 13 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
3.4 सारांश
3.5 पारिभाषिक शब्दावली
3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.7 सन्दर्भग्रन्थ
3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् नामक प्रकरण ग्रंथ के तृतीय अंक से सम्बन्धित अध्ययन हेतु यह चतुर्थ इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप तृतीय अंक की कथा समाप्ति के पश्चात मंच पर चेटी के प्रवेश करने के बाद के सम्वादों एवं श्लोकों का अध्ययन कर उनका तात्पर्य जानेगें।

प्रस्तुत इकाई में चेटी के द्वारा प्रवेश करने पर मदनिका, वसन्तसेना एवं अन्य शर्विलक आदि पात्रों के संवादों में भिन्न-भिन्न प्रकार की विशेषताओं एवं परिवेशों का अध्ययन करते हुए इस प्रकरण नाटक के चतुर्थ अंक की संपूर्ण वर्णन शैली से परिचित होगें।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानेगें कि चोरी की विद्या में निपुण शर्विलक अपनी चोरी का कथन किस प्रकार करता है तथा उसके संवादों में धन एवं स्त्री की गतिविधियां तथा उनकी मर्यादाएं किस सीमा तक कार्य करती हैं।

3.2 उद्देश्य:-

चेटी, मदनिका, वसन्तसेना, एवं शर्विलक तथा विदूषक के संवादों से परिपूर्ण चतुर्थ अंक की इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप बता सकेगें कि –

- चारूदत्त की आकृति की प्रशंसा मदनिका और वसन्तसेना ने किस प्रकार की।
- उसने कितनी स्वर्ण मुद्रा से बनी रत्न मालायें भेजी थी।
- शर्विलक मदनिका के रूप को देखकर किस प्रकार आकृष्ट होता है।
- प्रेम के वश में होकर चोरी किस प्रकार की जाती है।
- रूप सौन्दर्य के आकर्षण में कुलीन होते हुए भी शर्विलक क्यों चोरी का कार्य करता है।

3.3 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 1 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चतुर्थ अंक में श्लोक संख्या 1 से लेकर 17 तक के वर्णनों में भिन्न प्रकार की जीवनोपयोगी , व्यवहारोपयोगी और जीवन बोध से संबन्धित शिक्षाएं पात्रों के संवादों में भरी पड़ी हैं। यद्यपि वर्णन क्रम घटनाओं के अनुरूप है तथापि उनमें विभिन्न प्रकार कि मार्गदर्शक बातें निहित हैं। इस इकाई के सम्यक् अध्ययन हेतु वर्ण्य विषय को पांच-पांच श्लोकों में विभक्त कर सुगमता बोध हेतु वर्णन प्रस्तुत किया गया हैं।

3.3.1 श्लोक संख्या 1 से 5 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चेटी- आज्ञप्ताऽस्मि मात्रा आर्याया: सकाशं गन्तुम्। एषा आर्य्या त्रफलकनिषण्णदृष्टिर्मदनिकया सह किमपि मन्त्रयन्ती तिष्ठति। तद्यावदुपसर्पामि।

हिन्दी –चेटी - वसन्तसेना की मॉ ने मुझे उनके पास भेजा है। ये अपनी ऑखे चित्र में गड़ाए

मदनिका से कुछ बातें कर रही हैं। तो क्यों न उनके पास ही चलूं।

(तत: प्रविशति यथानिर्दिष्टा वसन्तसेना मदनिका च।)

(मचं पर पूर्वनिर्दिष्ट मदनिका और वसन्तसेना का प्रवेश।)

वसन्तसेना- हञ्जे मदनिके! अपि सुसदृशी इयं चित्राकृति: आर्यचारूदत्तस्य?

हिन्दी-- अरी मदनिके, आर्य चारूदत्त की यह चित्राकृति दर्शनीय एवं अनुरूप है ?

मदनिका- सुसदृशी।

मदनिका- हॉं, अनुरूप आकृति है।

वसन्तसेना- कथम् त्वं जानासि ?

वसन्तसेना-तुमने कैसे जाना ?

मदनिका- येन आर्याया: सुस्निग्धा दृष्टिरनुलग्ना।

मदनिका- क्योंकि , आपकी ऑंखे उसमें रम-सी गई है।

वसन्तसेना- हञ्जे! किं वेशवासदाक्षिण्येन मदनिके! एवं भणसि ?

वसन्तसेना- अरी मदनिके, वेश्या के घर में रहने के कारण ही बोलने में तुम इतनी चतुरा हो गई हो क्या?

मदनिका- आर्ये! किं य एव जनो वेशे प्रतिवसति, स एव अलीकदक्षिणे भवति ?

मदनिका- मान्ये, क्या जो वेश्या के घर में रहती है झूठ बोलने में वही पटु होती है क्या ?

वसन्तसेना- हञ्जे! नानापुरूषसड्गेन वेश्याजन: अलीकदक्षिणो भवति।

वसन्तसेना- हॉं रे, अनेक लोगों के सम्पर्क में आने के कारण वह झूठ बोलने में निश्चय ही पटु हो जाती है।

मदनिका- यतस्तावद्आर्याया दृष्टिरिह अभिरमते हृदयञ्च, तस्य कारणं किं पृच्छयते ऽत्र ?

मदनिका- जब आपकी ऑंखे और आपका हृदय इसमें रमे हैं तो फिर उसका अलग से कारण क्यों पूछ रही हैं ?

वसन्तसेना- हञ्जे! सखीजनादुपहसनीयतां रक्षामि।

वसन्तसेना- अरी सखियॉं , मजाक उड़ायेंगी , इससे बचना चाहती हूँ।

मदनिका- आर्ये! एवं नेदम्। सखीजनचित्तानुवर्त्ती अबलाजनो भवति।

मदनिका- आर्ये, ऐसी बात नहीं है; अबलाएँ तो इस क्षेत्र में एक दूसरे के प्रति हमदर्दी ही दिखलाती है।

प्रथमा चेटी-आर्ये! माता आज्ञापयति-'गृहीतावगुण्ठनं पक्षद्वारे सज्जं प्रवहणम्। तद्गच्छ' इति।

पहली चेटी- (पास आकर) आर्ये माता जी ने कहा कि बगल वाले दरवाजे पर पर्दा लगी गाड़ी खड़ी है उससे आप जायें।

वसन्तसेना - हञ्जे! किम् आर्य चारूदत्तो मां नेष्यति ?

वसन्तसेना - अरी, आर्य चारूदत्त मुझे लिवाने आये है क्या ?

चेटी- आर्ये! येन प्रवहणेन सह सुवर्ण-दशसाहस्रिकोऽलड़कार: अनुप्रेषित:।

चेटी- जिसने गाड़ी के साथ इस हजार स्वर्ण मुद्रा की रत्नमाला भेजी है।

वसन्तसेना - क: पुन: स: ?

वसन्तसेना - वह कौन है ?

चेटी - एष एव राजाश्याल: संस्थानक: ।

चेटी - वह राजा का साला 'संस्थानक'है ।

वसन्तसेना - अपेहि। मा पुनरेवं भणिष्यसि।

वसन्तसेना - (गुस्सा कर) यहॉं से भाग जाओ, फिर ऐसी बात मुँह से मत निकालना।

चेटी- प्रसीदतु, प्रसीदतु आर्या। सन्देशेनास्मि प्रेषिता।

चेटी- आर्ये कृपा करें। मैं तो केवल संदेशवाहिका हूँ । इसमें मेरा क्या कसूर ?

वसन्तसेना- अहं सन्देशस्यैव कुप्यामि।

वसन्तसेना- मेरा गुस्सा भी तो ऐसे सन्देश पर ही है।

चेटी- तत् किमिति मातरं विज्ञापयिष्यामि ?

चेटी- तब मैं माता जी से लौटकर क्या कहूँ ?

वसन्तसेना- एवं विज्ञापयितव्या -यदि मां जीवन्तीमिच्छसि,तदा एवं न पुनरहं मात्रा आज्ञापयितव्या।

वसन्तसेना-जाकर यही से लौटकर क्या कहूँ ?

चेटी- यथा ते रोचते।

चटी –जैसी आपकी आज्ञा चली जाती है।

शर्विलक - (प्रविश्य)

दत्वा निशाया वचनीयदोषं निद्राञ्च जित्वा नृपतेश्च रक्ष्यान्।
स एष सूर्योदयमन्दरश्मि: क्षपाक्ष्याच्चन्द्र इवास्मिजात: ।। 1।।

अपि च- **य: कश्चत्वरितगतिर्निरीक्षतेमां**
सम्भ्रान्तं द्रुतमुपसर्पति स्थितं वा।
तं सर्व तुलयति दूषितोऽन्तरात्मा
स्वैर्दोषैर्भवति हि शङ्कितो मनुष्य: ।।2।।

शर्विलक: - (प्रविश्य = रंगे समागत्य।)

अन्वय: - निशाया:, वचनीयदोषम्, दत्वा, निद्राम्, नृपते:, रक्ष्यान् , च, जित्वा, स, एष:, क्षपाक्षयात् , सूर्योदयमन्दरश्मि:, चन्द्र:, इव, जात: ,अस्मि ।।1।।

अन्वय: - य:, कश्चित्, त्वरितगति:, सम्भ्रान्तम्, माम्, निरीक्षते, वा, स्थितम्, द्रुतम्, उपसर्पति, दूषित:, अन्तरात्मा, तम्, सर्वम्, तुलयति, हि, मनुष्य:, स्वै:, दोषै:, शङ्कित:, भवति ।।2।।

हिन्दीअनुवाद- (प्रवेश कर)-रात को दोषवती बताकर नींद तथा सिपाहियों को जीतकर, इस समय रात के बीत जाने पर, सूर्योदय के कारण फीके पड़े चॉंद की तरह मैं भी असहाय हो गया हूँ।1 ।।

हिन्दी में अनुवाद – तेज चलने वाला कोई आदमी यदि डरा हुआ देखता है या जब मैं कहीं खड़ा रहता हूँ तो जल्दी में मेरी ओर आता है तो उन्हें देखकर मेरा मन सन्दिग्ध हो उठता है। मनुष्य सचमुच अपने कृत अपराध के कारण ही सन्दिग्ध होता **है ।।2।।**

मया खलु मदनिकाया: कृते साहसमनुष्ठितम्।

परिजनकथासक्त: कश्चिन्नर: समुपेक्षित:
क्वचिदपि गृहं नारीनाथं निरीक्ष्य विवर्जितम्।
नरपतिबले पार्श्वायाते स्थितं गृहदारूवद्
वसितशतैरेवंप्रायैर्निशा दिवसीकृता ।।3।।

मया= शर्विलकेन, मदनिकाया: कृते = मदनिकार्थम्, साहसम् =अपकर्मम्, अनुष्ठितम् = कृतमिति।

अन्वय:- परिजनककथासक्त, कश्चित्, नर:, समुपेक्षित:, क्वचिदपि, गृहम्, नारीनाथम्, निरीक्ष्य, विवर्जितम्, नरपतिबले,पार्श्वायते, गृहदारूवत्। स्थितम्, एवम् –प्रायै:, व्यवसितशतै:, निशा, दिवसीकृता **।।3।।**

हिन्दी में अनुवाद- मैनें मदनिका के कारण ही यह चोरी की है।

किसी घर में चोरी इसलिए नहीं की कि उस घर में औरतें ही औरतें थी। कहीं पहरेदार पास आ गया तो काठ के खंभे की तरह खडा रहकर समय काट दिया। इस तरह सैकड़ो काम से मैंनं रात को दिन बना दिया **।।3।।**(इति परिक्रामति।)

वसन्तसेना- हञ्जे ! इदं तावत् चित्रफलकं मम शयनीये स्थापयित्वा तालवृन्तर्क गृहीत्वा लघु आगच्छ। (घूमता है)।

वसन्तसेना-अरी इस फोटो को मेरे विछावन पर रखकर शीघ्र पंखा लेकर लौट आओ।

मदनिका – इति फलकं गृहीत्वा निष्क्रान्ता। (यदार्य्या आज्ञापयति)।

मदनिका - जैसी आपकी आज्ञा (चित्रपट लेकर चली जाती है।)

शर्विलक:- इदं वसन्तसेनाया गृहम्। तद्यावत् प्रविशामि। (प्रतिश्य।) क्व नु मया मदनिका द्रष्टव्या ?

शर्विलक - यही तो वसन्तसेना का भवन है, तो भीतर चलूँ। (भीतर जाकर) किधर खोजूँ ?

(तत: व्रचिशति तालावृन्तहस्ता मदनिका)

(इसी बीच पंखा लेकर आती हुई मदनिका का प्रवेश।)

शर्विलक: - (द्रष्ट्वा) अये इयं मदनिका-

शर्विलक - (देखकर) अरे यही तो मदनिका है -

मदनमपि गुणैर्विशेषयन्ती
रतिरिव मूर्तिमती विभाति येयम्।
मम हृदयमनड्गवह्नितप्तं
भृशमिव चन्दनशीतलं करोति ।।4।।

अन्वयः - गुणैः, मदनमपि, विशेषयन्ती , मूर्तिमती, रतिः, इव, विभाति । या, इयम्, अनङ्गवह्नितप्तम्, मम, हृदयम्, भृशम्, चन्दनशीतलम्, करोति , इव, ॥4॥

हिन्दी में अनुवाद - अपने गुणों से कामदेव को मोहित कर यह साक्षात् रति तरह शोभ रही है। कामाग्नि में जलते हुए मेरे हृदय पर तो मानो यह चन्दन का लेप ही है ॥4॥

मदनिका – अहो ! कथं शर्विलक: शर्विलक ! स्वागतं ते। कस्मिन् त्वम् ?

मदनिका-(देखकर) अरे शर्विलक, 'स्वागतम्' कहाँ से आ रहे हो ?

शर्विलकः- कथयिष्यामि।

बतलाऊँगा। (एक दूसरे को प्रेमपूर्वक देखते हैं) ।

वसन्तसेना- चिरयति मदनिका ।तत् कस्मिन् नु खलु सा। कथमेषा केनापि पुरूषकेन सह मन्त्रयन्ती तिष्ठति।

यथा अतिस्निग्धया निश्चलदृष्या आपिबन्तीव एतं निध्यायति, तथा तर्कयामि- एष स जन एनाभिच्छति अभुजिष्यां कर्तु म् । तत् रमतांम्। मा कस्यापि प्रीतिच्छेदो भवतु । न खलु शब्दापयिष्यामि।

वसन्तसेना - मदनिका बड़ी देर कर रही है। तो फिर कहाँ चली गई । (खिड़की से झाँककर) अरे यह तो किसी मर्द के साथ बातचीत कर रही है। दोनों ही एक दूसरे को आँखों ही आँखो में पी रहे हैं इससे अनुमान करतीहूँ कि यह वही पुरूष है जो मदनिका को हमारे घर के बन्धन से मुक्त कराने आया है। अच्छा तो जी भर कर रमण करों। इनके प्रेम में हम बाधक नहीं बनेंगे। इन्हें अब पुकारूँगी नहीं।

मदनिका- शर्विलक ! कथम।

(शर्विलक: सशंक दिशोऽवलोकयति।)

मदनिका- शर्विलक, कहो कैसे जाना हुआ ?

(शर्विलक डरते हुए चारों ओर देखता है।)

मदनिका- शर्विलक ! किन्विदम् ? सशङ्क इव लक्ष्यसे।

मदनिका- शर्विलक,पता नहीं तुम क्यों भयभीत- से लग रहे हो।

शर्विलकः- वक्ष्ये त्वां किञ्चित् रहस्यम् तद्विविक्तमिदम् ?

शर्विलक:- तुमसे कुछ गोपनीय बातें कहनी है। क्या यह जगह निरापद है ?

मदनिका- अथ किम् ?

मदनिका- हाँ , है।

वसन्तसेना- कथं परमरहस्यम्। तत् नश्रोष्यामि।

वसन्तसेना - अतिगोपनीय, तो नहीं सुनूँगी।

शर्विलकः - मदनिके ! किं वसन्तसेना मोक्ष्यति त्वां निष्क्रयेण ?

शर्विलक: - मदनिके, धारक-धन लौटा देने पर क्या वसन्तसेना तुम्हें मुक्त कर देगी ?

वसन्तसेना - कथं मम सम्बन्धिनी कथा। तत् श्रोष्यामि अनेन गवाक्षेण अपवारितशरीरा।

वसन्तसेना - यह तो मेरे सम्बन्ध की ही बातें हैं, तब तो छिपकर झरोखे से अवश्य ही सुनूँगी।

मदनिका – शर्विलक ! भणिता मया आर्य्या, ततो भणतिः, यदि मम स्वच्छन्द : तदा बिना अर्थ सर्व परिजनमभुजिष्यं करिष्यामि । अथ शर्विलक ! कुतस्ते एतावान् विभवः? येन मामार्य्यासकाशात् मोचयिष्यति।

मदनिका- शर्विलक, मैंने वसन्तसेना से इस सम्बन्ध में बातें की हैं। उनका कहना है कि इस सन्दर्भ में उनका वश चलता तो वे सारे सेवकों को यों ही मुक्त कर देती। पर, तुम्हारे पास इतने पैसे कहॉं से आये कि तुम मुझे उनसे पैसे देकर छुड़ा लोगें ?

शर्विलकः-

दारिद्रयेणाभिभूतेन त्वत्स्नेहानुगतेन च।
अद्य रात्रौ मया भीरू ! त्वदर्थे साहसं कृतम् ।।5।1

अन्वयः - हे भीरू, दारिद्रयेण, अभिभूतेन, च, त्वत्स्नेहानुगतेन, मया अद्य, रात्रौ त्वदर्थे ,साहसम्, कृतम् ।।5।।

हिन्दी में अनुवाद- शर्विलक-अरी डरपोक, गरीब होते हुए भी तुम्हारे प्रेम के वशीभूत होकर आज रात मैंने चोरी की है ।।5।।

अभ्यास प्रश्न 1.

निम्नलिखित कथनों में सत्य और असत्य का निर्धारण कीजिए।

1. वेश्या के घर में रहने वाली स्त्री झूठ बोलने में पटु होती है।
2. चारूदत्त ने दस हजार स्वर्ण मुद्रा की रत्न माला भेजी थी।
3. मनुष्य अपने किये हुए अपराधों के कारण संदिग्ध नहीं रहता है।
4. शर्विलक ने गरीब और डरपोक होते हुए भी चोरी किया।
5. मदनिका को शर्विलक भयभीत नहीं लगता है।
6. चतुर्थ अंक में अपने गुणों से काम देव को भी मोहित करने की बात कहीं गयी है।

3.3.2 श्लोक संख्या 6 से 12 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वसन्तसेना- प्रसन्ना अस्य आकृतिः, साहसकर्मतया पुनरूद्वेजनीया।

वसन्तसेना- इसका चेहरा तो खुश नजर आता है, पर चोरी करने के कारण भीतर से डरा है।

मदनिका- शवर्लिक ! स्त्रीकल्यवर्त्तस्य कारणेन उभयमपि संशाये विनिक्षिप्तम।

मदनिका- शर्विलक, क्षणिकऔरत –सुख के लिए तुमने दोनों गेंगाये।

शर्विलकः- किं किम् ?

शर्विलक-कौन दोनों ?

मदनिका- शरीरं चारित्रञ्च।

मदनिका- देह और चरित्र को।

शर्विलक:- अपण्डिते ! साहसे श्री: प्रतिवसति ।

शर्विलक –सूर्खे, साहस में लक्ष्मी का निवास है ।

मदनिका- शर्विलक ! अखण्डितचारित्रोऽसि, तत् खलु त्वया मम कारणात् साहसं कुर्वता अत्यन्तविरूद्धमाचरितम्।

मदनिका- हॉ शर्विलक, तुम्हारा चरित्र निर्दोष है। पर, मेरे लिए चोरी करके तुमने अपने आचरण के विरूद्ध काम किया।

शर्विलक:-

नो मुश्णाम्यबलां विभूषणवतीं फुल्लामिवाहं लतां
विप्रस्वं न हरामि काञ्चनमथो यज्ञार्थमभ्युद्धृतम् ।
धात्र्युत्सड़गतमं हरामि न तथा बालं धनार्थी क्वचित्
कार्य्याकर्य्यविचारिणी मम मतिश्चौर्य्याऽपि नित्यं स्थिता ।।6।।

अन्वय:- धनार्थी , अहम्, फूल्लाम्, लताम् इव, विभूषणवतीम्, अबलाम्, नो, मुष्णामि, विप्रस्वम्, अथो, यज्ञार्थम् , अभ्युद्धृतम्, काञ्चनम्, न, हरामि, तथा, क्वचित्, धत्र्युत्सड़्गगतम्, बालम् , न, हरामि, चौर्ये, अपि, मम, मति, नित्यम्, कार्याकार्यविचारिणी, स्थिता ।।6।।

हिन्दी अनुवाद - शर्विलक- धनलिप्सु होकर भी मैंने कभी फूलों से लदी लता की तरह जेवरों से सजी औरतों को कभी नहीं लूटा है, ब्राह्मणों का धन एवं यज्ञ के लिए संचित सोना भी कभी नहीं चुराया है, किसी धाय की गोद से भी कभी किसी बच्चे का अपहरण नहीं कियाहै,चोरी में भी मेरीबुद्धि उचितानुचित का विचार करती है **।।6।।**

तद्विज्ञाप्यतां वसन्तसेना-

अयं तव शरीरस्य प्रमाणादिव निर्मित:।
अप्रकाश्यं ह्यलड़कार: मत्स्नेहाद्धार्य्यतामिति ।।7।।

अन्वय: - अयम्, अलंकाड़्कार :, तव, शरीरस्य, प्रमाणात् इव, निर्मित:, अप्रकाश:, हि, मत्स्नेहात् धार्यताम् इति **।।7।।**

हिन्दी में अनुवाद- तो जाकर वसन्तसेना से कहो-

ये जेवर आपके ही प्रमाण का बना है, कृपया मेरे स्नेह से इसे आप छिपाकर पहन लें ।।7।।

मदनिका- शर्विलक! अप्रकाश्यम् अलड़्कारक: इति द्वयमपि न पुज्यते । तदुपनय तावत् प्रेक्षे एतमलंकारकम् ।

मदनिका- खुले आम नहीं पहनने लायक ये जेवर हम लोगों जैसी पहनने वाली, इन दोनों बातों की संगति ठीक से नहीं बैठती ।फिर भी दो, देखूँ जेवर कैसे हैं ?

शर्विलक: - इदमलड़्करणम्। (इति साशड़्क समर्पयति।)

शर्विलक- ये रहे जेवर।(कुछ डरते हुए देता है।)

मदनिका- दृष्टपूर्ण इवायमलड़्कार: । तद्भण कुतसते एष: ?

मदनिका- (देखकर) ये जेवर तो पहले के देखे हुए लगतेहै। फिर भी बतलाओंतुम्हें ये कहॉ मिले ?

शर्विलक:- मदनिके ! किं तब अनेन ! गृह्यताम् ।

शर्विलक- मदनिके, तुम्हें इससे क्या मतलब ? इसे तुम रख लो।

मदनिका - यदि से प्रत्ययं नगच्छसि, तत् किं निमित्तं मां निष्कीणासि ?

मदनिका -(गुस्सा कर)यदि तुम मुझ पर भरोसा नहीं करते हो, तो फिर छुड़ाना ही क्या चाहते हो ?

शर्विलक:- अयि ! प्रभाते मया श्रुतं श्रेष्ठिचत्वरे- यथा सार्थवाहस्य चारूदत्तसय इति।

(वसन्तसेना मदनिका च मूर्च्छा नाटयत: ।)

शर्विलक-अरी, आज सबेरे मैंने सुना है कि ये जेबर सेठों के मुहल्ले में रहने वाले सार्थवाह चारूदत्त के हैं। (वसन्तसेना और मदनिका दोनों बेहोश होने का अभिनय करती है।)

शर्विलक:- मदनिके ! समाश्वसिहि। किमिदानीत्व-

शर्विलक- मदनिके , धीरज धरो। इस समय तुम क्यो-

विषादस्रस्तसर्वाड्.गी सम्भ्रमभ्रान्तलोचना।
नीयमानाऽभुजिष्यात्वं कम्पसे नानुकम्पसे ।।8।।

अन्वय:-अभुजिष्यात्वम्, नीयमाना, विषादस्रस्तसर्वाड्.गी, सम्भ्रान्तलोचना, कम्पसे , न, अनुकम्पसे

हिन्दी - मुझ पर खुश होने के बदले डर से थर-थर कॉप रही हो ? घबडाहट के मारे तुम्हारी ऑखे चंचल हो रही हैं। मै तुम्हें बन्धनमुक्त करवा रहा हूँ और तुम नाराज हो रही हो ।।8।।

मदनिका- साहसिक ! न खलु त्वया मम कारणादिदमकार्य्य कुर्वता तस्मिन गेहे कोऽपि व्यापादित: परिक्षतो वा?

मदनिका- (किसी तरह धैर्यधारण करके) अरे ओ दु:साहसी, मेरे लिए यह कुकर्म करते हुए उस घर में तुमने किसी की जान तो नहीं ली, अथवा किसी को घायल तो नहीं किया?

शर्विलक: -मदनिके भीते सुप्ते न शर्विलक: प्रहरति। तन्मया न कश्चिद् व्यापादितो नापि परिक्षत: ।

शर्विलक- डरे हुए और सोये हुए पर शर्विलक कभी प्रहार नहीं करता। अत: उस घर में न तो कोई मरा है और घयल ही हुआ है।

मदनिका- सच्चं ? (सत्यम् ?)

मदनिका- क्या सच है ?

शर्विलक:- सत्यम् ।

शर्विलक- हॉ सच कहता हूँ।

वसन्तसेना- अहो, प्रत्युपजीवितास्मि।

वसन्तसेना- (होश मे आकर) हाय, जान बची।

मदनिका:- पिअम्। (प्रियम्।)

मदनिका- मेरा प्रिय ही हुआ।

शर्विलक:- (सेर्ष्यम्) मदनिके ! किं नाम प्रियमिति ?

शर्विलक- (ईर्ष्या के साथ) मदनिके, क्या प्रिय हुआ ?

त्वत्स्नेहबद्धहृदयो हि करोम्यकार्य,

सद्वृत्तपुरूषेऽपि कुले प्रसूत:।
रक्षामि मन्मथविपन्नगुणोऽपि मानं,
मित्रञ्च मां व्यपदिशस्यपरञ्च यासि।।9।।(साकुतम्)

अन्वय: - सद्वृत्तपूर्वपुरूषे , कुले , प्रसुत: अपि,त्वत्, स्नेहबद्धहृदय:, हि, आकार्यकरोमि, मन्मथविपन्नगुण:, अपि मानम्, रक्षामि, माम्, मित्रम्, व्यपदिशति, च, अपरम्, च, यासि ।।9।।

हिन्दी में अनुवाद- ऊँचे खानदान में जन्म लेने के बावजूद तुम्हारे प्रेम में फँसकर मैं बुराकाम करता हूँ ! तुमने मेरी मर्यादा ही नष्ट कर दी है फिर भी मैं अपने मान की रक्षा करता हूँ। और तुम तो सामने मुझे बल्लभ बतलाती हो पर मन से किसी दूसरे से इश्क लड़ाती हो **।।9।।**

(कुछ मतलब के साथ उदास होकर)

इह सव्रस्वफलिन: कुलपुत्रमहाद्रुमा: ।
निष्फलत्वमलं यान्ति वेश्याविहगभक्षिता: ।।10।।

अन्वय: -इह,सर्वस्वफलिन:,कुलपुत्रमहादुरमा:, वेश्याविहगभक्षिता:,अलम् निष्फलत्वं,यान्ति ।।10।।

हिन्दी अनुवाद- इस संसार में अपना सारा विभवही जिनका फल होता है, ऐसे कुलीन पुत्र रूपी बड़े पेड़ वेश्यारूपी चिड़ियों के द्वारा खाये जाकर एकदम फलहीन बना दिया जाते है ।।10।।

अयञ्च सुरतज्वाल: कामाग्नि: प्रणयेन्धन: ।
नाराणां यत्र हयन्ते योवनानि धनानि च ।। 11।।

अन्वय:- सुरतज्वाल:, प्रणयेन्धन:,अयम् कामाग्नि:, यत्र, नराणाम् यौवनानि, धनानि, हूयन्ते ।।11।।

हिन्दी अनुवाद – संभोग जिनकी ज्वाला है तथा प्रेम जिसका ईधन है वह काम रूपी अग्नि प्रज्ज्वलित हो रही है जिस आग में मनुष्य अपनी जवानी और सम्पत्ति को होम कर देता है ।।11।।

वसन्तसेना-(सस्मितम्) अहो ! से अत्थाणे आवेओ ! (अहो ! अस्य अस्थाने आवेग:।)

वसन्तसेना – (मुसकुराकर)अरे, इसका गुस्सा गलत जगह पर है।

शर्विलक:- सर्वथा-

शर्विलक -हर प्रकार से-

अपण्डितास्ते पुरूषा मता मे ये स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति।
श्रियो हि कुर्वन्ति तथैव नार्य्यो भजड़गकन्यापरिसर्पणानि ।।12।।

अन्वय:-ये, पुरूषा:, स्त्रीषु च, श्रीषु,च, विश्वसन्ति, ते, अपण्डिता:, में मता हि, श्रिय:, तथैव, नार्य:, भुजड़्गकन्यापरिसर्पणार्नि, कुर्वन्ति ।।12।।

हिन्दी -मेरी समझ में जो औरत और धन पर भरोसा करते है, वे मूर्ख है। धन और औरत सॉपिन की तरह हमेशा टेढी चाल ही चलती **हैं ।।12।।**

अभ्यास प्रश्न – 2

निम्नलिखित के एक शब्द में उत्तर दीजिए।

1. लक्ष्मी का निवास किसमें होता है।
2. शर्विलक ने किसका धन कभी नही चुराया।
3. चारूदत्त किस मुहल्ले में रहता है।
4. शर्विलक किस पर प्रहार नहीं करता है।
5. स्त्रियां किसके लिए हंसती तथा रोती हैं ।
6. क्षणिक अनुराग वाली वेश्यायें किसका हरण करना चाहती हैं।

3.3.3 श्लोक संख्या 13 से 17 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

स्त्रीषु न राग: कार्यो रक्तं पुरूषं स्त्रिय: परिभवन्ति।
रक्तैव हि रन्तव्या विरक्तभावा तु हातव्या ।।13।।

अन्वय: -स्त्रीषु, राग:, न, कार्य:, स्त्रिय:, रक्तम्, पुरूषम्,परिभवन्ति,हि, रक्ता:, एवं, रन्तव्या, विरक्तभावा, तु, हातव्या, **।।13।।**

हिन्दी अनुवाद-औरतो की अधिक प्यार नहीं देना चाहिए, औरतें, आसक्त पुरूष को सदैव अपमानित करती है। अपने पर आसक्त औरतों से ही प्रेम करना चाहिये, अदासीन औरतों की शीघ्र उपेक्षा कर देनी चाहिये **।।13।।**

सुष्ठु खल्विदमुच्यते-

एता हसन्ति च रूदन्ति च वित्तहेतो-
विश्वासयन्ति पुरूषं च वित्तहेतो-
विश्वासयन्ति पुरूषं न तु विश्वसन्ति।
तस्मान्नरेणकुलशीलसमन्वितेन
वेश्या: श्मशानसुमना इव वर्जनीया: ।।14।।

अन्वय: -एता:, वित्तहेतो:, हसन्ति, च, रूदन्ति च, पुरूषम् विश्वासयन्ति,तु न, विश्वासन्ति तस्मात्, कुलशीलसमन्वितेन, नरेण,श्मशानसुमना:, इव, वेश्या, वर्जनीया: **।।14।।**

हिन्दी अनुवाद - यह ठीक ही कहा गया है कि –

ये औरतें धन के लिए ही हँसती हैं, धन केलिए ही रोती है। पुरूष को अपने विश्वास में लाती है और स्वयं पुरूष का विश्वास नहीं करती है। अत: कुलशील व्यक्तिा को श्मशान घाट की माला की तरह इन वेश्याओं का मोह छोड़ देना चाहिए **।।14।।**

अपि च-

समुदीवीचीव चलस्वभाव: सन्ध्याभ्रलेखेव मुहूर्त्तरागा:।
स्त्रियो हृतार्था: पुरूषं निरर्थं निष्पीडितालक्तकवत् तयजन्ति ।।15।।

अन्वय: -समुद्रवीची इव, चलस्वभाव:, सन्ध्याभ्रलेखा इव, मुहूर्त्तरागा:, स्त्रिय: हृतार्था:, निरर्थम्, पुरूषम् , निष्पीडितालक्तकवत्, त्यजन्ति **।।15।।**

हिन्दी अनुवाद- और भी- सागर की लहरों के समान चपल स्वभाव वाली, सायंकालीन मेघ की तरह क्षणिक अनुराग वाली वेश्याएँ केवल धन हरण करना जानती है। धन छीन लेने के बाद अपने गरीब प्रेमी को निचौड़े गये महावर की तरह छोड़ देती है **।।15।।**

अन्यं मनुष्यं हृदयेन कृत्वा ह्यन्यं ततो दृष्टिभिराह्वयन्ती ।
अन्यत्र मुञ्चन्ति मदप्रसेकमन्यं शरीरेण च कामयन्ते ।।16।।

अन्वयः -हृदयेन, अन्यम्, मनुष्यम्, कृत्वा, ततः, अन्यम्, दृष्टिभिः, आह्वयन्ति, अन्यत्र, मदप्रसेकम्, मुञ्चन्ति, शरीरेण, अन्यम् ,च, कामयन्ते **।।16।।**

हिन्दी अनुवाद – औरतें बडी चंचल होती है-

वे मन से किसी और को चाहती है और इशारे से किसी और को बुलाती है। अपनी जवानी की रवानी में किसी को फॉसती है तो देह से किसी और के साथ उपभोग करती है **।।16।।**

सूक्तं खलु कस्यापि-

न पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति न गर्दभा वाजिधुरं वहन्ति ।।
यवाः प्रकीर्णा न भवन्ति शालयो न वेशजाताः शुचयस्तथाऽङ्गना ।। 17।।

अन्वयः- पर्वताग्रे, नलिनी , न प्ररोहति, गर्दभाः, वाजिधुरम् न, वहन्ति, प्रकीर्ण :, यवाः शलयः, न, भवन्ति, तथा वेशजाताः, अंगना, शुचयः न **।।17।।**

हिन्दी अनुवाद- किसी ने बड़ा अच्छा कहा है-

पर्वत की चोटी पर पद्मिनी नहीं जमती, गदहे घोड़े की गाड़ी नही खीचते, खेत में बोए गये जौ धान नहीं बन जाते, उसी तरह वेश्या के घर में पैदा हुई औरतें पवित्र नहीं होती ।।17।।

(इति कतिचित् पदानि गच्छति।)

मदनिका- अइ असम्बद्धभासक ! असम्भावनीये कुप्यसि।

शर्विलका- कथमसम्भावनीयं नाम !

मदिनका- एष खल्वलंगरः आर्यासम्बन्धी।

अभ्यास प्रश्न -3

निम्नलिखित में सही विकल्प चुनकर उत्तर दीजिएं।

1. डाली पीटकर उसे पत्तों से रहित किसने किया।
   (क) मदनिका
   (ख) वसन्तसेना
   (ग) शर्विलक
   (घ) कोई नहीं
2. समाश्रितःपद का अर्थ होगा।
   (क) आश्रितवान्
   (ख) निःश्रितवान्

(ग) गतवान्
(घ) कोई नहीं

3. पद्यमिनी किसकी चोटी पर नहीं उगती।
(क) पर्वत
(ख) वृक्ष
(ग) मकान
(घ) महल

4. हृदयेन में कौन सी विभक्ति हैं।
(क) प्रथमा
(ख) तृतीया
(ग) चतुर्थी
(घ) द्वतीया

5. कृत्वा में कौन सा प्रत्यय है।
(क) ल्यप्
(ख) क्त्वा
(ग) शानच्
(घ) कोई नहीं

6. वेश्या: श्मशानसुमना इव वर्जनीया: का अर्थ है।
(क) श्मशान घाट की माला की तरह वेश्याये त्याज्य हैं।
(ख) श्मशान घाट की तरह त्याज्य हैं।
(ग) श्मशान की लहरोंकी तरह वर्जित है
(घ) कोई नहीं

3.4 सारांश:-

चतुर्थ अंक की इस अंक में आपने लगभग चार से अधिक स्त्री एवं पुरूष पात्रों के संवादों का अध्ययन कर यह जाना की चेटी ने प्रवेश कर मदनिका और वसन्तसेना से चारूदत्त के बारे में क्या बताया पुन: वसन्तसेना के द्वारा मदनिका को वेश्या के घर में रहने के कारण बोलने में चतुर होने का सम्वाद उपस्थित होने के पश्चात तीनों में चारूदत्त से संबन्धित अन्य सम्वाद चित्रित किये गये है। आगे शर्विलक प्रवेश करके अपनी चोरी का प्रख्यापन करता है और कहता है कि मैंने जगे होने के कारण किसी के घर में चोरी नहीं की तो किसी के घर को औरतों के करण छोड़ दिया और कहीं पहरेदारों के नाते भी चोरी नहीं की। पुन: वसन्तसेना चारूदत्त के चित्र को अपने विस्तर पर रखती है इस प्रकार शर्विलक मदनिका को देखने के बाद उससे अकृष्ठ होता है, मदनिका उसका स्वागत भी करती है। इसमें विलम्ब होने के कारण वसन्तसेना अनेकप्रकार के कथन करती है। पुन: शर्विलक अपनी चोरी का वर्णनकरते हुए स्त्रियों की अनेक प्रकार की गतिविधियों और मर्यादाओं

से सम्बन्धित तथ्यों का कथन करने लगता है। इन्हीं सब सम्वादों का प्रणयन् श्लोक संख्या 1 से 17 तक किया है अत: इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप मदनिका और शर्विलक के प्रेम - प्रसंग को बताते हुए इसकी चोरी एवं स्त्रियों की गतिविधियों का वर्णन कर सकेगें।

3.5 पारिभाषिक शब्दावली

मूर्त्तिमतीम् – शरीर धारण करने वाली , अनंगवह्निसन्तप्तम् -काम की अग्नि से जलते हुए , **मन्त्रयती** – गुप्तमालपन्ती, - एकान्त में बात करती हुई, अखण्डितचारित्रोऽसि- जिसका चरित्र कभी खण्डित न हुआ हो, मुष्णामि-हरामि -चोरी करूगां , तर्कवितर्केन तव- भवत्या:-तर्क वितर्क के द्वारा तुम्हारा।

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1 -1.सत्य 2. सत्य 3.असत्य 4. सत्य 5.असत्य 6. सत्य

अभ्यास प्रश्न 2- 1. साहस 2. ब्रह्मण 3. सेठों के 4.सोते हुए पर 5. धन 6. धन

अभ्यास 3- 1. (ग) शर्विलक 2. (क) आश्रितवान् 3.**(क) पर्वत** 4. **(ख) तृतीया**
5. **(ख) क्त्वा** 6. **(क) श्मशान घाट की माला की तरह वेश्यायें त्याज्य हैं।**

3.7 संदर्भग्रन्थ

1. डॉ0 कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. डॉ0 उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. चतुर्थ अंक के प्रथम और द्वितीय श्लोक की व्याख्या कीजिए।
2. शर्विलक की चोर विद्या का वर्णन कीजिए।

इकाई - 4 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 18 से 32 मूल पाठ व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 18 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    4.3.1 श्लोक संख्या18 से 23 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    4.3.2 श्लोक संख्या 24 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
    4.3.3 श्लोक संख्या 31 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या
4.4 सारांश
4.5 पारिभाषिक शब्दावली
4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.7 सन्दर्भग्रन्थ
4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना:-

मृच्छकटिकम् के चतुर्थ अंक में श्लोक संख्या 1 से 17 तक के वर्णनों के पश्चात् 18 से 32 तक के श्लोकों में वर्णन किये गये तथ्यों से संबन्धित चुतुर्थ इकाई है। इस इकाई के अन्तर्गत आप शर्विलक द्वारा बताये गये स्त्रियों के विभिन्न प्रकार के आचरणों का अध्ययन करते हुए उसके द्वारा की गयी चोरी एवं प्रणय लीलाओं का अध्ययन करेगें। वसन्तसेना का कथन है कि चारूदत्त ने जेवर पहुचाने वाले को उसकी मदनिका देने के लिए कहा है। शर्विलक के कथन में मनुष्यों के सद्गुणों का वर्णन करते हुए उसकी प्रिय एवं अप्रिय वस्तुओ का प्रख्यापन करके रत्नावली नाटिका का स्मरण भी किया गया है। 25 वें श्लोक के बाद रावण की चर्चा भी की गयी है पाकशाला का वर्णन करते हुए विदूषक के द्वारा अन्यानय परिहास भी प्रस्तुत किये गये हैं।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप बतायेगें कि इस अध्ययन यात्रा में स्त्री पुरूष के किन सम्वादों में भिन्न –भिन्न प्रकार की कितनी शिक्षाएं प्राप्त होती है।

4.2 उद्देश्य:-

श्लोक संख्या 18 से लेकर 32 तक के सम्यक अध्ययन हेतु लिखित इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप यह बता सकेंगे कि।

- विदुषक ने कितने परिहास किये है।
- वह अपनी धूर्तता की प्रशंसा किस प्रकार करता है।
- सार्थवाह कौन है।
- वसन्तसेना व शर्विलक के सम्वादों में क्या विशेषता है।
- हिरण्यकश्यप कौन था।

4.3 मृच्छकटिकम् श्लोक संख्या 18 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वर्णन के इस अंश में चतुर्थ अंक के 18वें श्लोक से सम्वादों के साथ क्रमश: 32 वें श्लोक के सम्पूर्ण वर्णन उल्लिखित है। सर्वप्रथम प्रस्तुत अंश में शर्विलक के कथन से लेकर पुन: 23 वें श्लोक तक शर्विलक के ही कथन पर ही वर्णन समाप्त है। पुनश्च आगे के अंशों अन्य वर्णन किये जायेगें।

4.3.1 श्लोक संख्या 18 से 23तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

मदनिका- (कपडे का छोर पकड़कर)अरे, ओ उटपटांग बोलने वाले, तुम तो बेकार ही गुस्सा कर रहे हो।

शर्विलक- यह असंभव कैसे हो सकता है।

मदनिका- ये जेवर बसन्तसेना के ही है।

शर्विलक: तत: किम्?

शर्विलक -इससे क्या?

मदनिका -स च तस्स अज्जस्स हत्थे विणि क्खित्तो। (स च तस्य आर्यस्य हसते विनिक्षिस: ।)

मदनिका-यह आभूषण उन्होंने चारूदत्त के घर धरोहर के रूप में रक्खा था।

शर्विलक: - किमर्थम्?

शर्विलक- यह क्यों ?

मदनिका- एवमिव।

मदनिका- (कान में कुछ कहती है) इसलिए।

शर्विलक: (सर्वलक्ष्यम्) भो: ! कष्टम्।

शर्विलक- (लज्जा के साथ) बड़े दु:ख की बात है।

छायार्थ ग्रीष्मसन्तप्तो यामे वाहं समाश्रित:।
अजानता मया सैव पत्रै: शाखावियोजिता ।।18।।

अन्वय:- ग्रीष्मसन्तप्त:, अहम्, छायार्थम। याम् एव, समाश्रित:, अजानता मया, सा, एवं, शाखा, पत्रै:, वियोजिता ।। **18।।**

हिन्दी अनुवाद - गर्मी से परेशान मैंने जिस डाली का सहारा लिया, उसी को अनजाने ही पीट कर मैंने पत्तों से रहित कर दिया **।।18।।**

वसन्तसेना- कथमेषोऽपि एव। तदजानता एतेन एवमनुष्ठितम्।

वसन्तसेना- क्या यह पछता रहा है? इसने तो अनजान में ही चोरी की है।

शर्विलक:- मदनिके ! किमिदानी युक्तम् ?

शर्विलक- मदनिके , तू ही बता, अब क्या करना चाहिए।

मदनिका- अत्र त्वमेव पण्डित:।

मदनिका- मैं क्या कहूँ? इस विषय में तो तू ही चालाक है।

शर्विलक:- नैवम्। पश्य -

शर्विलक- ऐसी बात नहीं है। देखो-

स्त्रियो हि नाम खल्वेता निसर्गादेव पण्डित:।
पुरूषाणान्तु पाण्त्यिं शास्त्रैरेवोपदिश्यते ।।19।।

अन्वय: - एता:, स्त्रिय:, हि, निसर्गात् एव, पण्डिता:, खलु, नाम, तु, पुरूषाणाम्, पाण्डित्यम्, शास्त्रै:, एव, उपदिश्यते **।।19।।**

हिन्दी अनुवाद- व्यावहारिक क्षेत्र में पुरूषो की अपेक्षा औरतें अधिक चतुर होती हैं। क्योंकि पुरूषों की चतुराई तो शास्त्रोपदेश से होती **है ।।19।।**

मदनिका -शर्विलक ! यदि मम वचनं श्रूयते, तत तस्यैव महानुभावस्य प्रतिनिर्यातय।

मदनिका- शर्विलक, अगर मेरी बात सुनो तो मैं कहूँगी कि ये सारे आभूषण आर्य चारूदत्त को ही लौटा दो।

शर्विलक:- मदनिके ! यद्यसौ राजकुले मां कथयति ?

शर्विलक-वाह री मदनिके, और अगर वह कचहरी में नालिश कर दे तब?

मदनिका- न चन्द्रादातपो भवति।

मदनिका- चॉंद से कभी गर्मी नहीं होती है।

वसन्तसेना- साधु मदनिके ! साधु ।

वसन्तसेना- वहा, मदनिके, खूब ।

शर्विलक:- मदनिके !

शर्विलक- मदनिके,

न खलु मम वषाद: साहसेऽस्मिन् भयं वा
कथयसि हि किमर्थ तस्य साधोर्गुणांस्त्वम् ।
जनयति मम वेदं कुत्सितं कर्म लज्जां
नृपतिरिह शठानां मादृशां किं नु कुर्यात् ?।।20।।

अन्वय:- अस्मिन्, साहसे, मम, विषाद:, वा भयम्,न, खलु, त्वम्, तस्य, साधो:, गुणान् किमर्थम्, कथयसि? हि , इदम्, कुत्सितम्, कर्मम्,वा, मम, लज्जाम्, जनयति, इह, नृपति:, मादृशाम्, शठानाम्, किम् कुर्यात्?।।20।।

हिन्दी अनुवाद- मैनें हिम्मत के साथ यह चोरी की है । सच पूछो तो इसके लिए नतो मुझे पछतावा है और न कचहरी से सजा पाने का डर। ऐसी स्थिति में तुम चारूदत्त की भल मनसाहत का बखान क्यों कर रही हो? मुझे मेरा अपना बुरा काम ही लजा रहा है। मेरे जैसे धूर्त्त का राजा क्या बिगाड़ लेगा ?।।20।।

तथापि नीतिविरूद्धमेतत् । अन्य उपायश्चिन्त्यताम् ।

फिर भी यह चोर नीति के विरूद्ध है। कोई दूसरा तरीका निकालो।

मदनिका- सोऽयमपर उपाय:।

मदनिका – दूसरा तरीका भला क्या हो सकता है?

वसन्तसेना-क: खलु अपर उपायो भविष्यति ।

वसन्तसेना- दूसरा तरीका भला क्या हो सकता है?

मदनिका-तस्यैव आर्यस्य सम्बन्धी भूत्वा, एतमलड़्कारमार्याया उपनय।

मदनिका-चारूदत्त का सम्बन्धी बनकर आर्या वसन्तसेना को ये जेवरात सौप दो।

शर्विलक:- नन्वतिसाहसमेतत् ।

शर्विलक- ऐसा करने से क्या होगा?

मदनिका- त्वं तावदचौर:, सोऽपि आर्य: अनृण:, आर्य्याया: स्वक: अलंकारक उपगतो भवति ।

मदनिका- तुम चोर नहीं समझे जाओगे, चारूदत्त न्यायमुक्त हो जायेगा, वसन्तसेना को उनका आभूषण मिल जायेगा ।

शर्विलक: - नन्वतिसाहसमेतत् ।

शर्विलक- लेकिन, यह तो बड़ी हिम्मत का काम है।

मदनिका- अयि! उपनय अन्यथा अतिसाहसम् ।

मदनिका- चलो, उठाओ जेवर। ऐसा नहीं करना ही दु:साहस है।

वसन्तसेना- साधु मदनिके ! साधु । अभुजिष्ययेव मन्त्रितम् ।

वसन्तसेना- वाह मदनिके, विवाहिता पत्नी की तरह ही तुमने सलाह दी है।

शर्विलक:-

मयाप्ता महती बुद्धिर्भवतीमनुगच्छता ।
निशायं नष्टचन्द्रायां दुर्लभो मार्गदर्शक: ।।21।।

अन्वय: - भवतीम् अनुगच्दता, मया, महती, बुद्धि, आप्ता, नष्टचन्द्रायाम्, निशायाम्, मार्गदर्शक: ।।21।।

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक- तुम्हारे कथनानुसार चलकर मैंने भी बड़ी बुद्धि पा ली है। अमावस के अन्धकार में पथभ्रष्ट पथिक को कठिनाई से मार्गदर्शक मिलता है ।।21।।

मदनिका- तेन हि त्वमस्मिन् कामदेवगेहे मुहुर्त्तकं तिष्ठ, यावदार्यायै तवागमनं निवेदयामि।

मदनिका-अच्छा तो इस काममन्दिर में तुम कुछ देर रूको, जब तक मान्या वसन्तसेना को मैं तुम्हारे आगमन की सूचना दे दूँ।

शर्विलक:- एवं भवतु ।

शर्विलक - जाओ, ऐसा ही करो ।

मदनिका- आर्ये ! एष खलु चारूदत्तस्य सकाशाद् ब्राह्मण: आगत: ।

मदनिका- (पास जाकर) आर्ये,मान्य चायदत्त ने एक ब्रह्मण को भेजा है ।

वसन्तसेना- हञ्जे ! तस्य सम्बन्धीति कथं त्वं जानासि ?

वसन्तसेना- अरी तुम कैसे जानती हो कि यह उनका सम्बन्धी है ?

मदनिका- आर्ये ! आत्मसम्बन्धिनमपि न जानामि ?

मदनिका- आर्ये, क्या अपने सम्बन्धियों को भी नहीं पहचान सकूँगी ।

वसन्तसेना - युज्यते । प्रविशतु ।

वसन्तसेना- (मन ही मन, सिर हिलाकर, हँसती हुई) ठीक है। (प्रकट) उन्हें बुलाओ ।

मदनिका- यदार्या आज्ञापयति। प्रविशतु शर्विलक:।

मदनिका- जो आज्ञा (जाकर) शर्विलक, भीतर चलो ।

शर्विलक:- (उासृत्य, सवैलक्ष्यम्) स्वस्ति भवत्यै।

शर्विलक- (पास जाकर, घबड़ाये हुए) आर्ये,कल्याण हो ।

वसन्तसेना- आर्य ! वन्दे। उपविशतु आर्य: ।

वसन्तसेना- आर्य, वसन्तसेना प्रणाम करती है। आइए,विराजिये ।

शर्विलक:- सार्थवाहस्त्वां विज्ञापयति –जर्जरत्वाद् गृहस्य दूरक्ष्यमिदं भाण्डम्, तद् गृह्यताम् । (इति मदनिकाया:समर्प्य प्रस्थित:।)

शर्विलक- सार्थवाह ने आपसे निवेदन किया है कि- घर के जर्जरहोने से आभूषणों की रक्षा करना कठिन है। अत: आप इन्हें ग्रहण करें।(मदनिकाकी आभूषण देकर जाने लगता है।

वसन्तसेना- आर्य! ममापि तावत् प्रतिसन्देशं तत्रार्य्यो नयतु।

वसन्तसेना- आर्य ! आप मेरा उत्तर भी लेते जायें।

शर्विलक: (स्वागतम्) कसतत्र यास्यति? (प्रकाशम्) क: प्रतिसन्देश: ?

शर्विलक-(मन ही मन) हाय,वहॉं जायेगा कौन? (प्रकट) क्या जबाब पहूँचाना है ?

वसन्तसेना- प्रतीच्छतु आर्यो मदनिकाम्।

वसन्तसेना- आप मदनिका को स्वीकार करें।(यही जबात है।)

शर्विलक:- भवति ! न खल्ववगच्छामि।

शर्विलक-आर्ये, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ ?

वसन्तसेना- अहमवगच्छामि।

वसन्तसेना- मैं समझा रही हूँ।

शर्विलक:- कथमिव?

शर्विलक- इसका मतलब?

वसन्तसेना- अहमार्यचारूदत्तेन भणिता-'य इममलंकारकं समर्पयिष्यति, तस्य त्वया मदनिका दातव्या।' तत् स एव एतां ददातीति एवमार्येणअवगन्तव्यम्।

वसन्तसेना- चारूदत्त ने मुझसे कहा है-'जेवर पहुँचाने वाले को तुम अपनी मदनिका सौप देना'। इसलिए आप चारूदत्त द्वारा प्रदत्त इस मदनिका को समझें।

शर्विलक:- (स्वगतम्)अये ! विज्ञातोऽहमनया। (प्रकाशम्) साधु आर्यचारूदत्त ! साधु।

शर्विलक-(मन ही मन) तो क्या इसने सब बात जान ली है ? (प्रकट) धन्य हो, आर्य चारूदत्त।

गुणेष्वेव हि कर्त्तव्य: प्रयत्न: पुरूषै: सदा।
गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणै:सम: ।।22।।

अन्वय: - पुरूषै:, सदा, गुणेषु, एव, प्रयत्न:, कर्त्तव्य:, हि, गुणयुक्त:, दरिद्र:, अपि, अगुणै:, ईश्वरै:, सम:, न **।।22।।**

हिन्दी अनुवाद- मनुष्यों को हमेशा अच्छे गुणों को अपनाना चाहिए। क्योंकि गुणी दरिद्र निर्गुण धनी से बढकर होता है **।।22।।**

अपि च-

गुणेषु यत्न: पुरूषेण कार्यो न किञ्चिदप्राप्यतमं गुणानाम्।
गुणप्रकर्षादुडुपेन शम्भोरलङ्घयमुल्लङ्घितमुत्तमाङ्गम् ।।23।।

वसन्तसेना- कोऽत्र प्रवहणिक:?

अन्वय- पुरूषेण, गुणेषु, यत्न: , कार्य:, गुणानाम्, किञ्चिदपि , अप्राप्यतमम्, न, उडुपेन, गगुणप्रकर्षात्, अलङ्घयम्, शम्भो: , उत्तमांगम्, उल्लेङिघतम्।।23।।

हिन्दी अनुवाद- और भी- मनुष्य को हमेशा सद्गुणों के प्रयत्नशील होना चाहिए।क्योंकि गुणवानों

के लिए संसार में कुछ भी दुर्लभ नहीं है। अपने गुण के कारण ही भगवान् शंकर के दुर्लङ्ध्य मस्तक पर चन्द्रमा सुशोभित होता है ।।**23**।।

4.3.2 श्लोक संख्या 24 से 30 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

वसन्तसेना- यहॉ कौन गाडीवान है ?

चेट:- आर्ये ! सज्जं प्रवहणम् ।

(गाडी के साथ प्रवेश कर)

चेट- आर्ये, गाड़ी तैयार है ।

वसन्तसेना- हञ्जे मदनिके ! सुदृष्टां मां कुरू । दत्तऽसि । आरोह प्रवहणम् ! स्मरसि माम्।

वसन्तसेना- अरी ओ मदनिके , जरा ऑख भर देख लेने दो, आज से तो तुम पराई हो गई हो । आओ गाड़ी पर बैठो ।मुझे भूल मत जाना ।

मदनिका- (रूदती) परित्यक्ताऽस्मि आर्याया ।

मदनिका- (रोती हुई) आर्या ने मुझे छोड़ दिया । (ऐसा कहकर वसन्तसेना के पैरों पर गिरतीहै।)

वसन्तसेना- साम्प्रतं त्वमेव वन्दनीया संवृत्ता । तद् गच्छ । आरोह प्रवहणम्। स्मरसि माम्।

वसन्तसेना- अरी, अब तो तुम मेरे लिए पूजनीय हो गई हो । आओ , गाडी पर बैठो । मुझे याद रखना ।

शर्विलक:- स्वस्ति भवत्यै । मदनिके !

सुदृष्ट: क्रियतामेष शिरसा वन्द्यतां जन: ।
यत्र ते दुर्लभं प्राप्तं वधूशब्दावगुण्ठनम् ।।24।।

अन्वय:-एष , जन:, सुदृश्ट:, क्रियताम्, शिरसा, वन्द्यताम् , यत्, दुर्लभम्, वधु , शब्दावगुण्ठनम्, ते, प्राप्तम् ।।**24**।।

हिन्दी अनुवाद-शर्विलक- आपका कल्याण हो। मदनिके-

वसन्तसेना को भर ऑख देख लो और विनय भाव से इन्हें प्रमाण करो। क्योकि इन्हीं की कृपा से वेश्यालय में रहकर भी तुमने 'वधू' का घूँघट पाया है ।।**24**।।

(इति मदनिकया सह प्रवहणमारूह्य गन्तुं प्रवृत्त: ।)

शर्विलक:- (आकर्ण्य) कथं राज्ञा पालकेन प्रियसुहदार्यको मे बद्ध:। कलत्रवांश्चास्मि संवृत्त: । आ:, कष्टम् । अथवा -

द्वयमिदमतीव लोके प्रियं नराणां सुहृच्च वनिता च ।
सम्प्रति तु सुन्दरीणां शतादपि सुहृद्विशिटतम: ।।25।।

अन्वय: - लोके, सुहृद्, वनिता, च , इदम्, द्वयम्, नराणाम्, अतीव, प्रियम्, तु, सम्प्रति , सुन्दरीणाम्, शतात्, अपि, सुहृद्, विशिष्टतम**:** ।।**25**।।

हिन्दी अनुवाद- (इस प्रकार मदनिका के साथ गाड़ी पर चढकर जाने को प्रस्तुत होताहै।) (नेपथ्य मे) यहॉ कौन है? राजपूरूष का आदेश है- 'यह अहीर का बेटा आर्यक राजा होगा' इस प्रकार किसी सिद्धपुरूष के कहने पर डरे हुए राजा पालक ने उसे मड़ई से पकडकर कठोर कारागार में बन्द

कर दिया है।

शर्विलक - (सुनकर) राजा पालक ने मेरे मित्र आर्यक को पकड़ लिया है। इधर मैं स्त्री वाला हो गया हूँ। खेद है-

संसार में मनुष्य को स्त्री और मित्र दो ही प्रिय हैं। किन्तु इस समय सैकड़ों सुन्दरियों की अपेक्षा मित्र बढकर है। **।।25।।**

भवतु, अवतरामि। (इत्यवतरित ।) अच्छा उतरता हूँ। (गाड़ी से उतरता है ।)

मदनिका-एवमेतत्। तत्परं नयतु मामार्यपुत्रः समीपं गुरूजनानाम्।

मदनिका-(ऑखो में ऑसू भरकर , हाथ जोडकर) आपका विचार ठीक है; पर मुझे गुरूजनों से पास पहूँचा दें।

चेट:- अथ किम् ?

चेट- क्यों नहीं।

शर्विलकः- तत्र प्रापय प्रियाम्।

शर्विलक- वहॉं ही इन्हें पहुँचा दो।

चेटः- यदार्य आज्ञापयति।

चेट- आपकी जैसी आज्ञा।

मदनिका- यथा आर्यपुत्रो भणति, अप्रमत्तेन तावदार्यपुत्रेण भवितव्यम्। (इति निष्क्रान्ता ।)

मदनिका- आप जैसा विचार कर रहे हैं , ऐसे काम में आपको भी सावधान रहना चाहिए। (यह कहकर निकल जाती है।)

शर्विलक:- अहमिदानीम् –

ज्ञातीन् विटान् स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान्
राजापमानकुपितांश्व नरेन्द्रभृत्यान्।
उत्तेजयामि सुहृदः परिमोक्षणाय
यौगन्धरायण इवोदयनस्य राज्ञः ।।26।।

अन्वयः -उदयनस्य, राज्ञः, यौगन्धरायणः, इव, सुहृदः, परिमोक्षणाय, ज्ञातीन्, विटान्, स्वभुजविक्रमलब्धवर्णान् राजापमानकुपितान्, नरेन्द्रभृत्यान् च उत्तेजयामि।

हिन्दी अनुवाद- शर्विलक- इस समय मुझे-

जैसे राजा उदयन की रक्षा के लिए यौगन्धरायण ने प्रयास किया था, उसी प्रकार अपने मित्र की रक्षा के लिए प्रयन्तनशील होना है। उसके उद्धार के लिए - धूर्त्तो, राजा के निरादर से क्रुद्ध उनके कुटुम्बियों, सचिवों एवं अपने बाहुबल के लिए विख्यातवीरों को उकसाता **हूँ ।।26।।**

अपि च – प्रियसुहृदमकारणे गृहीतं
रिपुभिरसाधुभिराहितात्मशङ्कैः।
सरभसमभिपत्य मोचयामि -
स्थितमिव राहुमुखे शशाङ्कबिम्बम् ।।27।।

(इति निष्क्रान्त: ।)

अन्वय:- आहितात्मशड्.कै, असाधुभि:, रिपुभि:, अकारणे, गृहीतम्, राहुमुखेस्थितम्, शशाड्.कबिम्बम् , इव, प्रियसुहृदम्, सरभसम्, अभिपत्य, मोचयामि, ।।27।।

हिन्दी अनुवाद- और भी अपने मन की शंका से भयभीत होकर अकारण ही इस दुष्ट ने मेरे मित्र को जेल में डाल दिया है। राहु के मुँह में पड़े चन्द्रमण्डल की तरह अपने मित्र का मैं चलकर उद्धारकरता **हूँ ।।27।।**

(चला जाता है)

चेटी – आर्ये ! दुष्टया वर्द्धसे आर्यचारूदेत्तसय सकाशात् ब्राह्मण आगत:।

चेटी-(मंच पर उपस्थित होकर) आर्ये ! शुभ समाचार है। आर्य चारूदत्त के यहॉ से एक ब्राह्मण आया है ।

वसन्तसेना- अहो ! रमणीयता अद्य दिवसस्य । तत् हञ्जे ! सादरं, बन्धुलेण समं प्रवेशयएनम् ।

वसन्तसेना- आह ! आज मेरा दिन ब ड़ा ही सुखद है। चेटी, बन्धुल के साथ ससम्मान उन्हें भीतर ले आओ ।

चेटी –(इति निष्क्रान्ता ।) यदार्या आज्ञापयति । (विदूषको बन्धुलेन सह प्रविशति ।)

चेटी- जैसे आज्ञा । (कहकर निकल जाती है ।)

(बन्धुल के साथ विदूषक का प्रवेश)

विदूषक: -ही ही भो: !तपश्वरक्लेशविनिर्जितेन राक्षसराजो रावण: पुष्पकेण विमानेन गच्छति; अहं पुनर्ब्रा ह्मणोऽकृततपश्चरणक्लेशोऽपि नरनारीजनेन गच्छामि ।

विदूषक- अरे,आश्चर्य है । राक्षसराज रावण ने उग्रतपस्या कीथी,जिसके फलस्वरूप पुष्पक विमान से घूमा करता था और मैं ब्राह्मण बिना तपस्या किये ही नरनारी रूप विमान से चलता हूँ ।

चेटी- प्रेक्षयामार्य अस्दीयं गेहद्वारम् ।

चेटी- मान्यवर, आप हमारे घर का दरवाजा देखें ।

विदूषक: - (अवलोक्य, सविस्मयम्) अम्मो ! सलिल-सित्त- मज्जिद-किदहरिदोवलेवणस्स, (अहो ! सलिल-सिक्तमार्जित-कृत-हरितोपलेपनस्य, विविध-सुगन्तिकुसुमोपहार-चित्रलिखितभूमि-भागस्य, गगनतलालोकन-कौतूहलदूरोन्नमितशीर्षस्य,दोलायमानावलम्बितैरावण-हस्त-भ्रमायित-मल्लिकादामगुणालड्.कृतसय, समुच्छितदन्तिदन्ततोरणावभासितस्य, महारत्नोपरागोपशोभिना पवनबलान्दोलना-ललच्चञ्चलाग्रहस्तेन 'इत एहि' इति व्याहरतेव मां सौभाग्यपताकानिवहेनोपशोभितस्य, तोरणधरणस्तम्भवेदिका-निक्षिप्तसमुल्लसद्धरित-चूतपल्लामस्फटिकमड्.गलकलशाभिरामो –भयपार्श्वस्य, हमासुर-वक्ष: स्थल-दुर्भेद्य-वज्र-निरन्तरप्रतिबद्ध-कनक-कपाटस्य दुर्गतजन-मनोरथायास्करसय, वसन्तसेनाभवनद्वरस्य सश्रीकता। यत् सत्यं मध्यसथस्यापि जनस्य बलाद् दृपृष्टिमाकारयति ।

विदूषक- (देखकर, आश्वर्य के साथ) पानी छिड़क कर, झाडू लगाकर गोबर से लीप गया है।

अनेक तरह के फूलों के उपहार चढाने के कारण यहॉं की जमीन चित्र की तरह बन गई है। अपना ऊपरी हिस्सारूपी माथा उठाकर मानों आकाश छूने की स्पर्द्धा कर रहा है। इसमें लटकी मल्लिकाकी माला हाथी के सूँड की भ्रान्ति पैदा कर रही है। इसके तोरण हाथी दॉंत के बने हैं। इसमें चन्द्रकान्तमणि जैसे गहँगे रत्न जड़े हैं। हवा के झोके से ये हिल रहे हैं। लगता है, ये हाथ से हमें ही बुला रहे हैं। दोनों ओर तोरण बॉंधने के लिए स्तम्भ शुभसूचक पताकाओं से सुशोभित हैं। हरे-हरे आम के पल्लवों से ये सजे हैं। इन पर स्फटिक पत्थर के बने मांगलिक कलश रक्खे हैं। हिरण्यकशिपु की कठोर छाती की तरह इनमें लोग दिन-रात मेहनत कर रहे हैं। वसन्तसेना के इस दरवाजे की शोभा अपूर्व है। इन्हें देखने के लिए नि:स्पृहों की ऑंखे भी सहसासस्पृह हो जाती हैं।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमं प्रथमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी - आइए , यह पहला कमरा है। इसमें प्रवेश कीजिए।

विदूषक: (प्रविश्यावलोक्य च) ही ही भो: ! इतोऽपि प्रथमे प्रकोष्ठे शशि-शङ्खमृणालसच्छाया:, विनिहितचुर्णमुष्टिपाण्डुरा: विविध-रत्न-प्रतिबद्धकाञ्चन-सोपान-शोभिता:, प्रासादपङ्क्तय:, अवलम्बितमुक्तादामभि: स्फटिकवातायनमुखचन्द्रैर्निध्यायन्तीव उज्जयिनिम्। श्रोत्रिय इव सुखोपविष्टो निद्राति दौवारिक: । सदध्ना क्लमोदनेन प्रलोभिता न भक्षयन्ति वायसा बलिं सुधासवर्णतया। आदिशतु भवति।

विदूषक- (प्रवेश कर और देखकर) पहले प्रकोष्ठ में भी चन्द्रमा, शंख एवं भिसांड की तरह श्वेत चूर्ण से सुशोभित, रत्नजटित सोने की सीढियों से आकर्षक, महलों की कतारें झूलती मोती की मालाओं से तथा स्फटिक से बने झरोखे रूपी मुखचनद्र से मानो उज्जयिनि की शोभा देख रही हैं। दरवाजे पर बैठा द्वारपाल वेदपाठी ब्राह्मण की तरह निश्चिन्त नीद ले रहा है। दही के साथ अगहनी चावल के भात से लुभाये जाने पर भी ये कौवे सुधातुल्य शुभ्र वलि को चूने के भय से नहीं ख रहे हैं। हॉं श्रीमती जी अब आगे की राह बताऍं।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमं द्वितीयं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी – आइये श्रीमान् इस दूसरे कमरे में प्रवेश कीजिये।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि द्वितीये प्रकोष्ठे पर्यन्तोपनीत-यवस-बुस-कवलसुपुष्टास्तैलाभ्यक्तविषाणा बद्धा: प्रवहणबलीवर्दा: ।अयमन्यतर: अवमानित इव कुलीनो दीर्घ नि:श्वसिति सैरिभ:। इतश्व अपनीतयुद्धस्य मल्लस्येव मर्द्यते ग्रीवा मेषस्य। इत इत: अपरेषामश्वानां केशकल्पना क्रियते। अयमपर: पाटच्चर इव दृढबद्धो मन्दूरायां शाखामृग: । इतश्च कूर-च्युत-तैल-मिश्रं पिण्डं हस्ती प्रतिग्राह्यते मात्रपुरूषै: ।आदिशतु भवित।

विदूषक- (प्रवेशकर और देखकर) सामने डाली गई घास और भूसे खाने से तगड़े तेल लगे सींध वाले गाडी के बैल बँधे है। यह एक भैसा, खानदानी अपमानित आदमी की तरह लंबी सॉंसे खीच रहा है।दूसरी ओर लड़कर आये पहलवान की तरह भेड़ो की गर्दन मली जा रही है। इधन घोडों की बाल छॉंटे जा रहे हैं , उधर चोर की तरह वानर को घुड़साल में बॉंधकर रक्खा गया है।

(दूसरी ओर देखकर) इधर तेल टपकते हुए गोल-गोल पिण्डों को महावत हाथी को खिला रहा है। अब श्रीमती आगे की राह बतलाएँ।

चेटी- एदु एदु अज्जो। इमं तइअं पओट्ठंपविसदु अज्जो। एतु एतु आर्य:। इमं तृतीयं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी-आइए, इस तीसरे घर में आप प्रवेश करें।

विदूषक:- ही ही भो:! इतोऽपि तृतीये प्रकोष्ठे तिष्ठति पुसतकम्। एतच्च मणिमय-सारिका-सहितं पाशकपीठम्। इमे च अपरे मदन-सन्धि-विग्रह-चतुरा विविध-वर्णिका-विलिप्त-चित्रफल-काग्रहस्ता इतस्तत: परिभ्रमन्ति गणिका वृद्धविटाश्च। आदिशतु भवती।

विदूषक –(प्रवेशकर और देखकर) अरे आश्चर्य है, भद्र लोगों को बैठने लायक उपस्कर सजाये गये हैं। आधी पढी हुई पुस्तक पाशा खेलने की चौकी पर पड़ी है। पाशाके कोष्ठक भी कीमती पाशे से भरे हैं। एक ओर प्रेम-मिलन एवं प्रणय-कलह कराने में चतुर वश्याएँ एवं दूसरी ओर वृद्ध विट हाथों में अनेक आकर्षक चित्र लिए इधर-उधर घूम रहे हैं। आप आगे की राह बतलायें।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमं चतुर्थ प्रकोष्ठ प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए, यह रहा चौथा प्रकोष्ठ, इसमें आप प्रवेश करें।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि चतुर्थे प्रकोष्ठे युवति- कर – ताडिता जलधरा इव गम्भीरं नदन्ति मृदड़्गा:। क्षीणपुण्या इव गगनात्तरका निपतन्ति कांस्यताला:। मधुकर-विरूत-मधुर वाद्यते वंश:। इयमपरा ईर्श्या- प्रणयकुपितकामिनीव अड़्कारोपिता कररूहपरामर्शेन सार्यते वीणा। इमा अपराश्च कुसुमरसमत्ता एव मधुर्य्य: अतिमधुरं प्रगीता गणिकादारिका: नर्त्यन्ते , नाट्यं पाठयन्ते सश्रृड़गारम्। अपवल्गिता गवाक्षेषु बातं गृह्णन्ति सलिलगर्गर्य: भवती।

विदूषक: - (प्रवेशकर और देखकर) अरे आश्चर्य है , इस घर में युवतियॉ मृदंग बजा रही है। पुण्यक्षीण होने पर आकाश से गिरे तारे की तरह करताल भी बज रहे हैं। भौरों की गुंजार की तरह बांसुरी भी बज रही है। ईर्ष्या के कारण प्रणकुपित युवती की तरह गोद में वीणा को रखकर उसके तारों को साधा जा रहा है। पुष्परस पीकर मदमत्त भौरो की तरह वेश्या-वालिकाओ को अभिनय सिखाये जा रहे है। झरोखे पर रक्खी जलपूर्ण गगरियॉ हवा में ठंडी हो रही है। आगे बढें, श्रीमती जी।

चेटी- एतु एतु आर्य: । इमं पञ्चमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी-यह पॉचवॉ घर है, इसमें प्रवेश करें श्रीमान्।

विदूषक:- ही ही भो: ! इतोऽपि पञ्चमें प्रकोष्ठे अयं दरिद्रजनलोभोत्पादनकरम् आहरति उपचितो हिड़्गुतैलगन्ध: । विविध –सुरभि –धूमोद्गारै: नित्यं सन्ताप्यमानं नि:श्वसितीव महानसं द्वारमुखै:। अधिकमुत्सुकायते मां साध्यमानबहुविध-भक्ष्य-भोजनगन्ध:। अयमपर: पच्चरमिव पेशिं धावति रूपिदारक: । बहुविधाहार-विकारमुपसाधयति सुपकार:। बध्यन्ते मोदका। पच्यन्ते च पूपका: । अपि इदानीमहं वर्द्धितं भुड़्क्ष्व इति पादोदकं लप्स्ये?इह गन्धर्वाप्सरोगणैरिव

विविधालङ्कारशोभितैः गणिकाजनैः बन्धुलैश्च यत्सत्यं स्वर्गायते इदं गेहम्। भोः ! के यूयं बन्धुला नाम?

विदूषक- (भीतर जाकर और देखकर) इस घर में गरीबों को लुभाने वाले पाकशाला से हींग की सुगन्ध आ रही है। ये पाकशाला अपने दरवाजे से धुएँ के साथ अनेक तरह की सुगंध सॉस की तरह बाहर निकाल रहे हैं। अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थो की सुगन्ध मुझे खीच रहे हैं। यह बूचर बालक पुराने वस्त्र की तरह पशु के ऑच को धो रहे हैं। रसोइया अनेक प्रकार के आकर्षक भोजन तैयार कर रहे हैं। कहीं लड्डू बॉधे जा रहे हैं। कहीं पूए बन रहे हैं। (मन ही मन) तो क्या यहॉ पैर धोने के लिए पानी कहीं मिलेगा। (दूसरी ओर देखकर) यहॉ गन्धर्वो एवं अप्सराओं के झुण्डों की तरह अनेक जेवरों वाली अप्सराओं के घूमने से यह घर स्वर्ग की तरह लग रहा है। ये बन्धुल कौन हैं ?

बन्धुलाः -वयं खलु-

परगृहललिताः परान्नपुष्टाः
परपुरूषैर्जनिताः पराङ्गनासु।
परधननिरता गुणेष्ववाच्या
गजकलभा इव बन्धुला ललामः ।।28।।

अन्वयः - परगृहललिताः, परान्नपुष्टाः, परपुरूषैः पराङ्गनासु, जनिताः, परधननिरताः, गुणेषुः अवाच्या , बन्धुलाः, गजकलभाः, इव, ललाम**:, ।।28।।**

हिन्दी अनुवाद- बन्धुल- हम लोक तो-

दूसरों के घरों में सुख से रहने वाले, दूसरों के दाने पर पले हुए, अन्य पुरूषों के द्वारा दूसरों की स्त्रियों में पैदा किए गये, पराये धन को मौज से उड़ाने वाले, गुणहीन हम बन्धुल लोग हाथियों के बच्चों की तरह बिहार करते है **।।28।।**

विदूषकः- आदिशतु भवती।

विदूषक- अब आप आगे की राह दिखलाएँ।

चेटी- एतु एतु आर्यः। इमं षष्ठं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्यः।

चेटी-आइए श्रीमान, अब आप इस छठे घर में प्रवेश करें।

विदूषकः- ही ही भोः इतोऽपि षष्ठे प्रकोशठे अमूनि तावत् सुवर्णरत्नानां कर्मतोरणानि नील – रत्न-विनिक्षिप्तानिइन्द्रायुधस्थानमिव दर्शयन्ति । वैदूर्य-मौक्तिक-प्रवाल-पुष्परागेन्द्रनील-कर्केतरकपद्मराग-मरकतप्रभतीन् रत्नविशेषान् अन्योन्यं विचारयन्ति शिल्पिन। वध्यन्ते जातरूपैर्माणिक्यानि, घटयन्ते सुवर्णालड्कारारक्तमूत्रेण, ग्रथ्यन्ते मोक्तिकाभरणानि, घृष्यन्ते धीरं वैदूर्याणि , छियन्ते शङ्खाः, शाण्यन्ते प्रबालका, शोष्यन्ते आर्द्रकुड्कुमप्रस्तराः सार्य्यते कसतूरिका, विशेषेण घृष्यते चन्दनरसः, संयोज्यन्ते गन्धयुक्तयः, दीयते गणिकाकामुकयोः, सकर्पूरं ताम्बूलम्, अवलोक्यते सकटाक्षम्, प्रवर्त्तते हासः, पीयतेचअनवरतं ससीत्कारं मदिरा। इमे चेटाः, इमाश्चेटिकाः, इमें अपरेअवधीरितपुत्रदारवित्ता मनुष्याः करकासहितपीतमदिरैर्गणिकाजनैर्ये मुक्ता

आसवा: तान् पिबन्ति। आदिशतु भवती।

विदूषक- (भीतर घुसकर और देखकर) अहा, इस छठे कक्ष की छटा भी तो निराली है। मरकतमणिजटित सोने और कीमती पत्थरों से बने ये तोरण इन्द्रधनुष की शोभा से सम्पन्न है। जौहरी लोग आपस में मिलकर हीरे, मोती, मूँगे, मणिक, पन्ना, पुखराज और लहसूनियॉं जैसे रत्नों को परख रहे है। कहीं मणियों को सोने में जड़ा जा रहा है कहीं सोने के आभूषणों   को लाल डोरे में गूँथा जा रहा है, कहीं मोतियों की मालाएँ बनायी जा रही है, कही कस्तूरी इकट्ठी की जा रही है, कहीं चन्दन घिसे उनके प्रेमियों को पान के बीड़े दिये जा रहे है, कही तिरछी निगाहें चल रही हैं,तो कहीं हँसी –मजाक चल रहे है, कही सी-सी करके लोग शराब पी रहे हैं, कही चेट है तो कहीं चेटिकाऐं अपना पुत्र पत्नी और सर्वस्व छोड़करआने वाले लोग वेश्याओं के द्वारा पीकर छोडी गई शराब शिकोरों में पी रहे हैं। अच्छा तो अब चेटीजी आगे की राह दिखलाओ।

चेटी- एतु एतु आर्य: इमं सप्तमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए महाशय, अब इस सातवें कक्ष में प्रवेश कीजिए।

विदूषक:- ही ही भो:! इतोऽपि सप्तमे प्रकोष्ठे। सुश्लिष्ट –विहड्गवादी-सुखनिषण्णानि अन्योन्य-चुम्बनपराणि सुखमनुभवन्तिपारावतमिथुनानि। दधिभक्तपूरितोदरो ब्राह्मण इव सूक्तं पठति पञ्जरशुक:। इयमपरा स्धामिसम्माननालब्धप्रसरा गृहदासी इव अधिकं कुरकुरायते मदनसारिका। अनेक फलरसास्वादप्रतुष्टकण्ठा कुम्भदासीव कूजति परपुष्टा । आलम्बिता नागदन्तेषु पञ्जरपरम्परा: । इतस्ततो विविधमणिचित्रित इवायं सहर्ष नृत्यन् रविकिरण सन्तप्तं पक्षोत्क्षेपैर्विधुवतीव प्रासादं गृहमयूर: । इत: विण्डीकृता इव चन्द्रपादा: एदगतिं शिक्षणणानीव कामिनीनां पश्चात्परिभ्रमन्ति राजहंसमिथुनानि। एतेऽपरे वृद्धमहल्लिका इव इतस्तत: सञ्चरन्ति गृहसारसा:। ही ही भो:! प्रसारणं। कृतं गणिकया नानापक्षिसमूहै:। यत्सत्यं नन्दनवनमिव में गणिकागृहं प्रतिभासते। आदिशतु भवती।

विदूषक – (भीतर जाकर और देखकर) अहा, सातवें कक्ष की छटा भी तो निराली है। कपोतपालिका में ये कबूतर के जोड़े परस्पर एक दूसरे को चूमते हुए सुख का अनुभवकर रहे हैं। दही-भात से संतुश्ट ब्राह्मणों की तरह पिंजरबद्ध ये सुग्गे सूक्तपाठ कर रहें हैं। नायक से समादृत प्रभावशाली गृहदासी की तरह ये मैनाएँ कुर-कुरा रही हैं। अनेक तरह के फलों का आस्वादन लेने के कारण आकर्षक कण्ठवाली कुट्टिनी की तरह ये कोयल कूक रही हैं। खूटियों पर अनेक पिंजरे लटक रहे हैं। कहीं लावक चिडियॉं लड़ाईजारही हैं। तो कहीं तीतर बोल रहें हैं ।कही कबूतरों को उडाकर निर्दिष्ट स्थान पर भेजा जा रहा है तो कहीं गृहपालित मयूर इध-उधर घूम रहे हैं। लगता है सूर्य तप्त किरणों से संतप्त इस महल को अपने मणि चित्रित आकर्षक पंखों को उठाकर हवा झल रहे हैं। (दूसरी ओर देखकर) इकट्ठी की गई बहुत सारी चॉंदनी की तरह अतिश्वेत राजहंसो के जोड़े हंसगमनाओं के पीछे-पीछे चलते हुए ऐसे प्रतीत होते है मानों इनसे ये मन्द गमन की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। घर के बड़े बूढों की तरह ये गृहसारस इधर-उधर घूम रहे हैं। वसन्त सेना

ने सारे घरों को अनेक तरह के पक्षियों से भर डाला है। सच पूछा जाये तो ये वेश्या का घर होते हुए भी मुझे नन्दनवन की तरह प्रतीत हो रहा है। अच्छा तो अब आप आगे की राह दिखलायें।

चेटी- एतु एतु आर्य:। इमम् अष्टमं प्रकोष्ठं प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आइए, अब इस आठवे प्रकोष्ठ में प्रवेश करें।

विदूषक:- भवति ! क एष पट्टप्रावारकप्रावृत अधिकतरसत्यद्भुत्पुनरूक्तालड़्कारालड़्कृत:, अड़्गभड़्गै: परिस्खन्नितस्तत: परिभ्रमति ?

विदूषक- (भीतर जाकर और देखकर) मान्ये, यह कौन है ? देह में रेशमी चादर लपेटे एक ही तरह के कई जेवर पहने, विचित्र वेशभूषा में सजे,देह लचकाकर गिरते-पड़ते घूम रहा है।

चेटी-आर्य ! एष आर्याया भ्राता भवति।

चेटी- मान्यवर, ये आर्या वसन्तसेना के भाई है।

विदूषक:- कियत् तपश्चरणं कृत्वा वसन्तसेनाया भ्राता भवति ।अथवा मा तावत्, यद्यपि एष उज्ज्वल: स्निग्धश्व तथापि श्मशानवीथ्यां जात इव चम्पकवृक्ष: अनभिगमनीयो लोकस्य। भवति ! एषा पुन- का पुष्पप्रावारकप्रावृतोपानद्युगलनिक्षिप्त-तैल-चिक्कणाभ्यां पादाभ्यामुच्चासनोपविष्ठा तिष्ठति ?

विदूषक- कितनी अधिक तपस्या के फलस्वरूप यह वसन्तसेना का भाई बना है। अथवा ऐसी बात नहीं है; सुन्दर, स्निग्ध, कोमल एवं सुगन्धित होने के बावजूद श्मशान की राह में उत्पन्न होने वाले चम्पक वृक्ष की तरह यह संसार के लिए अस्पृश्य है। (दूसरी ओर देखकर)अरे यह कौन है? इसकी सारी देह फैले वस्त्र से ढकी है। जूतो में तैल लगे रहने के कारण इसके दोनों पैर अत्यन्त स्वच्छ एवं कोमल बने है। यह एक ऊँचे आसन पर बैठी है।

चेटी- आर्य एषा खल्वस्माकम् आर्याया माता।

चेटी- मान्यवर, यह आर्या वसन्तसेना की मॉ है।

विदूषक:- अहो ! अपवित्रडाकिन्या उदरविस्तार:। तत् किम् एतां प्रवेश्य महादेवमिव द्वारशोभा इह गृहे निर्मिता ?

विदूषक-अरे, इस कलुष डाकिनी का पेट कितना बड़ा है ? तो क्या इसे घर में घुसाकर भगवान शंकर की तरह स्थापित कर द्वारशोभा बढाई गई है ?

चेटी- हताश ? मैवमुपहस अस्माकं मातरम्। एषा खलु चातुर्थिकेन पीड़यते।

चेटी- अरे ओ निराश, इस तरह हमारी मॉ का मजाक मत उड़ाओ। ये चातुर्थिक ज्वर से पीडि़त है।

विदूषक:- भगवन् चातुर्थिक! एतेनोपचारेण मामपि ब्राह्मणमालोकय।

विदूषक- (परिहास करते हुए) भगवन चातुर्थिक! कृपया इसी उपचारसे मुझ ब्राह्मण की ओर भी ऑख फेरो।

चेटी- हताश ! मरिष्यसि।

चेटी- रे पापी, मरोगे।

विदूषक:- दास्या: पुत्रि ! वरम् ईदृश: शूनपीनजठरो मृत एव।

सीधु-सुरासव-मत्तिआ भोदि सिआल-सहस्स- जत्तिआ।।29 ।।
(सीधुसुरासवमत्ता एतावदवस्थां गता हि माता।
यदि म्रियतेऽत्र माता भवति श्रृगालसहस्रयात्रा ।।)

भवति कि युष्माकं यानपात्राणि वहन्ति?

अन्वय: सीधुसुरासवमत्ता, माता, एतादवस्थाम् , गता, हि। अत्र, माता यदि, म्रियते, श्रगालसहस्रयात्रा भवति।

हिन्दी अनुवाद- कच्ची, पक्की तीनों तरह की शराब पीकर वसन्तसेना की मॉं इस तरह मोटी हो गई है। यदि इस समय मरे तो हजारों सियारों का महाभोज हो जाये ।।**29**।।

अजी, क्या आप लोग , व्यापारिक गाड़ियॉं चलाती हैं ?

चेटी- आर्य! नहि नहि।

चेटी- नहीं श्रीमान्, ऐसी बातें नहीं है।

विदूषक:- किंम वा अत्र पृच्छयते ? युष्माकं खलु प्रेमनिर्मलजले मदनसमुद्रे स्तननितम्बजघनान्येव यानपात्राणि मनोहराणि। एवं वसन्तसेनाया बहुवृत्तान्तम् अष्टप्रकोष्ठं भवनं प्रेक्ष्य, यत् सतयं जानामि; एकस्थमिव त्रिविष्टपं दृष्टम्। प्रशंसिकतुं नास्ति मे वाचाविभव:। किं तावत् गणिकागृहम्? अथवा कुवेरभवनपरिच्छेद: ? इति कस्मिन् युष्माकमार्या ?

विदूषक – अरे, इन गाड़ियों के बारे में क्या पूछना है? कामदेव रूपी सागर के निर्मल जल के कुच, नितम्ब और जंघा ही आप सबों की गाड़ियॉं है। अनेक तरह के पशु –पक्षी और मानवों से भरे आठ कमरे वाले वसन्तसेना के महल को देखकर मुझे तो विश्वास हो गया कि एक ही जगह स्थित स्वर्ग्य, मर्त्य और पाताल लोकमय त्रिभुवन को ही मैंने देख लियाहै। इस महल की प्रशंसा करनेकी शक्ति मेरी वाणी में नहींहै। मैं यह निश्चय ही नहीं कर पाता हूँ । अच्छा तो आपकी आर्या,वसन्तसेना कहॉं है ?

चेटी-आर्य? एषा वृक्षवाटिकायं तिष्ठति। तत् प्रविशतु आर्य:।

चेटी- आर्य, मान्या वसन्तसेनाइस उद्यान में बैठी हैं। आप इधर आयें।

विदूषक:- ही ही भो: ! अहो वृक्षवाटिकाया: सश्रीकता । अच्छरीतिकुसुमप्रस्तारा:, रोपिता अनेकपादपा:, निरन्तर-पाद पतल-निर्मिता युवति-जन-जघनप्रमाणा पट्टदोला, सुवर्णयूथिका – शेफालिका-मालती-मल्लिका- नवमल्लिका-कुरबकातिमुक्तक-प्रभृतिकुसुमै: स्वयं निपतितैर्यत्सत्यं लघुकरोतीव नन्दनवनस्य सश्रीकताम्। इतश्व उदयत्सूर-समप्रभै: कमलरक्तोत्पलै: सन्ध्यायते इव दीर्घिका।

विदूषक:- (भीतर जाकर और देखकर) अहा, इस उद्यान की छटा ही निराली है। स्वच्छ एवं विकासोन्मुख फूलों की कतारें लगी हैं। अनेक तरह के पेड़ लगाये गये हैं। युवतियों की कमर की ऊँचाई के अनुसार डाल में रस्सी डालकर झूले डाले गये हैं। सोनजूही ,हरसिंगार, , मालती, बेला, चमेली,सदाबहार या कटसरैया एवं माधवी-लता के फूलों की बहार, सचमुच नन्दनवन की शोभा को ठुकरा रही है। (दूसरी ओर देखकर) अहा,उगते हुए सूरज की तरह लाल-लाल फूलों से

भरे सरोवर की शोभा तो सन्ध्या की तरह हो रही है।

अपि च

एसो असोअबुच्छो णवणिग्गम-कुसुम-पल्लवो भादि।
सुभडो व्व समरमज्झे घण –लोहिद-पंक-चच्चिक्को ।।30।।
एषोऽशोकवृक्षो नवनिर्गतकुसुमपल्लवो भाति।
सुभट इव समरमध्ये घनलोहितपङ्कचर्चितः ।।

भवतु, तत् कस्मिन् युष्माकमायार् ?

चेटी-आर्य ! अवनमयदृष्टिम्, प्रेक्षस्व आर्याम्।

विदूषकः- (दृष्ट्वा, उपसृत्य) सोत्थि भोदिए। (स्वस्ति भवत्यै)

वसन्तसेना- (संस्कृतमाश्रित्य) अये ! मैत्रेयः। (उत्थाय) स्वागतम्। इदमासनम्, अत्रौपविश्यताम् ।

और भी - रणाङ्गन में सघनरक्तपङ्क से लिप्त योद्धा की तरह नये निकले फूल पत्तियों वाला यह अशोक का पेड़ सुशोभित हो रहा है।।30।।

अच्छा तो आपकी आर्या वसन्तसेना कहॉं हैं ?

4.3.3 श्लोक संख्या 31 से 32 तक मूल पाठ अर्थ व्याख्या

चेटी- आर्य, जरा अपनी निगाह तो नीचे कीजिए, आर्या को देखिए ।

विदूषक - (देखकर और पास जाकर) आपका कल्याण हो ।

वसन्तसेना- अरे, मैत्रेय हैं।(उठकर) स्वागत हो , यह रहा आसन यहॉं विराजिए ।

विदूषकः- उपविशतु भवति ।

विदूषक- आप भी बैठिए । (दोनों बैठते है ।)

वसन्तसेनाः- अपि कुशलं सार्थवाहपुत्रस्य ?

वसन्तसेना- आर्य चारूदत्त तो सकुशल हैं ?

विदूषकः- भवति ! कुशलम् ।

विदूषक- हॉं, श्रीमति, वे सकुशल हैं ।

वसन्तसेना- आर्य मैत्रेय ! अपीदानीम्-

वसन्तसेना- आर्य मैत्रेय, क्या इस समय-

गुणप्रवालं विनयप्रशाखं विस्रम्भमूलं महनीयपुष्पम ।
तं साधुवृक्षं स्वगुणैः फलाढ्यं सुहृद्विहङ्गाः सुखमाश्रयन्ति ।।31।।

अन्वयः- गुणप्रवालम् , विनयप्रशाखम्, विश्वम्भमूलम्, महनीयपुष्पम्, स्वगुणैः, फलाढयम्, तम्, साधुवृक्षम्, सुहृद्विहङ्गाः, सुखम्, आश्रयन्ति।

हिन्दी अनुवाद- जिनके गुण ही कोपल हैं, विनम्रता ही डाली है, विश्वास ही जड़ है, महानता ही फूल हैं, ऐसे अपने गुणों द्वारा फलपरिपूर्ण उस सज्जन चारूदत्त रूपी पेड़ पर मित्र रूपी पक्षी सुखपूर्वक निवास करते हैं ।।31।।

विदूषकः- सुष्ठु उपलक्षितं दुष्टविलासिन्या । अथ किम् ?

विदूषक- (मन ही मन) इस दुष्ट वेश्या ने ठीक ही अनुमान किया है (प्रकट) और क्या?

वसन्तसेना- अये ? किमागमनप्रयोजनम् ?

वसन्तसेना- अच्छा, तो श्रीमान् के यहाँ आने का कारण क्या हैं ?

विदूषक:- श्रृणोतु भवती। तत्रभवान् चारूदत्त: शीर्षे अञ्जलिं कृत्वा भवतीं विज्ञापयति।

विदूषक- तो सुनिए, समादरणीय आर्य चारूदत्त ने हाथ जोड़कर आपसे निवेदन किया है।

वसन्तसेना- (अञ्जलिं बद्ध्वा) किमाज्ञायति ?

वसन्तसेना- (हाथ जोड़कर) आर्य की आज्ञा क्या हैं?

विदूषक:- मया तत् सुवर्णभाण्डं विस्रम्भादात्मीयमिति कृत्वा द्यूते हारितम्। स च सभिको राजवार्ताहारी न ज्ञायते कुत्र गत इति।

विदूषक- आपने जो उनके पास आभूषणों का बक्सा धरोहर के रूप में हार गये। इसी बीच जुए का सभाध्यक्ष वह राजदूत पता नहीं कहाँ चला गया।

चेटी- आर्ये ! दिष्टया वर्द्धसे। आर्यो द्युतकर: संवृत्त:।

चेटी- आर्ये, भाग्य से ही बढ़ रही हो, लो, आर्य चारूदत्त जुआड़ी हो गये।

वसन्तसेना- कथं चौरेणापहृतमपि शौण्डरतया द्यूते हारितमिति भणति। भणति। अत एव काम्यते।

वसन्तसेना – (मन में ही) चोर ने जिन आभूषणों को चुरा लिया, अपनी उदारता के कारण वे कहते हैं- उन्हें मैं जुए में हार गया। इसी लिए मैं उन्हें इतना चाहती हूँ।

विदूषक:- तत् तस्य कारणात् गृह्णातु भवती इमां रत्नावलीम्।

विदूषक:- तो फिर, उसके बदले आप इस रत्नमाला को स्वीकार करें।

विदूषक:- किमन्यत् तस्मिन् गत्वा ग्रहीष्यति। भवति ! भणामि, निवर्त्तातामसमाद् णिकाप्रसङ्गात् इति।

विदूषक- तो क्या आप यह रत्नहार स्वीकार नहीं कर रही हैं ?

वसन्तसेना- हञ्जे ! गेण्ह एदं अलङ्कारम्, चायदत्तमभिरन्तुं गच्छाम:।

वसन्तसेना- चेटी , इस रत्नावली को रक्खो। हमलोग चारूदत्त के साथ रमण करने चलती हैं।

चेटी - आर्ये ! प्रेक्षस्य, प्रेक्षस्व। उन्नमति अकालदुर्द्दिनम्।

चेटी- आर्ये, देखिये। बिना समय के उमड़ते हुए बादलों को।

वसन्तसेना- उदयन्तु नाम मेघा: भवतु निशा वर्षमविरतं पततु।
गणयामि नैव सर्वं दयिताभिमुखेन हृदयेन ।।32।।

हञ्जे ! हारं गृहीत्वा लघु आगच्छ। इति निष्क्रान्ता: सर्वे।

अन्वय:- मेघा:, उदयन्तु, नाम, निशा, भवतु अविरंतम्, पततु, दयिताभिमुखेन, हृदयेन, सर्वम्, नैव, गणयामि।

हिन्दी अनुवाद- वसन्तसेना – बादल उठें (घिर आयें), रात हो जाये , घनघोर वर्षा आ जाये, फिर भी हृदय से प्रियतम की ओर अभिमुख मैं इन सबकी परवाह नहीं करती हूँ।

चेटी! हार लेकर शीध्र आओ।

(सब चले जाते है।) इति मदनिका-शर्विलकको नाम चतुर्थोऽङ्क: समाप्त:। चतुर्थ अंक समाप्त हुआ।

अभ्यास प्रश्न-

निम्नलिखित में सही उत्तर चुनकर लिखिये।

1. व्यवहारिक क्षेत्रों में पुरूषो की अपेक्षा कौन चतुर है।
   (क) मदनिका
   (ख)वसन्तसेना
   (ग) स्त्रियां
   (घ) कोई नहीं
2. कौन ऐसा धुर्त है जिसका राजा भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता।
   (क) मदनिका
   (ख)वसन्तसेना
   (ग) शर्विलक
   (घ) चेटी
3. किससे कभी गर्मी नहीं होती।
   (क) प्रकृति
   (ख) सूर्य
   (ग) चन्द्रमा
   (घ) कोई नहीं
4. वेश्यालय में रह कर भी वधू का घूंघट किसने पाया।
   (क) मदनिका
   (ख)वसन्तसेना
   (ग) शर्विलक
   (घ) कोई नहीं
5. उग्र तपस्या किसने की थी।
   (क) मदनिका
   (ख)वसन्तसेना
   (ग) शर्विलक
   (घ) रावण
6. खानदानी अपमानित आदमी की तरह लम्बी सांसे कौन खींचता है।
   (क) शर्विलक
   (ख)वसन्तसेना

(ग) मदनिका

(घ) भैंसा

7. वसन्तसेना की मॉं कितनेप्रकार की शराब पीती है।

(क) एक प्रकार

(ख) तीन प्रकार

(ग) चार प्रकार

(घ) कोई नहीं

4.4 सारांश:-

इस इकाई के अध्ययन से आपको पता चला कि यदि घर कमजोर और जर्जर तो धन की रक्षा करना कठिन होता है । वेश्याये भी विवाहिता पत्नी की भाँति सलाह दे सकती है । वसन्तसेना की कृपा से मदनिका ने वेश्यालय में रहकर भी वधू जैसा रहन –सहन पाया । संसार में मनुष्य को स्त्री और मित्र दोनों प्रिय होते है किन्तु सुन्दरीयों की अपेक्षा मित्र अधिक प्रिय है यह कथन शर्विलक का है। राक्षस राज रावण ने घोर तप किया था । और उसीके परिणामस्वरूप वह पुष्पक विमान से घूमता था किन्तु मैं ब्राह्मण होकर भी बिना तपस्या के नर नारी रूपी विमान से चलता हूँ । यह कथन विदूषक का था । दूसरों के घरों में सुख से रहने वाले, दूसरों के दाने पर पले हुए, अन्य पुरूषों के द्वारा दूसरों की स्त्रियों में पैदा किए गये, पराये धन को मौज से उड़ाने वाले, गुणहीन हम बन्धुल लोग हाथियों के बच्चों की तरह बिहार करते है यह कथन बन्दुल का है । कच्ची, पक्की तीनों तरह की शराब पीकर वसन्तसेना की मॉं इस तरह मोटी हो गई है । यदि इस समय मरे तो हजारों सियारों का महाभोज हो जाये यह कथन विदूषक का परिहासपूर्ण है किन्तु वसन्तसेना के कथनों में कुछ उतकृष्टताये भी हैं । जैसे-जिनके गुण ही कोपल हैं, विनम्रता ही डाली है, विश्वास ही जड़ है, महानता ही फूल हैं, ऐसे अपने गुणों द्वारा फलपरिपूर्ण उस सज्जन चारूदत्त रूपी पेड़ पर मित्र रूपी पक्षी सुखपूर्वक निवास करते हैं। इस प्रकार इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप अनेक कथनों के द्वारा न केवल अर्थपदार्थ को जानेगें बल्कि जीवन बोध से भी परिचित होगें ।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली:-

ग्रीष्मसन्तप्त:	-	निदाघपीडित:,
अजानता	-	अनभिज्ञेन,
निसर्गात्	-	स्वभावत्, पुंसाम्,
पाण्डित्यम्	-	प्रवीणत्वम्,
असौ	-	चारूदत्त:,
राजकुले	-	न्यायालये,
अभुजिष्यया इव	-	स्वामिनी इव,

परित्यक्ताऽस्मि	-	उत्सर्गिताऽसिम

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर:-

1.**(ग) स्त्रियां**

2.**(ग) शर्विलक**

3. **(ग) चन्द्रमा**

4. (क) **मदनिका**

5.**(घ) रावण**

6.(घ) भैंसा

7. **(ख)तीन प्रकार**

4.7 संदर्भग्रन्थ:-

1. डॉ0 कपिल देव द्विवेदी कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी
2. डॉ0 उमेश चन्द्र पाण्डेय कृत मृच्छकटिक की हिन्दी व्याख्या चौखम्भा प्रकाशन वाराणसी।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न:-

1. श्लोक संख्या 24 और 25 का संन्दर्भ प्रसंग सहित तात्पर्य लिखिये ?
2. श्लोक संख्या 28 का तात्पर्य बताते हुए उकसे पश्चात के प्रमुख सम्वादों का उल्लेख कीजिए?